बुन्देली के महाकवि

ईसुरी

डॉ. मोहन `आनंद'

बुन्देली के महाकवि

ईसुरी

डॉ. मोहन `आनंद´

प्रधान सम्पादक
रेनू तिवारी

सम्पादक
अशोक मिश्र

आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद् भोपाल का प्रकाशन

प्रकाशक – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्
मध्यप्रदेश जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002
फोन – 0755–2661948, 2661640
E-mail : mplokkala@rediffmail.com
mptribalmuseum@gmail.com
web. : www.mptribalmuseum.com

प्रकाशन वर्ष – वर्ष 2015 प्रथम संस्करण

स्वत्वाधिकार – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्

मुद्रण – मध्यप्रदेश माध्यम, भोपाल

मूल्य – 300/– रुपये (तीन सौ केवल)

■ पुस्तक से सम्बन्धित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्य क्षेत्र भोपाल होगा।

■ पुस्तक में प्रकाशित समस्त सामग्री लेखक की है, आवश्यक नहीं कि प्रकाशक इससे सहमत हों।

ISBN - 978-93-83899-07-4

बुन्देली के महाकवि ईसुरी और उनकी फागों की लोकव्याप्ति पूरे बुन्देली जनपद में तो है ही, बोलियों में भी अनेक अवसरों पर उनकी रची फागें गायी और कही-सुनी जाती हैं। ईसुरी और उनकी छाप से गायी जाने वाली रचनाओं में जहाँ बुन्देली के जीवन-आचरण की झलक का अनुभव किया जा सकता है, वहीं उच्चतर ग्रामीण जीवन-मूल्य को भी अनुभूत किया जा सकता है। अकादमी ने ईसुरी और उनकी रचना के संकलन, पाठ सम्पादन और पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य पहले भी किया है।

ईसुरी की फाग रचनाओं में जीवन-बोध की समग्रता का अनुभव किया जा सकता है। फाग रचनाओं में सामाजिक रीतियों-नीतियों, श्रृँगार और भक्ति के विविध पक्षों को लोक प्रतीकों से आसानी से व्यक्त किया गया है, जिनकी अर्थ सामर्थ्य एवं पैनापन बड़ा ही तीक्ष्ण है।

अकादमी के अनुरोध पर डॉ. मोहन 'आंनद' ने बुन्देली के शीर्ष कवि ईसुरी के जीवन और उनकी रचनाओं का संकलन और अनुवाद कार्य किया है। अकादमी इनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती है। आशा है ईसुरी एवं फाग साहित्य में उत्सुक पाठकों को यह रूचिकर लगेगा।

- अशोक मिश्र

मन्तव्य

बुन्देलखण्ड शौर्य भूमि होने के साथ–साथ साहित्य, संस्कृति और धार्मिक भावनाओं से संपृक्त धरा है। इसके गौरव गान,इसके महावीरों की विरदावलियाँ तथा साहित्यकारों के द्वारा सृजित ग्रंथों से इस पावन भूमि की कीर्ति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस पावन धरा पर वनवास काल में रहकर श्रीराम ने अपनी लीलाएँ कीं। वैकुण्ठ के समान सुन्दर, स्वच्छ एवं सम्पन्न भूमि पर वेदों के वर्गीकरण एवं पुराणों महाभारत, गीता, श्रीरामचरित् मानस जैसे महान ग्रथों का सृजन हुआ है।

महर्षि वेदव्यास, गोस्वामी तुलसीदास, महाकवि केशव, जगनिक जैसे मनीषियों ने जहाँ जन्म लिया तथा अपनी कलम शक्ति से इस भूमि की कीर्ति में चार चाँद लगाए।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र का अपना अलग अस्तित्व इसकी लोकभाषा बुन्देली के माधुर्य से और अधिक बढ़ जाता है। बुन्देलखण्ड की लोकभाषा में ईसुरी, गंगाधर व्यास, ख्यालीराम जैसे बहुत ही प्रतिभाशाली लोककवि हुए हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से इस क्षेत्र के साहित्य को जन–जन की वाणी बनाया तथा इसकी संस्कृति और सभ्यता से सम्पूर्ण राष्ट्र को परिचित कराया ।

बुन्देली आल्हा जिस तरह अपने किस्म का अलग ही शौर्य गाथाओं का प्रसिद्ध साहित्य है, उसी तरह बुन्देली फागों का भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। बुन्देलखण्ड में फागों के गाने और सुनने का बहुत पुराना रिवाज है। फागों की फड़बाजी तथा जवाबी फाग प्रतियोगिता यहाँ के लोगों की सबसे बड़ी पसंद है।

मैं जब बुन्देलखण्ड के इतिहास, साहित्य, संस्कृति और स्थापत्य के लेखन के उद्देश्य से बुन्देलखण्ड का भ्रमण कर लोगों से चर्चाएँ कर रहा था, उन दिनों बुन्देली साहित्य में फागों तथा फगुवारों के प्रति लोगों की तरह–तरह की प्रतिक्रियाएँ मिलीं।

जिस तरह श्रीरामचरित् मानस के दोहा, चौपाई लोग बात–बात पर उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत कर अपने कथनों की पुष्टि किया करते हैं, बुन्देली ग्रामीण जन जीवन उसी तरह ईसुरी की फागों का प्रयोग करते हैं।

'बुन्देली फाग साहित्य तथा फगुवारों के संबंध में मेरी उत्सुकता बढ़ी और मैंने बुन्देली चौकड़िया फाग के जनक महाकवि ईसुरी के सम्बन्ध में जानकारियाँ एकत्र करने का मन बनाया। मेरे पूर्वज स्वयं प्रसिद्ध फगुवारे रहे हैं। मैंने ईसुरी की फागों तथा उनकी जीवनी के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने में इनकी सहायता ली। बहुत सारी जानकारियाँ इन सभी से मिल गई थीं, किन्तु वे उतनी पर्याप्त नहीं थी, जितनी मुझे आवश्यकता महसूस हो रही थी। मेरी प्रारंभिक शिक्षा नौगाँव में हुई। ईसुरी के जन्म स्थान एवं कर्मक्षेत्र के ग्राम जैसे धौर्रा, ठठेवरा, बगौरा, सभी नौगाँव के पास के गाँव हैं। ईसुरी की पुत्रियाँ मउआबांद, लुगासी, ढिलापुर तथा धबार में ब्याही थी। पत्नी सीगौन की थीं। मैं इन ग्रामों के कई व्यक्तियों से परचित था। मेरे नजदीकी रिश्तेदार इन गाँवों में रहते हैं।

ईसुरी के सम्बन्ध में उत्पन्न जिज्ञासा ने मुझे इन ग्रामों में भ्रमण करने, लोगों से जानकारियाँ प्राप्त करने तथा उनकी फागों को एकत्र करने की लगन पैदा की। मैं इस कार्य में बड़ी लगन के साथ लगा रहा। यह कार्य आसान भी नहीं था, क्योंकि ईसुरी की फागों के विषय में तरह–तरह की भावनाएँ बुन्देली जनजीवन में व्याप्त हैं। जहाँ लोग ईसुरी को लोकभाषा का महाकवि कहते हैं, वहीं कुछ लोग उन्हें अश्लील साहित्यकार भी। ऐसे में मेरा सफर उलझनों भरा अवश्य था किन्तु था रोचक। मैंने फागों के प्रेमियों से सम्पर्क, पूछताछ का क्रम लगभग 12 वर्षों तक जारी रखा।

ईसुरी का साहित्य जितना कुछ प्रकाशित मिला, वह पूर्ण या समग्र नहीं कहा जा सकता। मैंने फाग प्रेमियों से अलिखित, अप्रकाशित फागों को एकत्र किया। कुछ साहित्यकारों ने फाग साहित्य और प्रसिद्ध फगुवारों के जीवन व्रत पर काफी सराहनीय कार्य किए हैं, जिनमें श्याम सुन्दर बादल का बुन्देली फाग साहित्य, मैत्रीयी पुष्पा का 'कही ईसुरी फाग, छत्तरपुर से प्रकाशित पत्रिका मामुलिया, कृष्णानन्द गुप्त का 'ईसुरी की फाग', लोकवार्ता परिषद टीकमगढ़ तथा गौरीशंकर द्विवेदी का ईसुरी प्रकाश, उमाशंकर शुक्ल की 'बुन्देलखण्ड के लोक गीत' आदि कृतियो में ईसुरी और उनकी फागों के सम्बंध में जानकारियाँ मिलीं, किन्तु सबसे ज्यादा जानकारियाँ ग्रामीण जनों से प्राप्त हुईं, जिसके आधार पर इस कृति को रूप दे पाया ।

बुन्देली हर किसी के समझ में आ पाना आसान नहीं है। ईसुरी द्वारा ऐसे शब्दों,शब्द समूहों का प्रयोग अपनी फागों में किया है, जिन्हें आम हिन्दीभाषी समझ नहीं पायेगा। इस समस्या को बहुत हद तक सुलझाने की दृष्टि से कुछ बुन्देली शब्दों के हिन्दी मायने परिशिष्ट अ एवं ब पर देने का प्रयास किया है, जो पाठकों को बहुत उपयोगी साबित होंगे।

मेरे साथी सन्तोष सोनकर, सैयद अख्तर अली, डा.कृष्ण शंकर सोनाने तथा मेरे बड़े भाई श्री बाबूलाल तिवारी, श्री भागीरथ तिवारी के सहयोग नींव का पत्थर बने, जिन्हें धन्यवाद देने के लिए शब्द संयोजन करना कठिन है। जितना संभव हो सका ईसुरी और ईसुरी के फाग साहित्य के सम्बंध में यह मेरा खोजी प्रयास सफल हुआ ये तो आप पाठक ही जानें, किन्तु मैं स्वयं बहुत रोमांचित हूँ तथा लालायित हूँ आपकी प्रतिक्रियाओं के लिए।

सधन्यवाद।

डॉ. मोहन 'आनंद'

कथोपकथन

किसी देश की कला,संस्कृति एवं परम्पराओं को जानने के लिए उस देश की भाषा और बोली का जानना अत्यावश्यक है। खासतौर पर उस देश की आंचलिक भाषाओं और बोलियों का ज्यादा महत्त्व है। आंचलिक क्षेत्रों में प्रचलित कई बोलियों और भाषाओं का हमारा देश विविधता लिए हुए है। इन विविधताओं के कारण ही हमारा देश सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक एकता से बंधा हुआ है। यही एकता देश की अखण्डता का संकेत है। एकता के सूत्र में बंधकर ही देश की सांस्कृतिक विरासत आज विखण्डित रूप में विराजमान है।

सांस्कृतिक विरासत के रूप में हमारे साहित्यिक रचनाकारों ने विविध भाषाओं के बावजूद विराट साहित्यिक धरोहर हमारे लिए संरक्षित की है। इन साहित्यकारों में कुछ ऐसे है,जिनकी रचनाएँ कहीं भी लिखित रूप में देखने को नहीं मिलती, किन्तु जनमानस में घुलमिल कर अमर हो चुकी हैं। वैदिक समय में भी यही रहा है और वैदिक रचनाएँ गुरू–शिष्य परम्परा के चलते मौखिक ही चलती रही हैं। जैसे–जैसे मौखिक परम्पराएक्र समाप्त होने लगीं, ये रचनाएँ भोजपत्र पर लिपिबद्ध की जाती रहीं और आज इक्कीसवीं सदी में प्रिंट मिडिया के कारण वह वृहदाकार में उपलब्ध हो रही हैं। यही स्थिति भाषाओं और बोलियों को लेकर साहित्यकारों की भी रही है। इन्हीं साहित्यकारों में बुन्देली भाषा और बोली के अमर कवि ईसुरी के बारे में कहा जाता है।

लोक भाषा के महाकवि ईसुरी की कविताएँ लोकाचार में लिपिबद्ध रूप में प्रचलन में नहीं हैं, किन्तु लोकाचार में मौखिक रूप में जनमानस में छाई हुई हैं। आज के प्रिंट मीडिया के बावजूद भी ईसुरी की रचनाएँ देखने–पढ़ने को नहीं मिल रही हैं। डॉ.मोहन आनन्द ने यह प्रयास किया कि ईसुरी की जनमानस में प्रचलित रचनाओं को एक स्थान पर संकलित कर एकत्र किया और उन पर समीक्षात्मक एवं विवेचनात्मक रूप में एक प्रकार का शोध कार्य सम्पन्न किया। मैं इसे शोध कार्य की तरह इसलिए देख रहा हूँ कि महाकवि ईसुरी ने उनकी रचनाओं को कहीं भी लिपिबद्ध नहीं किया और न ही

उनका प्रसार–प्रचार किया, बल्कि उनके सम्पर्क में आने वाले लोगों ने ही उनकी रचनाओं को कण्ठग्र कर उनका प्रचार किया है। कारण यह रहा कि महाकवि की रचनाएँ लोकभाषा में फाग के रूप में होने के कारण सहज और सरल हैं और जीवन के प्रत्येक सुख–दुःख और संवेदनाओं से परिपूर्ण रही हैं। बच्चे के पैदा होने से लेकर विवाह आदि तक की परम्पराओं को महाकवि ईसुरी ने फाग के माध्यम से कहा है। लोकभाषा के दो कवियों को लेकर उनकी तुलना करने का मेरा साहस नहीं है, किन्तु यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि लोकभाषा के कवि नज़ीर अकबराबादी ने भी जनमानस में परम्पराओं को लेकर अनेक रचनाएँ की हैं। नज़ीर की रचनाएँ भी आमतौर पर देखने को नहीं मिलती। हाँ, यह अलग बात है कि दोनों महाकवियों के भाषा और बोली पृथक–पृथक रही हैं। लोकभाषा के जनप्रचलित कवि की अलुप्त रचनाओं को खोजकर प्रमाणिक तौर पर आम जनता या पाठकों तक पहुँचाना साहस का ही कार्य है।

यह एक प्रकार का जोखिम भी है। वह ऐसे कि कहा नहीं जा सकता कि जो फाग या रचना प्रस्तुत की जा रही है वह उनकी है भी या नहीं। किसी भी प्रकार की भूल के लिए शोधकर्ता को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, किन्तु डॉ. मोहन आनन्द ने यह जोखिम उठाया और सतत् प्रयास के बाद महाकवि ईसुरी की जीवनी सहित उनकी फागों का विस्तृत लेखा–जोखा इस पुस्तक में समाहित करने का प्रयास किया। इसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

डॉ. मोहन आनंद स्वयं बुदेली भाषा के जानकार हैं। इतना ही नहीं उन्होंने कई वर्षों तक बुदेलखण्ड क्षेत्र में यात्राएँ कर आंचलिक क्षेत्रों से महाकवि ईसुरी के साहित्य की जानकारियाँ हासिल की और उनके साहित्य का अध्ययन कर नये स्वरूप के साथ समीक्षा सहित महाकवि ईसुरी के साहित्यिक अवदान की विस्तृत विवरण सहित विवेचना की है। वे इस अभियान में सफल दिख रहे हैं। उनका यह प्रयास प्रसंशनीय है। मैं उनकी मेहनत, लगन और साहित्यिक निष्ठा को प्रणाम करता हुआ सफलता की कामना करता हूँ।

कृष्णशंकर सोनाने

महाकवि ईसुरी

बुन्देली महाकवि ईसुरी और उनके जीवनवृत्त तथा साहित्यिक अवदान पर चर्चा करने के पूर्व बुन्देलखण्ड की प्राथमिक जानकारियों से पाठकों को परिचित होना आवश्यक है। इसी उद्देश्य से बुन्देलखण्ड का प्राथमिक परिचय देना उचित समझ रहा हूँ। बुन्देलखण्ड भौगोलिक और जनपदीय सांस्कृतिक क्षेत्र के रूप में वृहद एवं व्यापक है। बुन्देलखण्ड की सीमा रेखा और साहित्यिक अवदान पर साहित्यकारों के विविध मत हैं।

बुन्देलखण्ड भारत का हृदय स्थल है। जहाँ इसे वीरभूमि कहलाने का गौरव प्राप्त है, वहीं इस भूमि को कलमवीरों की साहित्यिक साधना धरा कहा जाता है। यह वह धरा है जहाँ पुराणों महाभारत, गीता, श्री रामचरितमानस जैसे ग्रंथों के सृजन कर्ताओं ने जन्म लिया। संस्कृत और हिन्दी के महान कवियों एवं लेखकों ने इस पावन भूमि को अपनी साधना का केन्द्र बनाया। इस अलौकिक सौन्दर्यमयी, कमनीय वसुन्धरा पर वाल्मीकि, श्रीकृष्ण द्वैपायन महर्षि वेदव्यास; भवभूति, जगनिक, तुलसी, छत्रसाल, वीरबल, रहीम, केशव, बिहारी, मतिराम, पद्माकर, ईसुरी, मुंशी अजमेरी, सुभद्रा कुमारी चौहान, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, सियाशरण गुप्त, डॉ. रामकुमार वर्मा, वियोगी हरि, डॉ.राम विलास शर्मा, वृन्दावन लाल वर्मा, घासीराम व्यास, कवीन्द्र नाथूराम माहौर, बिहारी लाल भट्ट, रसरंग, घनश्याम दास पाण्डे, नरोत्तम पाण्डे, लाला भगवानदीन 'दीन', बालेन्दु जी, रामचरण हयारण 'मित्र', पंडित गंगाधर व्यास, ख़्यालीराम, खेतसिंह आदि... आदि.. कवियों–साहित्यकारों ने जन्म लिया और अपने साहित्य से इस धरा के गौरव को बढ़ाया।

बुन्देलखण्ड धरा का सौभाग्य है,जहाँ श्री रामचन्द्र ने अपनी भार्या सीता एवं अनुज लक्ष्मण के साथ वनवास के दिन बिताए तथा पाण्डवों ने अपने वनवास का अधिकांश समय काटा। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि अब्दुल रहीम खानखाना ने भी बुन्देलखण्ड पर अपने भाव व्यक्त करते हुए कहा –

चित्रकूट में रम रहे, रहिमन अवध नरेश।
जापर विपदा परत है सो आवत यह देश।

बुन्देलखण्ड वह धरा है जहाँ ऋषि पराशर ने पारासन ग्राम में कलौ वेत्रवती गंगा के तट पर 'विष्णु पुराण' नामक प्रथम पुराण की रचना की थी, इन्हीं के पुत्र श्री कृष्ण द्वैपायन ''महर्षि वेदव्यास' ने पाँचवा वेद कहे जाने वाले ग्रंथ 'महाभारत' की रचना की।

बुन्देलखण्ड में अनेक कला साधक कवियों ने जन्म लिया तथा अपनी अलौकिक काव्य साधना से हिन्दी साहित्य को परिपूरित किया। बुन्देलखण्ड सीमा रेखा के सम्बन्ध में प्रचलित है–

इत जमुना इत नर्मदा, इत चम्बल इत टोंस।

अर्थात् उत्तर में यमुना नदी, दक्षिण में नर्मदा, पूर्व में टौंस तथा पश्चिम में चम्बल नदियाँ इसकी सीमा रेखा बनाती हैं। इसकी सीमा के सम्बन्ध में इतिहासकारों के भी अलग–अलग मत हैं। इतिहासवेत्ता श्री बी.ए.स्मिथ ने लिखा है कि जिस क्षेत्र में चंदेल शासकों ने राज्य किया है वह बुन्देलखण्ड है। यह गंगा–यमुना के दक्षिण में नर्मदा तक फैला हुआ है। इतिहासकार डॉ.महाजन के अनुसार महाभारत कालीन चेदि नरेश शिशुपाल वर्तमान बुन्देलखण्ड के अधिकांश भाग का शासक था। चन्देरी उसकी राजधानी थी। शिशुपाल द्वारा शासित भू–भाग को आज का बुन्देलखण्ड माना जाना उचित है।

तमाम अभिमतों का मंथन करने के फलस्वरूप भाषाई एकरूपता को आधार मानकर बुन्देलखण्ड की सीमा का निर्धारण बुन्देली भाषा के आधार पर किया जाना सटीक लगता है। इस तरह मध्यप्रदेश के दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, दमोह, सागर, नरसिंहपुर, रायसेन, विदिशा संपूर्ण जिले, होशंगाबाद जिले की होशंगाबाद, सोहागपुर तहसीलें, ग्वालियर जिले की गिर्द, डबरा तहसीलें, भिण्ड जिले की लहार तहसील, शिवपुरी जिले की करैरा, पिछोर तहसीलें, अशोक नगर जिले की अशोकनगर, मुंगावली तथा चंदेरी तहसीलें, जबलपुर जिले की पाटन तथा जबलपुर तहसीलों का कुछ भाग बुन्देली भाषा भाषी क्षेत्र में आता है।

इसी तरह उत्तर प्रदेश के जालौन, झाँसी, ललितपुर, हमीरपुर, महोबा, चित्रकूट, संपूर्ण जनपद तथा बाँदा जिले की करबी तथा नरैनी तहसीलें शुद्ध बुन्देली भाषा भाषी हैं। अतः म.प्र. के नौ जिले सम्पूर्ण एवं छह जिलों की बारह तहसीलें तथा उत्तरप्रदेश के छह सम्पूर्ण जनपद तथा बाँदा जनपद की दो तहसीलों को मिलाकर वृहद बुन्देलखण्ड में आता है।

यह शाश्वत सत्य के रूप में स्वीकार किया जा चुका है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर अपने भावों और विचारों को दूसरों पर प्रकट करना चाहता है और दूसरों के भावों और विचारों को जानना चाहता है। इसे मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति के रूप में स्वीकार किया गया है।

अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करने का माध्यम है – भाषा। भाषा भाव एवं विचार विनिमय के साधन का नाम है। भाषा एक कला है। दुनिया में अनेक भाषाएँ हैं और उन पर रचित अनेक साहित्य हैं। भारत में भी अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। दक्षिण में द्रविणों का निवास है, इनसे तमिल, तेलगू, मलयालम तथा कन्नड़ भाषाओं का उद्‌भव हुआ। अन्य क्षेत्रों में बंगाली, हिन्दी, पंजाबी, मराठी, गुजराती तथा पहाड़ी भाषाएँ बोली जाती हैं। जिनका सम्बन्ध संस्कृत से है। संस्कृत भाषा को प्राचीनतम भाषा माना जाता है। वैदिक संस्कृत से जन साधारण की भाषा पाली की उत्पत्ति हुई। पाली को प्राकृत भाषा माना जाता है। पाली से प्राकृत भाषा और प्राकृत भाषा से अपभ्रंश भाषा का जन्म हुआ। हिन्दी भाषा की उत्पत्ति इसी अपभ्रंश भाषा से हुई।

हिन्दी की कई उपभाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख हैं– अवधी, पिंगल या ब्रजभाषा खड़ी बोली और बुन्देलखण्डी। बुन्देली, बुन्देलखण्ड की प्रमुख भाषा है। यह सरल, सुबोध, सरस और मधुर बोली है। इस भाषा में साहित्य का अपार भण्डार है। बुन्देलखण्ड में लोक साहित्य का विशिष्ट स्थान है। लोक साहित्य बुन्देलखण्ड की साहित्यिक निधि है। लोक साहित्य शिष्ट साहित्य की जीवनधारा का निर्माण करता है। कई बार जब शिष्ट साहित्य निष्प्राण सा होता दिखा, तब लोक साहित्य ने विभिन्न भाव भूमियों को सहायता प्रदान की।

लोक साहित्य का जीवन तत्त्व उसकी भाषा पर आधारित रहता है। अतः बुन्देलखण्ड का साहित्य (बुन्देलखण्डी लोक साहित्य) बुन्देली भाषा पर आश्रित होना स्वाभाविक है।

किसी भी क्षेत्र की संस्कृति उसकी भाषा की समृद्धि पर निर्भर मानी जाती है। बुन्देली हिन्दी भाषा की एक बोली के रूप में स्वीकार की जा चुकी है। यह बुन्देलखण्ड की लोक प्रचलित भाषा है या यूँ कहा जा सकता है कि बुन्देली बुन्देलखण्ड की पहचान बतलाती है। भाषा की दृष्टि से भाषा वैज्ञानिक संक्षिप्त नाम 'बुन्देली' को अधिक उपयोगी समझते हैं। बुन्देली से बुन्देलखण्ड वासियों का आशय लगाया जाता है।

बुन्देली का उद्‌भव एवं विकास काल चन्देल काल को माना गया है। चन्देल काल में चन्देल राज्य की प्रमुख राजधानी महोबा, धार्मिक राजधानी खजुराहो और

सैनिक राजधानी कालिंजर थी। अतएव स्पष्ट है कि महोबा, खजुराहो और कालिंजर की भाषा ही काव्य भाषा के पद की अधिकारिणी रही है। इतिहास इसका प्रमाण है कि महाराज छत्रसाल के पन्ना नरेश के रूप में मुगल बादशाहों को लिखे पत्र बुन्देली में लिखे जाते थे। बुन्देली लोकगीतों, लोकगाथाओं तथा लोक महाकाव्य 'आल्हा' की भाषा बुन्देली होने के कारण यह स्पष्ट तौर से कहा जा सकता है कि बुन्देलखण्ड की जनप्रिय, सशक्त भाषा बुन्देली रही है और रहेगी।

यह सर्वमान्य है कि लोक संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम उस क्षेत्र विशेष की बोली (भाषा) होती है, लोकगीत होते हैं, लोकसाहित्य होता है। जनजीवन अपने दुःख–सुख, पीड़ा–तनाव, रीति–रिवाज, परम्परा, आस्था–विश्वास सबकी अभिव्यक्ति अपनी बोली में करता है। सही माने में लोकसाहित्य जिन्दा इतिहास के दस्तावेज होते हैं, भाषा भावना की अभिव्यक्ति का साधन होता है। जब देश परतन्त्र हो जाता है, तब देश की सभ्यता और संस्कृति खतरे में पड़ जाती है, ऐसे में लोकमानस और लोक संस्कृति देश की रक्षा करती है। बुन्देली भाषा ने यह दायित्व पूरी तरह से निभाया है। बुन्देलखण्ड वीर भावना का क्षेत्र है। रानी झाँसी, छत्रसाल और आल्हा–ऊदल की तलवारों की धार यदि आज भी जिन्दा हैं तो उसका संपूर्ण श्रेय जाता है बुन्देली भाषा को। हरदौल के बलिदान की करुणा आज भी बुन्देली नारियों की आँखों में यदि जीवित है तो उसका पूरा यश बुन्देली को ही दिया जा सकता है।

बुन्देलखण्ड सदा वीर प्रसविनी भूमि रही है। इस भूमि पर बड़े–बड़े वीर योद्धाओं ने जन्म लिया है, जिनकी शौर्य गाथाओं को बुन्देली (बुन्देलखण्डी) में रासो काव्यों की समृद्ध परम्परा में लिखा गया है, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

1.	परमाल रासो	चन्दबरदाई
2.	दलपत राव रासो	जोगीदास
3.	करहिया के रासो	गुलाब कवि
4.	शत्रुजीत रासो	किशुनेश
5.	पारीछत रासो	श्रीधर
6.	बालाट रासो	प्रधान बाजूराव
7.	भगवतसिंह रासो	प्रधान बाजूराव
8.	झाँसी कौ रासो	प्रधान कल्याणसिंह कुड़रा
9.	महारानी लक्ष्मीबाई रासो	पं.मदनमोहन द्विवेदी 'मदनेश
10.	घूस रासो	पृथ्वीराज
11.	शुभकरन और दलपति राव रायसा–श्री जोगीदास–	भाण्डेरी

उपरोक्त रासो बुन्देली भाषा के सशक्त ग्रंथ बनकर उभरे हैं। इसी तरह रासौ काव्यों में धर्म के प्रति अटूट आस्था और दृढ़ विश्वास की जनभावना को उजागर किया है। देवी–देवताओं की पूजा, व्रत, उपवास, शकुन विचार, वेद विहित क्रिया विधियों के पालन में धर्म के प्रति जन आस्था का परिचय मिलता है–

जय इष्ट मंत्र आरिष्ट नासक ध्यान त्रिपुरी दीजियो,
रिष पित्र रवि के हेत भूप जलान्जली तंह दीजियो।

–शत्रुजीत रासौ

धार्मिक आस्थाओं का उल्लास करते हुए बुन्देली में अँग्रेजों के द्वारा चर्बी से बने कारतूसों की बात से हिन्दू और मुसलमान दोनों की समस्या का उल्लेख है, देखिये –

दांतन जब टोंटा दाब अही–बिगरैगी धर्म हमार सही,
हिन्दू को गाय की आन कड़ी–उर मुसलमान को सुअर बड़ी।
जानें टोंटा में कौन चाम–दांतन में दाब बौ है निकाम।

–लक्ष्मीबाई रासौ

जहाँ साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है, वहीं भाषा को अभिव्यक्ति का माध्यम। किसी साहित्य के अध्ययन से समकालीन समाज की परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त होता है। बुन्देलखण्डी लोक साहित्य भी इससे भरा पड़ा है। लोकगीत लोक साहित्य के प्राण कहे जाते हैं, क्योंकि लोकगीत मानव के संस्कारों से जुड़े हुए मानव हृदय के उद्‌गार हैं। उदाहरण के लिए –

हमाई कैसे चुकत तिहाई।
मैंड़न मैंड़न हम फिर आए डीमा देत दिखाई
छोटीं–छोटीं बाल कड़ी हैं धूरा रओ फर्राई
जिमींदार को आओ बुलउआ,को आ करत सहाई।
टलिया बछिया साउकार लई, रै गई पास लुगाई।

बुन्देलखण्ड के गरीब किसान की पीड़ा को इन पंक्तियों के माध्यम से कितनी मार्मिकता के साथ उजागर किया गया है, इसी से बुन्देली भाषा की अभिव्यक्ति का अनुमान लगाया जा सकता है। बुन्देली भाषा की कहन बड़ी सरल एवं सहज है। लोग बड़ी शालीनता से अपनी बात कहकर गंभीर प्रभाव छोड़ देते हैं। व्यंग्यात्मक संवाद के लिए बुन्देली लटके प्रसिद्ध हैं –

गुर होतो तो गुलगला बनाउते,
लेते कनक उधार,
अकेले तेलई नइयाँ।

इसको बारीकी से देखिये–अगर गुड़ होता तो आटा उधार लेकर गुलगुले बनाते किन्तु तेल नहीं होने के कारण क्या करें। इसमें सबसे बड़ी बात देखने योग्य ये है कि आखिर उसके पास है क्या? फिर भी गुलगुलों का मजा बातों में ही चख लिया गया है। इसी तरह भाषा की कला का दूसरा नमूना देखें–

बा रस्सी बहुत कच्ची,
ओई कौ फाँसी फन्दा।
हाय–दैया ऐसी मौत के मकरजारे में,
फंस न जइयो– भइया।।

इस प्रकार के साहित्य यह प्रमाणित करते हैं कि किसी क्षेत्र की भाषा में अभिव्यक्ति के लिए जो तत्त्व आवश्यक/अनिवार्य होते हैं वो समस्त तत्त्व बुन्देली में हैं। उसमे अगर पैनी धार है, तो माधुर्य भी है, सम्पन्नों के यश गान का हुनर है तो गरीबों की पीड़ा की कसक।

मानव मन की सूक्ष्मतम अभिव्यक्तियों, आचार–विचारों की विवरणात्मक प्रस्तुति एवं संसाधनों की बारीकी को स्पष्ट करने की क्षमता है बुन्देली भाषा में। अभी तक लगभग 10000 शब्द हैं जो कि प्रचलन में हैं, इनका शब्द कोष तैयार किया जा चुका है तथा लुप्तप्रायः शब्दों के संकलन का कार्य सतत् प्रगतिशील है।

ईसुरी का जन्म

बुन्देली लोकभाषा के महाकवि ईसुरी के जीवन एवं काव्य साधना के बारे में लिखित प्रमाण बहुत कम उपलब्ध हैं, किन्तु उन्हीं के द्वारा कही गईं चौकड़ियाँ फागों में उनके जन्म, जन्म स्थान के बारे में जो जानकारी उपलब्ध हो सकी है, उसके आधार पर ईसुरी का जन्म विक्रम सम्वत 1896 सन् 1839 माना जा सकता है। यद्यपि आचार्य ईसुरी के जन्म सम्बन्धी साहित्यकारों में मत भिन्नता है। श्री द्विवेदी जी ईसुरी का जन्म विक्रम सम्वत 1881 सन् 1824 मानते हैं, श्री गुप्त जी एवं सुन्दर लाल शुक्ल जी विक्रम सम्वत 1902 सन् 1945 ई. मानते हैं, किन्तु किसी एक के मत पर पूर्णरूपेण सम्मति अभी भी नहीं बन पाई है।

ईसुरी के जन्मस्थान के बारे में भी अनेक मत हैं, किन्तु उपलब्ध जानकारियों में झाँसी जिले का ग्राम मेंड़की उनकी जन्मभूमि माना गया है। पंडित भोले प्रसाद तिवारी (अड़जरिया) इनके पिता जी का नाम था, जो एक सामान्य कृषक थे। ईसुरी तीन भाई थे– सदानन्द, रामदीन और ईसुरी। ईसुरी के भाई भी मेंड़की में रहकर अपना पैत्रिक कृषि कार्य करते रहे हैं।

ईसुरी का बचपन लुहरगांव कौनियां हरपालपुर जिला छतरपुर में अपने मामा पं0 भूधर नायक के यहाँ बीता। ईसुरी जब छोटे से थे, तब इनके माता–पिता जी का स्वर्गवास हो जाने के कारण मामा ने इनके लालन–पालन का उत्तरदायित्व निभाया। उन दिनों ईसुरी जी के मामा की कोई औलाद नहीं थी। अतः मामा उन्हें गोद लेना चाह रहे थे, किन्तु बाद में उनके संतान हो गई तो फिर उन्होंने ईसुरी को गोद नहीं लिया, किन्तु उनका विवाह–संस्कार इत्यादि मामा ने ही किया।

विवाह

ईसुरी का विवाह सींगौन (नौगाँव के पास) हमीरपुर उत्तरप्रदेश के पंडित भोलानाथ मिश्र की पुत्री राजा बेटी के साथ हुआ था। ग्राम बघौरा नौगांव जिला हमीरपुर उत्तर प्रदेश वाले ईसुरी की पत्नी का नाम श्यामबाई भी कहते हैं किन्तु सींगौन वालों के द्वारा बताया गया नाम राजा बेटी ही अधिक सत्य माना जा सकता है, क्योंकि राजा बेटी की मृत्यु के सम्बंध में स्वयं ईसुरी ने एक चौकड़िया फाग में जो लिखा है, उसे देखिए –

हम पै डार गई मोहनियां गोरेबदन की धनियां।
बांह बरा बाजूबंद सोहैं कर में जड़ी ककनियां।
नख सिख में सब गानो पैरैं पायन में पैजनिया।
ईसुर कात चिता पै धर दओ तो खां आज रजनियां।

निवास

जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है कि ईसुरी के माता–पिता बचपन में ही स्वर्ग सिधार गए थे, जिससे उनके मामा श्री भूधर नायक उन्हें अपने साथ ले गए। वे ईसुरी को गोद लेना चाह रहे थे कि उनके यहाँ पुत्र उत्पन्न हो गया तो ईसुरी पर उनका स्नेह कम हो गया। ईसुरी के ससुराल वालों का ग्राम धौर्रा (नौगांव) में गल्ला की खरीद का काम था। ईसुरी मामा के यहाँ से धैर्रा आ गए। राजा बेटी को उनके मायके वालों ने उस दुकान में से कुछ हिस्सा दे रखा था, जिसके सहारे वे अपना गुजर–बसर करने लगे।

धौर्रा ग्राम के निवासियों से हुई चर्चानुसार ज्ञात हुआ है कि ईसुरी सन् 1860 ई. में धौर्रा आए थे। उस समय उनकी उम्र लगभग 21–22 वर्ष की रही होगी। एक वर्ष गल्ला के धन्धे में लगे रहने के बाद कामदारी कर ली जो वे सात वर्ष तक करते रहे।

ठाकुर जगत सिंह की एक बेटी थी, जिसका नाम था रज्जो राजा। ईसुरी पर रज्जो राजा का ऐसा जादू चढ़ा कि वे उसके दीवाने हो गए। उन दिनों वे मुसाहिब के यहाँ कामगारी कर रहे थे। अतः उन्हें ठाकुर के परिवार से मिलने–जुलने के पर्याप्त अवसर मिल रहे थे। ईसुरी का रज्जो राजा से मेल जोल बढ़ता देख परिवार में चर्चा का विषय बन गया। ठाकुर साहब ने ईसुरी को धौर्रा से निष्कासित करने का निर्णय ले लिया और मौके की तलाश में थे।

इन्हीं दिनों ठाकुर साहब के घर में कुछ जेवरातों की चोरी हो गई। शक की सुई घर की नौकरानी पर आकर टिक गई। कड़ाई से पड़ताल करने पर उसने अपराध कबूल लिया। ठाकुर साहब तो मौके की तलाश में थे ही, बस क्या था, उन्हें अवसर मिल गया। उस नौकरानी से मिले रहने का सह अपराधी ईसुरी को बना दिया गया और उन्हें पकड़कर नीम के पेड़ से उल्टा लटका दिया गया।

एक तो ब्राह्मण दूसरा ग्राम के ब्राह्मणों का जमाई, ससुराल वालों ने ठाकुर साहब से मिलकर उन्हें छुड़वाया, किन्तु ईसुरी को इस घटना के अपमान ने बहुत आघात पहुँचाया। ईसुरी न तो ठाकुर की बेटी रज्जो राजा को जीवन भर भुला पाए और न ही उस अपमान को, उन्होंने स्वयं अपनी चौकड़िया फाग में लिखा –

जा भई दशा लगन के मारे रजऊ तुम्हारे द्वारें।
जिन तन फूल छड़ी न लागी तिन तन छई तरवारें।
हम तो टंगे नीम की डारें रजुआ करें बहारें।
ठांड़ी हतीं टिकीं चौखट से, हो गई ओट किबारें।
का कएं यार अकेले ईसुर, सबरो गांव उतारें।

धौर्रा निवासियों ने बताया कि सच्चाई ये है कि उस चोरी में ईसुरी का कतई कोई सम्बन्ध नहीं था और न ही उनका रज्जो राजा से कोई अनुचित सम्बन्ध। वैसे भी ईसुरी शादी शुदा थे। उनकी पत्नी उनके साथ रहती थीं, किन्तु लोगों की सोच अगर दूषित हो जाय तो कोई क्या कर सकता था। ठाकुर साहब का उस समय चरचराटा था। उनके विरोध में कोई कुछ बोलने का साहस भी नहीं कर सकता था। ईसुरी ने उन पर लगाए गए झूठे आरोप का प्रतिकार किया और उसके खण्डन स्वरूप उन्होंने कहा –

अनुआ का भओ जात लगायें जौ लो राम बचायें।
रांड़ें पकरीं जांय पेट से ऐबातन की बायें।
ऐंगर ठांड़े देख लेय कोउ आँखें चार मिलायें।
ईसुर चन्द होत न मैले काउ के धूर लगायें।

इस अपमान से दुःखित होकर ईसुरी ने धौर्रा छोड़ दिया और वे ग्राम ठठेवरा (धौर्रा से कुछ दूरी पर ही बसा गाँव) में जाकर बस गए। वे इस अपमान जनक घटना से इतने आहत हुए कि न तो कुछ खाते–पीते थे और न ही उन्हें नींद आती थी। फलतः वे बीमार पड़ गए। अपनी मनःस्थिति का वर्णन स्वयं ईसुरी ने इन शब्दों में किया–

कैसे मिटें लगी के घाओ ई की दवा बताओ।
दिन ना रात चिहारी परतीं ज्वर ना खाये चाओ।
गुनियां और नावते हारे, खेल–खेल के भाओ।
बात ईसुरी कैसौ करिए, चलत न एक उपाओ।

ठठेवरा में वे रहने तो लगे थे, किन्तु वहाँ उनका मन नहीं लग रहा था। वे शरीर से तो ठठेवरा में थे और मन उनका धौर्रा में उन्हें रह–रहकर उस अपमान की पीड़ा सता रही थी। उन्होंने एक फाग में कहा–

हंसा फिरत विपत के मारे अपने देश बिना रे।
अब का बैठे तला तलैंयां छोड़े समुद किनारे।
पैला मोती चुनत हते अब ककरा चुनत बिचारे।
अब तो ऐसे फिरत ईसुरी जैसे मौ में डारे।

ईसुरी के ऊपर लगा यह झूठा आरोप ज्यादा दिनों तक टिका नहीं रह पाया। लोगों को जब असलियत का पता चला तो वे उन्हें ठठेवरा से धौर्रा लिवाने गए, किन्तु ईसुरी ने धौर्रा आने के लिए यह कहते हुए मना कर दिया कि जिन लोगों ने मुझ पर झूठा अनुआ लगाकर अपमानित किया है, उनमें से तो कोई भी नहीं आया है। ईसुरी की बातें सुनकर लोग धौर्रा आकर ठाकुर के पास गए और उनसे ईसुरी को वापिस लिवाने चलने को कहा।

ठाकुर ने अपने भाई को ईसुरी को लिवाने भेजा तथा उनसे अफसोस व्यक्त किया। तब ईसुरी धौर्रा लौट आए, किन्तु उनका मन अब धौर्रा में पहले की भाँति नहीं लगा। वे जब धौर्रा आ गए तो उन्होंने पं. चतुर्भुज किलेदार के यहाँ कामदारी की। चिढ़कर धौर्रा के माफ़ीदार जगजीत सिंह ने उन पर मुकदमा लगा दिया। यह मुकदमा

तहसीलदार कुलपहाड़ की अदालत में चला। उस समय कुलपहाड़ में तहसीलदार माधो प्रसाद थे। उन्होंने निष्पक्ष निर्णय किया और ईसुरी विजयी हुए। ईसुरी ने तहसीलदार की निष्पक्ष न्याय प्रक्रिया की तारीफ में फागें लिखीं, देखिए –

जब हम तासीली से छूटे, परे मुकदमा झूठे।
लै लये हैं ऐझार एक से, एक न हाकि जूठे।
उनखां बढ़ती देय विधाता, बड़े बखेड़ा टूटे।
श्री माधौ प्रसाद से हाकिम जियत जगत जस लूटे
ईसुर नीति निभाई पूरी, नबत पेट खां घूटे।।

दूसरी

जब हम तहसीली से छूटे, अपने अनुआ बीते।
मुद्दई खां दओ बना बुकरिया मुद्दाले खां चीते।
श्री माधो प्रसाद उनई दिन हाकिम बड़े जसी ते।
अरजी देत उबेरे हमखां नई तर होत फजीते।

धौर्रा से बगौरा जाना

बगौरा–नौगाँव के पास ही बसा एक गाँव है, जो जिला हमीरपुर में आता है। अतः तहसील कुलपहाड़ जिला महोबा में है। सन् 1857 की क्रान्ति में एक अंग्रेज महिला की रक्षा करने के कारण अंग्रेजों ने गोवर्धन गंगापुत्र को बगौरा ग्राम पुरस्कार में दिया था। इस ग्राम की जमींदारी के आठ आना उसने पं. चतुर्भुज किलेदार को और चार आना रोशन खाँ को तथा शेष चार आने काले खाँ कामदार अलीपुर स्टेट को बेचे थे।

पं. चतुर्भुज ने अपने हिस्से की जमींदारी की व्यवस्था का भार ईसुरी के सुपुर्द किया और उन्हें बगौरा भेज दिया। बगौरा आकर वे बड़ी प्रसन्नता से रहने लगे और बड़ी ईमानदारी और लगन से जमींदारी की व्यवस्था की जिम्मेदारी निभाई। वे 25–26 वर्ष तक किलेदार की कामदारी करते रहे। यहीं पर उन्होंने साहित्य साधना की। इन दिनों उन्हें बड़ी प्रसिद्धि मिली। वे फाग में महारत प्राप्त कर चुके थे। 54 वर्ष की उम्र में वे वृन्दावन की यात्रा पर गए। वहाँ उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन होकर फागों की रचना की। ईसुरी लगभग तीन वर्ष वृन्दावन, मथुरा, बरसाने तथा बृजभूमि के उन स्थानों पर गए, जहाँ–जहाँ भगवान कृष्ण की लीलाओं का सम्बन्ध रहा है।

पंडित चतुर्भुज किलेदार ईसुरी पर बहुत भरोसा करते थे। वे उन्हें बहुत प्यार और सम्मान करते थे। उन्होंने ईसुरी जी को वृन्दावन से वापिस बुलवा लिया। बगौरा लौट

आकर ईसुरी ने पुनः जमींदारी का काम सम्भाल लिया। कतिपय कारणों से पंडित चतुर्भुज किलेदार की जमींदारी का हिस्सा रज्जब अली ने खरीद लिया। रज्जब अली की मृत्यु के बाद उसकी बेगम आबदी बेगम, बगौरा की जमींदारी की मालिक बन गईं। बेगम ने ईसुरी को जमींदारी का कारन्दा नियुक्त किया। ईसुरी की एक फाग इसकी पुष्टि करती है –

जौलो रहे पगन से नीके, आय गए सबहीं के।
भये इक और रंज के मारें जा नई सकत किसी के।
इतनी ख़बर लैय जी भर गओ, प्रेम को पानी पी के।
आना आठ गाँव में हिस्सा, मजा मिलकियत जी के।
बने बगौरा रात ईसुरी कारिन्दा बीबी के।

ईसुरी बेगम के कामदार भले ही बने रहे, किन्तु उनके पंडित चतुर्भुज किलेदार से सम्बंध पूर्वतः मधुर बने रहे। ईसुरी ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए फाग लिखी है, जो इसकी पुष्टि करती है –

दोई कर परमेश्वर से जोरें करौ कृपा की कोरें।
हम न हुए दिखैया देखैं हितन–हितन की डोरें।
उदना जान परै अन्तस की जब वे अंसुआ ढौरें।
बंदा के ठठरी करें रवानी रजऊ कोद की खोरें।
बना चौतरा देंय चतुर्भज इतनी खातिर मौरें।
होवै कऊं पै मरै ईसुरी, किलेदार के दोरें।

इस फाग में ईसुरी की तीन अन्तिम इच्छाएँ उजागर होती हैं। वे अपनी मौत पंडित चतुर्भुज किलेदार के द्वार पर होना माँगते हैं दूसरी यह कि वे अपनी प्रेयसी रजऊ जिसके कारण उन्हें पेड़ से लटकाए रखकर सजा दी और अपमानित किया गया था, उसके दरवाजे से अन्तिम यात्रा निकले, जिसे वह देख सके। उनकी तीसरी अंतिम इच्छा थी कि उनका अन्तिम संस्कार बगौरा में ही किया जाय।

यारो इतनो जस कर लीजौ, चिता अन्त न कीजौ।
चलतन श्रम से बहै पसीना, भसम पै अन्तस भीजौ।
निगतन खुर्द चेटका लातन, उन लातन मन रीझौ।
वे सुस्ती न होय रात–दिनु जिनके ऊपर सीजौ।
गंगा जू लों मरें ईसुरी, दाग बगौरे दीजो।।

ईसुरी की पत्नी ने चार पुत्रियों तथा एक पुत्र को जन्म दिया था। उनकी पहली पुत्री का राजकुँवर, दूसरी लाड़कुँवर, तीसरी रुकमिन तथा चौथी गुरन थी। ईसुरी के एक पुत्र भी पैदा हुआ था जिसकी 14 वर्ष की उम्र में मृत्यु हो गई थी । पुत्र की मृत्यु से व्यथित हुए ईसुरी ने एक फाग कही थी, जिससे उक्त कथन की पुष्टि होती है –

जौ तन कर दओ राम निरासा,की की करिए आशा।
कीन्हों गजब गरीबन ऊपर, जाने कहा निकासा।
बारे कैसो खेल मिटा दओ, कर ले तनक तमासा।
ईसुर प्रान लेत काये ना, दुखिया तन की आशा।

ईसुरी की पत्नी ज्यादातर अपने मायके में ही रहती थीं। उनके सभी बच्चों का जन्म तथा बेटियों के विवाह संस्कार सींगौन से ही सम्पन्न हुए थे। उनकी पुत्रियों के विवाह क्रमशः –राजकुँवर–महुआबांद, लाड़कुँवर लुगासी, रुकमिन–ढिलापुर और गुरन धबार गाँव में हुए थे।

ईसुरी के श्वसुर के पौत्र श्री बारेलाल मिश्र जो अभी सींगौन में रहते हैं, उन्होंने ईसुरी की पुत्रियों एवं उनके वैवाहिक रिश्तों की पुष्टि की है। उन्होंने यह भी बताया कि ईसुरी की पत्नी भी कवयित्री थीं। वे पढ़ी लिखी तो नहीं थीं, किन्तु वे लोकगीत, दादरे तथा बारहमासी गारियों के साथ–साथ फागें भी कहा करती थीं। राजा बेटी को श्वांस रोग हो गया था। उन्हें साँस लेने में कठिनाई होती थी तथा खाँसी भी आती थी। उन्होंने ईसुरी को अपनी स्थिति फाग के माध्यम से जैसी बताई, उन्हीं के शब्दों में उदाहरण बतौर उनकी कुछ फागें देखिए–

दिलमें परे प्रीति के छाले,बचे तो यार बचाले।
धौंकी नहीं जात जी जामें, सये न जात कसाले।
सांसऊ मांस प्रान नारी में, बैदे चाय बताले।
द्विज को श्याम करें चतुराई, घबा फालतू घाले।

राजा बेटी ईसुरी की पत्नी ने अपना अन्तिम समय जान जो बातें ईसुरी से कहीं वे फाग में थी, जिन्हें ईसुरी ने अपनी छाप देकर पूरा किया था –

हम खां लेव बलम ओली में, प्राण कड़त बोली में।
आये बैद लये रस ठांड़े, का होने गोली में।
हात हमारो सबने देखो, नई प्राण चोली में।
ईसुर ले गए विदा कराके, चार जने डोली में।

ईसुरी की पत्नी की मृत्यु उनसे पूर्व ही हो गई थी। इसकी पुष्टि ईसुरी की एक फाग से होती है–

हम पै डार गई मोहनियां, गोरे बदन की धनियां।
बांह बरा बाजूबंद सोहें, कर में जड़ी ककनियां।
नख सिख में सब गानों पैरो, पांयन में पैजनियां।
ईसुर कात चिता पै धर दऔ, तो खां आज रजनियां।

ईसुरी के परिजनों में उनके सगोत्र बंधु थे, अधार अड़जरिया, जिनके दो पुत्र एवं एक पुत्री थी। बड़े पुत्र का नाम आनन्द राम तथा छोटे का विन्देराम था। पुत्री का नाम रुकमिणी था, जो पंडित अछरूलाल पाठक के परदादा को ब्याही थीं। उनके पाँच पुत्र थे। ईसुरी की एक बहन थी– रामा। ईसुरी ने अपने हिस्से का मकान एवं कृषि भूमि उन्हीं के पुत्र गरीबे मिश्र को दी थी। ईसुरी की सबसे छोटी पुत्री गुरन जो धबार में ब्याही थी उनके पति की मृत्यु जल्दी हो गई थी। पुत्री के वैधव्य संकट पर ईसुरी बड़े दुःखी हुए। वे गुरन को समझाने धबार गए और भगवान की माया को खेल कहकर उसे समझाया–

जिदना गुरन तुमें औतारो, विध ने अक्षर मारो।
सुन्दर रूप दओ विधना ने,नख सिख सें सिंगारो।
उनपे अपनों जोर चले न, परमेंसुर सें हारो।
ईसुरी बेई पार लगा हैं, जीने बनो बिगारो।

महाकवि ईसुरी का जीवन सीधा–सच्चा था। वे अपने काम से काम रखते थे और जो भी उन्हें दिखता था– अच्छा या बुरा, उस पर वे फाग बना लेते थे। वे जीवन की हर घटना को काव्य का रूप दे दिया करते थे। एक बार उनके ऊपर एक काला नाग आकर चढ़ गया और सिर पर बैठकर अपना फन फैलाए कुछ देर तक बैठा रहा, फिर बगैर कुछ हानि पहुँचाए धीरे से उतरा और चला गया। ईसुरी ने इस घटना पर फाग रच डाली और लोगों को सुनाई –

सिर पै करी सांप ने बामी, धन्य गरुण के गामी।
पीठ पछारूं से चढ़ आओ, उतरन उतरो सामी।
न हम करी करन दई औरन, भगति रहो हों कामी।
काये से रीझे ईसुर पै, करत जात हौ नामी।

इस घटना से ईसुरी की ख्याति और महत्त्व और अधिक बढ़ गया था। लोग

उनके दर्शन करने आने लगे और उनके पैर छूकर आशीर्वाद माँगने लगे थे। प्रभु की ऐसी कृपा कि उनकी वाणी में सत्यता भी आ गई। ग्राम बरी के एक लोधी के संतान नहीं थी। वह ईसुरी के पास आया और उनकी चरण वंदना कर अपनी चिन्ता का बखान करने लगा। ईसुरी के मुँह से अनायास निकल गया कि चिन्ता न करो, भगवान तुम्हारी मनोकामना पूरी करेंगे। बस हो गया आशीर्वाद और उस लोधी के घर पुत्र पैदा हुआ। ईसुरी अपनी हर बात काव्य में ही कहा करते थे। उन्होंने जो आशीर्वाद लोधी को दिया था, उन्हीं के शब्दों में देखिए –

तुमने राखे मान हमारे, होवें भले तुमारें।
डेरा दओ खास दालानन, अपने हांतन झारे।
लगा दई पानन की बिरिया, लौंग लायची डारे।
ईसुर देत असीसें तुम खां, ओली खेलें बारे।

ईसुरी के स्वभाव में था कि वे हमेशा लोगों से प्यार–मुहब्बत और अपनत्व का व्यवहार रखते थे। वे दूसरों को भी सच्ची राहों पर चलने की समझाइश दिया करते थे। वे स्वयं धर्म–कर्म पर चलने वाले थे और दूसरों को भी उपदेश दिया करते थे कि भला करने से भला मिलता है और बुरा करने से बुरा। अतः हमेशा सच्चाई और भलाई के मार्ग पर चलना चाहिए। उनके इसी व्यवहार और चाल–चलन के कारण वे लोगों के आदर्श बन गए थे। उन्होंने एक फाग के माध्यम से कहा है–

दीपक दया धरम को जारौ, सदा रहत उजियारो।
धरम करैं बिन करम खुलैं ना, ज्यों कुंजी बिन तारो।
समझा चुके करै ना रैयो, दिया तरें अंधियारो।
कात ईसुरी सुन लो प्यारी, लग जै पार निवारो।

ईसुरी वचन के पक्के थे। वे जिससे जो कह दिया करते थे, उसका हर हाल में पालन किया करते थे। वे कभी झूठ नहीं बोलते थे तथा अपने वचनों की पूर्ति के लिए कटिबद्ध रहा करते थे।

एक समय की बात है, चन्दपुरा गाँव के ठाकुर गम्भीर सिंह ने अपने यहाँ फाग के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने ठाकुर का आमंत्रण स्वीकार कर लिया तथा उन्हें यह भी आश्वासन दे दिया कि वे आयेंगे और साथ में धीरे पण्डा व बेड़नी रंगरेजिन को भी लेकर आयेंगे। यद्यपि धीरे पण्डा कवि नहीं थे, बल्कि बहुत अच्छे गवैया थे। वे ईसुरी की फागें बहुत अच्छी तरह से गाते थे। प्रभु मिश्रा नगड़िया, सूरे झींका बजाते थे और

रंगरेजिन बेड़नी (नर्तकी) नृत्य किया करती थी। उन दिनों लोग शादी–विवाह, बच्चों के जन्म, नामकरण आदि के शुभ अवसरों पर फाग कराया करते थे। ईसुरी के साथ ढोलक, नगड़िया, झांझ–मजीरा बजाने वालों की पूरी मण्डली चलती थी, किन्तु न जाने ऐसी क्या मुसीबत आ बनी कि ईसुरी ठाकुर के यहाँ नहीं पहुँच सके। अपने वचनों की पूर्ति न कर पाने पर उन्हें खेद हुआ और उन्होंने ठाकुर के पास क्षमा याचना लिख भेजी–

मोरी केबो लाख छिमां को, जो कसूर उदना को।
बन्दे विनती करत बनी ना, बिगरी खां ना ताको।
सब कोऊ कात अपुन खां ऐसो, बढ़ौं मिजाज मजा को।
ईसुरी श्री गम्भीर सिंह जू, कलसा चन्द्रपुरा को।

माफी माँगते हुए वे फिर आश्वासन देते हैं कि ऐसी भूल अब वे दोबारा नहीं होने देंगे–

जिदना हम खां आप बुलावें, हुकुम के सुनतन आवें।
गाँव घिसलनी घोड़ा भेजो, विधिगत कौन बतावें।
पडुआ से धीरे पण्डा इक, रंगरेजन खां ल्यावें
ऊ दिन की लाचारी हम खां, रात तिजारी दावें।
दरवाजे पै बना ईसुरी, नई–नई फागें गावें।

ईसुरी बगौरा गाँव में रहते हुए न केवल आस–पास के गाँवों में फागें गाने जाते थे, बल्कि उन्हें दूर–दूर तक बुलाया जाने लगा था। वे अपनी मण्डली सहित बुलाने पर जाया करते थे। उनकी मण्डली में जिन लोगों का उल्लेख मिलता है,उनमें धीरे पण्डा, रंगरेजिन बेड़नी (नर्तकी) पिरभू मिश्रा, प्रेमानन्द सूरे, नत्थे खां दफेदार आदि प्रमुख थे।

तत्कालीन प्रसिद्ध फगवारे गंगाधर व्यास और ईसुरी में बड़ी नजदीकी थी। गंगाधर–ईसुरी से मिलने उनके घर भी आया–जाया करते थे। उनके बीच हास–परिहास भी चलता था। गंगाधर के दो पुत्र थे। एक का नाम मगन था और दूसरे का चगन। गंगाधर ईसुरी की पत्नी को भौजी कहा करते थे और उनसे हँसी–मज़ाक भी कर लिया करते थे।

एक समय की बात जो आमजन में चर्चा का विषय बन गई थी कि गंगाधर अपने पुत्रों के साथ ईसुरी के द्वारे से निकल रहे थे । उस समय ईसुरी की पत्नी उरेन लीप रही थीं। इस कार्य के दौरान उनके कर्णफूलों की सांकरे उनके गालों पर झूम रहीं थीं। गंगाधर को शरारत सूझी और उन्होंने भौजी की मुख मुद्रा का चित्रण करते हुए, फाग की एक कड़ी समस्या के रूप में कह दी –

सांकर कर्णफूल की झूमें, प्यारी कौ मुख चूमै।

ईसुरी की पत्नी राजाबेटी जो प्रखर कवि हृदय थीं, इन्होंने इस मज़ाक का उत्तर उसी दक्षता के साथ बड़े वीभत्स रसात्मकता के साथ दिया और गंगाधर को उनकी गलती का एहसास करा दिया। उन्होंने गंगाधर से कहा –

गंगाधर झाड़े खां निकरे, रिपट परे ते गू में।
सबरी देह मगन ने चाटी, तनक छपो रहो मूं में ।
प्यारी सूरत सकल बनायें, गांव भरे में घूमें।

ईसुरी की बुन्देली फाग साहित्य में गहन रुचि होने से वे फागों की चौकड़िया विधा के जनक माने गए हैं। उनके साथ–साथ उनके समकालीन कवियों ने भी फाग को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम अपना लिया था। ईसुरी के सभी साथी फाग रचने में माहिर हो गए थे, जिनमें धीरे पण्डा, पिरभू मिश्रा, रंगरेजन बेड़नी तथा प्रेमानन्द सूरे उल्लेखनीय हैं। गंगाधर व्यास तो उस समय के प्रसिद्ध फगवारे बनकर उभरे ही थे।

उन्हीं दिनों फाग साहित्य में फड़बाजी का भी विकास हुआ था। ईसुरी और उनकी मण्डली गाँव–गाँव जाकर फागें गात थे। कुछ ही दिनों बाद लोगों ने दो–दो मण्डलियाँ बुलानी शुरू कर दी थी और वे दोनों मण्डलियाँ एक के बाद एक, एक–दूसरे की फागों के उत्तर दिया करते थे। उन दिनों नाथूराम माहौर फाग में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। वे और उनका मण्डल फागें गाने के लिए बुलाने पर जाया करते थे।

नाथूराम माहौर का जन्म झांसी में सन 1884 में हुआ था। खनिया धाना के नरेश ने उन्हें कवीन्द्र की उपाधि से तथा बुन्देलखण्ड रामायण महासभा ने बुन्देलखण्ड भूषण की उपाधि से अलंकृत किया था।

घनश्याम दास पाण्डेय तत्कालीन फाग साहित्य के अजेय फगवारे माने जाते थे। पंडित घनश्याम दास पाण्डेय का जन्म सन् 1886 में मऊरानीपुर जिला–झाँसी उत्तर प्रदेश में हुआ था। आप कवित्त और सवैयों के माहिर कवि थे, किन्तु फाग साहित्य में उनका उल्लेखनीय योगदान था। आप फड़बाजी में पाण्डेय दल के नायक थे। ईसुरी उनका बड़ा सम्मान किया करते थे, किन्तु फाग फड़बाजी में इन्हें कड़ी टक्कर भी दिया करते थे।

वास्तव में चौकड़ियाँ फागें रीतिकालीन कवियों की परम्परा का अपनी स्थानीय बोलियों में उच्छवास मात्र कहा जा सकता है, किन्तु बहुत प्रभावशील मनोरंजक और मारक अभिव्यक्ति सहित। इसी कारण ईसुरी और उनके समकालीन फगवारे जनप्रिय और लोकप्रिय हुए।

फड़बाजी से प्रेरित होकर ईसुरी और उनके समकालीन कवियों ने शब्दालंकारों की नई–नई उद्‌भावनाएँ भी गढ़ी थीं। अतिशयोक्ति पूर्ण वस्तु वर्णन के अंधानुकरण पर ही फड़बाजी होती थी । इसमें विषय साम्य होना स्वाभाविक था। किन्तु कहीं–कहीं तो शब्दावलियाँ एवं वाक्यों में एक रूपता पाई जाती थी जिसके कुछ उदाहरण देखिए –

छूटे नैन बान इन खोरन, तिरछी भौंय मरोरन।
इन गलियन जिन जाव मुसाफिर, गजब परो इन खोरन।
नोकदार बरछी से पैने, चलत करेजे फोरण।
ईसुर हमने तुम से कैदई, घायल डरे करोरन।

उक्त चौकड़िया में बाण का रूपक और बरछी की उपमा कर नेत्रों से करोड़ों व्यक्तियों का घायल किया गया वर्णित किया गया है।

बिलकुल उसी तरीके की उत्प्रेक्षा गंगाधर की चौकड़िया में देखिए–

नैना हने तिरीछे करकें, कोयन काजर भरकें।
जैसे व्याध मृगा के ऊपर, छोड़त बान समरकें।
जे हतयार कान न मानत, घायल होत नज़र कें
सूरबीर रनधीर सिपाई, बींधत सामे परकें।
गंगाधर का लगे कूर खां, पूरे लगत सुधारे कें।

इस प्रकार तत्कालीन कवियों ने एक वस्तु विषयक कई फागें कही, जिनका फड़बाजी से बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध प्रदर्शित होता है।

ईसुरी उस समय के फगवारे थे, जब देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था। परतंत्र देश, राज्य, प्रजा और व्यक्ति की अभिव्यक्ति कितनी प्रतिबंधित हो सकती है, इसका अंदाजा तत्कालीन परिस्थितियों और ऐतिहासिक तथ्यों से तुलना कर लगाया जा सकता है। किन्तु ईसुरी की फागों में स्वच्छन्दता की स्पष्ट छाप नज़र आती है, जिससे स्पष्ट है कि कवि की वाणी हर युग में संचेतना पूर्ण रही है, स्वतंत्र रही है, उसने हर परिस्थिति में दिग्दर्शक, दिशासूचक और मार्गदर्शक का दायित्व निभाया है। ईसुरी की फागों में तो उनके कवि का स्वातंत्र्य स्पष्ट झलकता रहा है। वे जो देखते थे, अनुभव करते थे, उसे अपनी फागों में कह देते थे। भले ही उससे उत्पन्न स्थितियाँ परिस्थितियाँ कितनी भी भयंकर परणिति के साथ उत्पन्न क्यों न हों।

ईसुरी का साहित्यिक अवदान

ईसुरी बुन्देली लोकभाषा के कवि के रूप में स्थापित मान्यता प्राप्त फगवारे कहे गए हैं। यह भी सर्व स्वीकार है कि ईसुरी ने फाग साहित्य में चौकड़िया फाग रूपी विधा का सृजन किया है।

लोकगीतों को ग्रामीण जनजीवन के हृदयों से प्रस्फुटित प्रकृति का गान कहा जाता है। लोक गीतों की यही धारा आधुनिक काव्य जगत की जन्मदात्री है। लोकभाषा के बारे में कहा जाता है कि बच्चा जब बोलना प्रारम्भ करता है तो वह अपनी स्थानीय बोली में ही है, बोलता है। वह जो भी गुनगुनाता है, उसमें कविता और रागप्रियता के दर्शन होते हैं।

ईसुरी का लोकभाषा से गहन लगाव था। इसे यूँ भी कहा जा सकता है कि वे लोकभाषा में रचे–पचे थे। उन्होंने बुन्देली लोकभाषा में जो कुछ भी कहा, उससे लोकभाषा की समृद्धि के लिए किया गया प्रयास या अभियान कहा गया।

इसके पहले कि ईसुरी के साहित्य विधान पर विस्तार से प्रकाश डाला जाय, बुन्देली लोक साहित्य का संक्षेप में जिक्र किया जाना आवश्यक हो जाता है।

बुन्देलखण्ड का लोकसाहित्य

जनजीवन में रमता, लोक कण्ठ में गूँजता और लोकवाणी से मुखर होता साहित्य लोकसाहित्य है। लोकसाहित्य जनसामान्य के सहज, संवेदनशील मन और वाणी को सराबोर करता स्वयं अपना मार्ग बनाता हुआ सतत् प्रवाहित रहता है। इसका प्रभाव क्षेत्र असीमित, व्यापक और छोर विहीन मुक्त रहता है। लोक साहित्य की उत्पत्ति जनमानस के बीच से होती है। यह जनमानस द्वारा स्वयं के लिए निर्मित साहित्य होता है। लोक साहित्य दो शब्दों का मिश्रण है–

लोक– जिसका तात्पर्य है–संसार अथवा जनमानस, दृश्यमान जगत।

साहित्य– जो हित साधक हो, कल्याण कारक हो, अर्थात लोक साहित्य जन मानस का हितसाधक साहित्य है।

लोक साहित्य के तत्त्व

यहाँ यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि लोक साहित्य लोक जीवन का अभिन अंग है और इसके तत्त्व लोकमानस में आत्मसात होते हैं। लोक साहित्य के

तत्त्वों में प्रमुखतः छह रूप हैं जो निम्नानुसार हैं– कथाएँ, कहावतें, लोकोक्तियाँ, गीत, भजन और अन्य लोककाव्य।

पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने लोक साहित्य विशेषतः लोकगीतों का श्रेणीवार विभाजन किया है, जिनमें– संस्कार–प्रधान, श्रम–प्रधान, त्योहार–प्रधान, ऋतु प्रधान, जाति प्रधान, समैया प्रधान– जैसे मेला, संस्कार, विवाह इत्यादि। पंडित गौरी शंकर द्विवेदी (झाँसी) ने लोकसाहित्य को– सैर, राछरे, बिलवारी, दिवारी, फ़ागें लेदें, और गारीं आदि में विभाजित किया है।

डॉ. बलभद्र तिवारी (सागर विश्वविद्यालय) ने लोक साहित्य को– संस्कारपरक, जातिपरक, श्रमपरक नृत्यपरक और क्रीड़ापरक श्रेणियों में विभाजित कर विवेचना की है।

लोक साहित्य में सर्वाधिक लोकव्यापी लोककाव्य (लोक–गीत) विधा है। सामाजिक संस्कारों से सम्बन्धित लोक–गीतों को निम्नानुसार विभाजित किया गया है–

खेत–खलिहानों– किसानों और श्रमिकों की व्यथा–कथा कहने वाले गीत।

भोर–भिंसारे– अनाज पिसाई के समय गाये जाने वाले गीत।

समारोह– उत्सव गीत और त्योहार गीत।

बारहमासी गीत– नवरात्रि में दुर्गा मैया के भक्ति गीत (जवारे गीत) **सावन –भादों में** कजरिया गीत, हरतालिका गीत (तीजा), महालक्ष्मी व्रत पूजन गीत, संतान–सातें के गीत, **मामुलिया गीत, क्वांर में नौरता गीत, कार्तिक में** कतकारिन के गीत, इच्छा नौमी के गीत, दिवारी के गीत, **पूस–माघ में** तीर्थ यात्राओं में गाये जाने वाले लमटेरा गीत, **फागुन की फागें, बिलवारी गीत** चैत में फसल कटाई के गीत, **अक्ती पूजन गीत** (बरा पूजन गीत) और **लोरी गीत** (बच्चों को सुलाने के गीत)

संस्कार गीत– आगन्नो, जन्म– (सोहर), मुंडन, अन्नप्राषण, कान छिदाई, नामकरण, जनेऊ, गुदना गुदाई, महावर लगाई, बनरा, मेहर, हल्दी चढ़ाई, तेल चढ़ाई, हरदोल निमंत्रण, कुआँ पूजन, गौरइयाँ पूजन, राछरे, भीख डालने के, दूल्हा–निकासी के, बेरी–पूजन, पक्यात–लगुन–(तिलक), टीका, पंगत की गारियाँ, चढ़ाव, भाँवर, गाँठ जुराई, कन्यादान, पांव–पखराई, धान बुवाई, कंकन बंधाई, राछ–बधाव, कुँवर–कलेवो, दायजा सौंपने, विदाई, देवी पूजन, कंकन छुराई, हुर्रइयाँ, सुहागनों और गड़ गड़ाइयाँ आदि।

जातिपरक गीत – कछया –राग, ढ़िमरिया –राग, अहीरों के (दिवारी) बेड़िया, धुबिया–राग और बसोरों का राई–रावला गीत आदि।

फड़–साहित्य – (अखाड़े बाजी के गीत) सैर, लावनी, ख्याल, फाग (छन्दयाऊ–चौकड़िया), भजन, कीर्तन और दिवारी आदि

सूरवीरों से सम्बन्धित गीत –छत्रसाल, महारानी लक्ष्मी बाई, राजा परीक्षित, रानी सारन्धा, रानी अवंतीबाई, जगत राज दिग्विजय और आल्हा–ऊदल गीत आदि के गीत।

लोक देवता गीत– हरदौल, कारसदेव, हीरामन, सिद्धबाबा, घटोई बाबा, खैरादेव, ब्रह्मदेव, बूढ़े बाबा, मैकासुर और गोंड़ देवता आदि के गीत।

बुन्देलखण्ड में कवित्त–सवैया में शिष्ट साहित्य की प्रतिद्वन्द्विता (फड़बाजी) का चलन रहा है, जिसके प्रमुख केन्द्र झाँसी, छतरपुर और मऊरानीपुर रहे। फड़बाजी साहित्य में श्री गंगाधर व्यास, परमानन्द पाण्डेय, नाथूराम व्यास, घनश्यामदास पाण्डेय, नरोत्तम पाण्डेय, श्यामसुन्दर बादल, हरिदेव गुप्त आदि का उल्लेखनीय योगदान रहा है। श्री गंगाधर व्यास–छतरपुर तुर्रादल के प्रमुख माने जाते हैं। श्री हेम राज, दशानन्द, भैंरोसिंह, कंदई, गजाधर, लक्ष्मण और रामदास दर्जी इसी परम्परा के कलाकार थे। श्री घासीराम व्यास, मुन्नालाल चौबे, एवज़ अली, शफ़दरअली (गणेश शंकर) सुदामा भैया (वंश गोपाल) आंग्राह कश्मीरी, चमन राव, श्याम राव, मदारी– कल्लू ब्राह्मण, नन्हें पटैरिया, लालता प्रसाद मदारी, कुंजरे, कल्लू ब्राह्मण, नन्हें पाटिया, लालता प्रसाद, मनहर बरवें, और शैल कुमारी–आदि कलाकार थे। श्री सुदामा जी (वंशगोपाल) ने 'श्रृँगार पचासा' नामक ख्यालों की पुस्तक–लिखी थी ।

दुर्गाप्रसाद पुरोहित मऊरानीपुर को कलगी दल का प्रमुख माना जाता है। श्री घनश्याम दास पाण्डेय ने पाण्डेय दल बनाकर कलगी दल की बागडोर संभाली थी। इस दल में गणपति सहाय चतुर्वेदी, श्री भोगीलाल गुप्त–(गुरसरांय) का नाम उल्लेखनीय रहा। श्री भाउ नारायण, पंडित रामकृष्ण श्यामचरण लाल कायस्थ, दंगली प्रसाद जैन और मोतीलाल हिंगवासिनी आदि प्रमुख कलाकार थे।

ख़्याल परम्परा में सेठ भोगीलाल (गुरसरांय) ने लगभग ढाई हजार ख्याल, चन्दलगिरि (जालौन), बल्देव प्रसाद (कसगर), मन्नूलाल चौधरी (कौंच) तथा मोहनलाल दाऊ (कौंच) एवं ख़्याली राम ने उच्चस्तरीय ख़्यालों की रचना की है।

पंडित गंगाधर व्यास ने सैर साहित्य को परिष्कृत एवं परिमार्जित किया है। सैर साहित्य में पंडित गंगाधर व्यास के प्रतिस्पर्धी–पंडित परमान्नद पाण्डेय ने पाण्डेय दल बनाया जिसमें महादेव प्रसाद चौबे अनंत, रामकृपाल मिश्र ज्योतिषी, भगवान दास कुशवाहा, जानकी खरया, नन्हें शुक्ल आदि प्रमुख थे।

व्यास दल में श्री रामदास नामदेव,श्रीराजाराम शुक्ल 'रत्नेश', श्री रामनाथ, श्री रामलाल गुप्ता, श्री मनभावन शुक्ल,श्री कल्लू कैमार, श्री दयानन्द, शेख नत्थू, श्री भवानी प्रसाद पटैरिया, भगवंत सिंह घोष, घनश्याम धोबी, रमजान। गोकुल प्रसाद महाशय, फत्तू, रोशन खाँ, रामदास लखेरे, मुन्ना ताम्रकार आदि थे। सैर साहित्य में श्रृँगार, शान्त, करुण वीर आदि सभी रसों में सजीव अभिव्यंजना हुई है।

फाग साहित्य

बुन्देली जनमानस के साहित्य का बहुत बड़ा हिस्सा केवल फाग साहित्य है। यद्यपि फाग त्योहार परक लोक साहित्य है, जो बसंतोत्सव से प्रारंभ होकर होली, रंग पंचमी तक गाया जाने वाला है। किन्तु ईसुरी, गंगाधर और ख्याली राम जैसे लोक प्रिय कवियों ने इसे जनप्रिय साहित्य के रूप में स्थापित कर दिया है।

बुंदेली फागों के भेद

बुन्देली फागें मुख्य रूप से छह प्रकार की हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है –

सखियाऊ की फाग– ये फागें दुमदार दोहों की भाँति होती हैं, अन्त में एक कड़ी और जुड़ी रहती है, जैसे–

प्रीतम प्रीत लगाये के, बसन दूर नईं जाव।
बसौं हमारी नगरिया, दरशन दे–दे जाव।
नज़र से टारे टरों नई मोरे बालम।

सब के सैंया नीरे बसें, मो दुःखनी के दूर।
घरी–घरी चाहत उइे सो भये पीपरा मूर।
कटै नें काटी जे रतियाँ

ढप की फागें– इस प्रकार की फाग में प्रथम चरण के बाद एक विशेषण जोड़कर एक टेक बना ली जाती है तथा दूसरे चरण के बाद कोई अन्य विशेषण जोड़कर बढ़ा लिया जाता है जैसे–

हरे पाट के फूंदना मनमोहना,
कहां धराऊं ताये पिया अड़घोलना,
गंगा जी की रेत में, लम्बे लगे बजार,
पिया अड़घोलना
हरे पाट के फूंदना मनमोहना।
इक गोरी इक सांवरी दोउ बजारै जांय
पिया अड़घोलना
कौना बिसालये काजरवा, कौना बिसा लये पान
पिया अड़घोलना
गोरी बिसालये काजरवा, राधे बिसा लये पान
पिया अड़घोलना
हरे पाट के फूंदना मनमोहना।

यहाँ पर दोहों की अर्द्धालियों के साथ मनमोहना और पिया अड़घोलना जोड़ दिया गया है इन फागों को दहका फाग भी कहते हैं।

डिढ़खुरयाऊ फागें– इन फागों में डेढ़ पद अपने मौलिक रूप में आता है, इसलिए इन्हें डिढ़खुरयाऊ फागें कहा जाता है। इन्हें झूला या झूलना की फाग भी कहते हैं –

जुर आये सखिन के झुण्ड,
कन्हैया झूमर खेलें राधा से,
अरे हां कन्हैया झूमर खेलें राधा से।

मनमोहन उदक न जांय,
हमारे धीरे झुला देव पालना,
अरे हां हमारे धीरे झुला देव पालना।

चौकड़िया फागें– ये फागें मात्रक छंद हैं। इनमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती हैं, जिनमें 16 एवं 12 यति रहती है। इन फागों के जन्मदाता बुन्देली कवि ईसुरी हैं।

ऐंगर बैठ लेब कछु काने, काम जन्म भर राने।
बिना काम को कोऊ नैया, कामें सबकों जाने।
जौन काम खां करने नैंया, कइयक होत बहाने।
जौ जंजाल जगत को ईसुर, करत–करत मर जाने।

छन्दयाऊ या लावनी की फागें– इन फागों में चौकड़िया फाग की टेक रखी जाती है। बाद में दोहा और लावनी आदि छन्दों को योजना करके बीच–बीच में टेक के रूप में चौकड़िया की कड़ियाँ रखी जाती हैं।

टेक– *मुरली अधर तान धर गाई, रही सकल जग छाई*
छंद– *श्री नन्दलाल जे किया ख्याल,*
कर रए निहाल गाते गाने झट चली नार,
जे लाज टार तज दये सिंगार हर के लाने।
उड़ान–*सो कालिंदी तट जाई लाल*
टेक– *नाक की नथनी कान से तिलरी सीस लगाई*
छंद– *गृह जन की कान, तज दई आन,*
जा कही कान काहे आई।
कही ऐसी तान लगी हृदय आन,
आ गए ज्ञान, लख ललचाई।
उड़ान–*दीने रहस रचाई लाल*

खड़ी फागें – यह भी चार चरणों में मात्रिक छंद वाली होती हैं। इन फागों में 30 मात्राएँ होती हैं तथा 16 और 14 पर यति रहती है –

दिन ललित बसंती आन लगे, हरे पत्र पियरान लगे।
घटन लगी सजनी अब रजनी, रति के रथ ठहरान लगे।
उड़न लगे चहुँओर पताका, मारुत के फहरान लगे।
ऐसे में गंगाधर मोहन, कौन सौत के कान लगे।

फाग साहित्य के प्रमुख साहित्यकार

ईसुरी, गंगाधर व्यास, धीरे पण्डा, परमानंद पाण्डे, दुर्गाप्रसाद पुरोहित, ख्याली राम, पंडित परसुराम पटैरिया, तांतीलाल देवपुरिया, लाला विन्द्रावन सक्सेना, खूबचन्द 'रसेश', मोहन स्वर्णकार, श्री काशी लखेरे, नंदलाल, पद्मसिंह, ज्याला प्रसाद दौआ, सूरश्याम तिवारी, हल्कू मिसर, मंगलदीन उपाध्याय, मातादीन दीक्षित, मुंशी बलदेव प्रसाद भट्ट, रसिक लाल, वसंतराम शास्त्री, भरतू दीक्षित,राम कीरतलाल सहजादे, महीपति द्विज, महारानी रूपकुंवर, पं. बैजनाथ व्यास, रामनारायण व्यास, घनश्याम दास पाण्डेय, मूलचंद नन्दीराम शर्मा,श्री माहौर जी, लाला, रामनाथ, लाला शिवदयाल, शम्भूदयाल नायक, लक्ष्मीप्रसाद दीक्षित, भुजबलसिंह, हीरालाल तिवारी, बिहारी भट्ट, शिवराम शर्मा, द्विज महेश, बच्चीलाल तिवारी, पं. हरदयाल शर्मा, लाला बेनी, बोधन,

द्विजलाल, स्वामी ब्रह्मानंद, रघुराय, मनबोधन, रामसनेही, टीकाराम त्रिवेदी, परमानंद बुधौलिया, मुंशी राजधर, पं. वंशगोपाल, हीराबाई, खुमान पारासर, फकीरे लाल पटेल, झलकन लाल वर्मा, रामचरण हयारण 'मित्र', गंगाप्रसाद हयारण, फूलमती, मु. रामसहाय, हर्षित, भरत बिलहरी, दुर्गा गिरि,उमाशंकर, खेतसिंह यादव, कुलपहाड़, मथुरा प्रसाद वैद्य, रामदयाल वर्मा और मीर खाँ आदि।

आल्हा साहित्य

बुन्देलखण्ड का प्रसिद्ध लोक साहित्य आल्हा वीर रस प्रधान मात्रिक छंद है। आल्हा छंद में दो चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में इकतीस मात्राएँ होती हैं तथा सोलह और पंद्रह पर यति (विराम) होता है। प्रत्येक चरण के अंत में गुरु–लघु रहता है। लोक काव्य के रूप में जनमानस में अपना स्थान प्राप्त कर चुके आल्हा काव्य की सर्वप्रथम रचना महाराजा परिमर्दिदेव के राजकवि जगनिक ने की थी। बुन्देलखण्ड के गाँव–गाँव में चौपाल–चौपाल पर आल्हा गाया जाता है। ढोलक, मजीरा व हारमोनियम की तान पर जब सावन–भादों के महीने में आल्हा की तान छिड़ती है तो लोग रातें बैठे–बैठे गुजार देते हैं–

सावन सैरा जो नर गावें, भर भादों में गंग नहाय।
तिरिया पराई माता मानें, ते बैकुण्ठ धाम को जाय।।

आल्हा लोकगाथा का प्रथम बार संकलन सन् 1865 ई.में फ़र्रूख़ाबाद के कलेक्टर सर चार्ल्स इलियट ने आल्हाकारों के माध्यम से कराया था, जिसका लेखन फ़र्रूख़ाबाद निवासी मुंशी भोलानाथ ने किया था, जो लेथूहैण्ड प्रेस द्वारा छपा था। इस छंद में अनेक कवियों ने आल्हा की लड़ाइयों की रचना की। बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध कवि नवल सिंह प्रधान ने इसी आल्हा छंद में रामायण एवं महाभारत की रचना की।

प्राचीन काल से ही बुन्देलखण्ड साहित्य मनीषियों की शिखर भूमि रही है। संसार की अपूर्व साहित्यिक कृतियों में बुन्देलखण्ड की भागीदारी सर्वाधिक रही है। जहाँ बुन्देलखण्ड का काव्य साहित्य में महत्त्वपूर्ण अवदान रहा है, वहीं यह गद्य साहित्य में भी अग्रणी रहा है। चन्देल साम्राज्य के अधिकांश भागों में बुन्देलखण्डी भाषा अपनी अनेक स्थानीय बोलियों के साथ ग्यारहवीं–बारहवीं सदी में विकसित रही है।

महाकवि वाल्मीकि एवं महर्षि वेदव्यास ने इसी बुन्देली भूमि पर अपने महाकाव्यों का सृजन किया है। बबना(उरई) जिला–जालौन उत्तरप्रदेश महर्षि वाल्मीकि की जन्मस्थली मानी जाती है (बुन्देल वैभव–गौरी शंकर द्विवेदी)। उनका आश्रम तमसा नदी

के किनारे पर था। इसी तरह अठारह पुराण गीता और महाभारत जैसे महान ग्रंथों के रचयिता महर्षि वेदव्यास की जन्म भूमि होने का गौरव कालपी को प्राप्त है। बुन्देलखण्ड में लगातार एक के बाद एक ऐसी विभूतियों ने जन्म लिया है, जिन्होंने साहित्य जगत में अपनी अमर कृतियों को जोड़कर बुन्देलखण्ड का गौरव बढ़ाया है। श्री मित्र मिश्र का जन्म ओरछा में हुआ। इनका बुन्देलों के उत्कर्ष से ओतप्रोत वीर मित्रोद्य वृहद् संस्कृत ग्रंथ अद्वितीय माना गया है। इसे संस्कृत का विश्वकोष कहा जाता है। यह ग्रंथ ओरछा नरेश वीरसिंह जू देव के प्रोत्साहन सहयोग से प्रकाशित हुआ था।

महाराजा मधुकरशाह ओरछा के शासन काल में काशीनाथ मिश्र ने ज्योतिष के एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ की रचना की। महाकवि केशवदास इन्हीं कविवर काशीनाथ जी के द्वितीय पुत्र थे ।

वीरगाथा काल में बुन्देलखण्ड के वीर राजाओं की शौर्य गाथाओं से सम्बन्धित अनेक कृतियों का सृजन हुआ, जिनमें जगनिक के परिमाल रासो को बुन्देली का प्रथम महाकाव्य माना जाता है। इनका आल्हाखण्ड बुन्देली लोकरागिनी का जनप्रिय वीर काव्य साबित हुआ।

भक्तिकाल में प्रसिद्ध कवि गोस्वामी विष्णुदास ने महाभारत कथा नामक ग्रंथ बुन्देली में सृजित किया। हिन्दी साहित्य क्षितिज के सूर्य आचार्य तुलसी का जन्म राजापुर जिला बाँदा में रामबोला नामक बालक के रूप में हुआ, जिन्होंने अपना अधिकांश समय चित्रकूट में गुजारा –

चित्रकूट के घाट पर, भई संतन की भीर।
तुलसीदास चंदन घिसें, तिलक देत रघुवीर।।

मानस ग्रंथ काशी के पास 'बुन्देला नाला' पर सृजित किया जो बुन्देलखण्ड की पूर्वी सीमा पर स्थित है। उनके ग्रंथ कवितावली और हनुमान वाहक में बुन्देली कूट–कूटकर भरी नज़र आती है।

पंडित हरीराम शुक्ल 'व्यास' जो ओरछा में जन्में थे, ने रागमाला एवं व्यासवाणी नाम से सरस पदों की रचना की। इन्होंने ही नवरत्न नामक संस्कृत ग्रंथ की रचना की। रामचन्द्रिका जैसे प्रबन्धकाव्य के रचनाकार कवि केशवदास मिश्र का जन्म ओरछा में हुआ था। उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ काव्यप्रिया,रसिकप्रिया, वीरसिंह देवचरित्र, जहाँगीर जस चन्डिका, रतन बावनी तथा विज्ञान गीता बुन्देली की साहित्यिक धरोहर हैं।

बुन्देलखण्ड के साहित्यिक अभिदान में बुन्देली नारियों के योगदान को कभी नहीं भुलाया जा सकता। ओरछा नरेश इन्द्रजीत सिंह की प्रेयसी राय प्रवीण को जब अकबर ने बुरी इच्छा से सौंपने का फरमान भेजा तो राय प्रवीण ने अकबर को एक दोहे के माध्यम से चेतावनी दी थी–

विनती राय प्रवीन की, सुनिओ शाह सुजान।
जूठी पातर भखत हैं, बारी बायस स्वान।।

मधुकर शाह के दरबार की वेश्याएँ उत्कृष्ट कविताएँ सृजित करने वाली थीं जिनमें से तीन तरंग ने संगी अखाड़ा, विचित्र नायना ने कोक शास्त्र तथा मधुर अली ने रामचरित्र एवं गणेश देवमाला की रचना की थी।

हिन्दी साहित्य का रीतिकाल सन् 1700 ई. से बुन्देली साहित्य का उत्कर्ष काल माना जाता है। बुन्देलखण्ड के महाराजा छत्रसाल स्वयं एक सिद्धहस्त कवि थे। उनके दरबार में कवियों का सर्वोच स्थान था। कहा जाता है कि महाराजा छत्रसाल ने कवि भूषण की पालकी को स्वयं कंधा लगाया था ।

निर्गुण भक्ति काव्य धारा की ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि अक्षर अनन्य जी का जन्म ओरछा में हुआ था, जिन्होंने 30 ग्रंथों की रचना की थी। सेंवढ़ा के राजा पृथ्वीसिंह के अनुरोध पर वे सेंवढ़ा आ गये थे। उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ महिमा समुद्र, उत्तम चरित्र, प्रेम दीपिका आदि हैं।

निर्गुण प्रेममार्गी शाखा में स्वामी प्राणनाथ जी जिनका जन्म तो गुजरात में हुआ था, किन्तु वे महाराज छत्रसाल के निवेदन पर पन्ना में आ गये थे। वे प्रणामी मत के प्रणेता हैं तथा प्रणामी सम्प्रदाय उन्हीं के मार्ग पर बना है। कुंजम स्वरूप, श्री मत्तारतम्य सागर उनके वृहद ग्रंथ हैं, जिसमें 18758 चौपाइयां और 527 प्रकरण हैं।

प्रेमाश्रयी शाखा में ही सन्त कवि ऐंनसाई हुए। इनका जन्म ग्वालियर में हुआ था। इनका प्रारंभिक नाम ऐन उल्लाह पठान था जिन्होंने 24 वर्ष की उम्र में वैराग्य ले लिया था। उन्होंने दतिया में अपना अधिकांश समय बिताया और साहित्य सृजन किया। इन्होंने 20 ग्रंथों की रचना की। गुरू उपदेश सार उनका वृहद ग्रंथ है, जिसमें 6416 कुण्डलियाँ हैं।

पन्ना राज्य के दरबारी कवियों में सेंवड़ा निवासी हरिकेश ने ब्रजलीला और बख्शी हंसराज ने 'सनेह सागर' की रचना की। दतिया के राजा दलपतिराव के तृतीय पुत्र,

पृथ्वी सिंह ने कृष्ण–भक्ति की सरस रचनाएँ कीं। जो 'रसनिधि–सागर' तथा 'रतन–हजारा' में प्रकाशित हुई ।

महाराजा छत्रसाल के प्रिय कवि–गौरेलाल (लाल कवि) ने महाराजा छत्रसाल की प्रशस्ति में अनेक कृतियों की रचना की, जिनमें 'छत्र प्रकाश' सर्वाधिक प्रसिद्ध हुई।

बुन्देली साहित्य में रायसौ और कटकों की परम्परा बहुत सराहनीय रही। यह परम्परा सन् 1857 ई. की क्रान्ति तक चलती रही। कटकों में कुछ बहुत प्रसिद्ध हुए जिनमें– परीक्षत कौ कटक–श्री द्विज किशोर, भिलसांय कौ कटक–श्री भैरों लाल और झाँसी कौ कटक–श्री भागीदाऊ जी 'श्याम'।

रीतिकालीन कवियों में सागर में जन्में कवि–पद्माकर ने हिम्मत बहादुर बिरदावली, आभरण, जगद्विनोद, प्रबोध–पचासा, जयसिंह विरदावली, राम–रसायन, आलीजाह प्रकाश, हितोपदेश, अश्वमेघ भाषा तथा गंगा–लहरी आदि काव्यों का सृजन किया।

'ठाकुर' नामधारी–तीन कवि थे, जिनमें दो असनी के भट्ट थे तथा तीसरे लाल ठाकुर कायस्थ थे, जिनका जन्म सन् 1766 ई.में ओरछा में हुआ था। इनकी कविताएँ– ठाकुर–ठसक में प्रकाशित हुई हैं।

श्री कारे बेगकार का जन्म ललितपुर जिला झाँसी में एक रंगरेज मुसलमान परिवार में सन् 1699 ई. में हुआ था। इन्होंने कृष्ण–भक्ति के बहुत ही मोहक छन्दों की रचना की है–

1. *औरन की बेर को न बेर करी,*
   कारे कहें नंद के कुमार क्यों हमारी बेर देर करी।

2. *हिन्दुन के नाथ तो हमारा कुछ दावा नहीं,*
   जगत के नाथ तो हमारी सुध लीजिये।

बुन्देलखण्ड में आम जनमानस में लोक साहित्य लिखने वाले अनेक कवि हैं, जिन्होंने ढेरों लोकगीत लिखे। छतरपुर जिले के ईसुरी, पंडित गंगाधर व्यास तथा ख्यालीराम लोकप्रिय कवि हुए हैं, जिन्होंने लोक साहित्य की एक विशेष पहचान बनाई। आधुनिक काल के लगभग इन 150 वर्षों में बुन्देलखण्ड में पद्य के साथ–साथ गद्य के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य हुआ हैं।

ईसुरी की चौकड़िया फाग का विधान

बुन्देली साहित्य में चौकड़िया फाग अपने आपमें महत्त्वपूर्ण स्थान पर स्थापित है, जिसके जन्मदाता ईसुरी कहे जाते हैं। ऐसी मान्यता है कि इनके पूर्व भी यह फाग विधा साहित्य में विद्यमान थी। जैसा कि फाग साहित्य के बारे में बुन्देली साहित्य के वर्णन के समय विस्तार से वर्णित किया है, किन्तु चौकड़िया फाग का प्रादुर्भाव और विकास ईसुरी की फागों में ही हुआ दृष्टिगत होता है। यहाँ स्पष्ट किया जाना प्रासंगिक है कि ईसुरी ने चौकड़िया फागें कही हैं, फाग का विधान नहीं लिखा, बल्कि फाग साहित्य के पारखियों ने उनकी फागों से विधा का निर्धारण कर लिया है, जो उनके बाद आने वाले फगवारों की फागों के मूल्यांकन का आधार बन गया है ।

ईसुरी की चौकड़ियों को आधार मानकर चौकड़िया फाग का जो विधान तय हुआ है, उसके अनुसार चौकड़िया की प्रथम पंक्ति में सोलह मात्राओं के प्रथम विराम में अन्तिम वर्ण से मिलती हुई अनुप्रास योजना की जाती है तथा शेष चरणों के अन्त में वही अनुप्रास रखा जाता है। प्रथम चरण में चौथी मात्रा पर एक अल्प विराम भी दिया जाता है। चौकड़िया में प्रायः चार चरण ही होते हैं, परन्तु इसके चरणों की संख्या में कोई रूढ़ता तय नहीं है। स्वयं ईसुरी ने ही चार से अधिक चरणों वाली चौकड़िया कही है।

संगीत विधान की दृष्टि में चौकड़िया

बुन्देली फागें प्रायः ढोलक, नगड़िया, झांझ, मंजीरा और तालियों के स्वरों के साथ–साथ गाई जाती हैं। ईसुरी की फागें जिन्हें चौकड़िया फाग कहा जाता है, चतुष्पदी या पंचपदी हारमोनियम आदि आधुनिक वाद्यों के साथ गाईं जाने लगी हैं।

ईसुरी की फागों को संगीत विधान की परिधि में मापने विषयक बाबू वृन्दावन लाल वर्मा (उपन्यासकार) जो एक प्रसिद्ध संगीत प्रेमी थे, उन्होंने कहा– ईसुरी की फागें अधिकतर काफी, ईमन, बागेश्वरी में ही जान पड़तीं हैं। कुछ लोग इन चौकड़ियों को वृन्दावनी सारंग में भी गाते हैं, किन्तु अच्छा गायक इन्हें किसी तरह के बोल देकर किसी भी राग में गा देगा। बोलों का विस्तार केवल ताल की तलाश करेगा।

फागों की गायिकी का कोई एक निश्चित स्वरूप नहीं है। उसमें कोस– कोस में परिवर्तन मिलता है। किन्तु चौकड़िया गायिकी में व्यापकता और स्थायित्व दिखाई पड़ता है।

यद्यपि फाग के संगीत विधान का उद्‌भव एवं विकास दादरा से माना जा रहा है, किन्तु चौकड़िया फाग ने अपना एक नया संगीत विधान स्थापित किया है, जिसका श्रेय ईसुरी और उनके फगवारे मण्डल को जाता है। चौकड़िया विधान की एक फाग देखिये –

मोरो अब गौनों नियरानो, करबी कौन बहानो।
आवन लगे प्रिया के घर के, कैसे टारिये कानो।
छूटो जात साथ सबकी कौ, मन मतंग पछतानो।
एक दिन होने विदा ईसुरी, आगम आन दिखानों।

बुन्देली साहित्य में फागों की लोकप्रियता का प्रधान कारण उनकी व्यापकता है। फाग बारहमासी हो गई है। अब वे फागोत्सव या बसंतोत्सव पर केन्द्रित न रहकर लोकमानस की भाव तरंगों से पोषण प्राप्त कर क्रमशः विकास और प्रगति के पथ पर काव्य के व्यापक क्षेत्र में अधिकार जमा चुकी हैं। रागात्मकता, सरलता और सरसता इनके व्यापक प्रचार का आधार है, और सबसे बड़ा गुण है। यही कारण है कि चौकड़िया फाग बुन्देली साहित्य में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान स्थापित कर चुकी है। ईसुरी ने इसका आविष्कार करके साहित्य में एक क्रान्तिकारी युग का सूत्रपात किया है। वर्तमान में बुन्देली वातावरण में चौकड़िया फाग आम बोलचाल में प्रयुक्त होने वाली प्रमुख आधार बन गई है। पंचायतों और उत्सवों आदि के अवसरों पर फाग का उदाहरण आम प्रचलन में आ चुका है। चौकड़िया फाग को आम बोलचाल का माध्यम बनाने में ईसुरी का योगदान मील का पत्थर है। ईसुरी साहित्य में एक प्रसंग प्रकाश में आया है, जिसका जिक्र करना यहाँ आवश्यक समझता हूँ –

ईसुरी जब वृन्दावन से लौटकर आ गए उस समय उनकी उम्र लगभग 55 –56 वर्ष की हो गई थी । वे फाग के सिलसिले में कहीं से लौट रहे थे। रास्ते में शाम होने लगी। कहीं तो रात गुजारनी ही थी, किन्तु अपरचित स्थान में किसके यहाँ ठहर जाएँ, कौन खाने–सोने की व्यवस्था कर देगा। ईसुरी जी ने एक ग्रामीण से कुछ बातें कीं फिर बोले – 'सुना है यहाँ की ठकुराईन बड़ी उदार हैं, चलो उन्हीं के यहाँ चलते हैं।'

वे लोग गए और ठकुराइन के द्वार पर कुएँ के पास लगे पेड़ की छाया में ठहर गए। ईसुरी ने एक फाग रची और लिखकर ठकुराइन के पास भेज दी –

नीके लागें दिव्य दुआरे, रानी रजऊ तुम्हारे।
आंगू कुआं बनी दालानें, देत पारुआ पारे ।

साजे रूख देख के हमने, डेरा इतै उतारे।
ईसुर इतै अस्त भये सूरज,उतै पगन सौं हारे।

फलतः ठकुराइन ने उनसे प्रभावित हो सभी सुविधाएँ प्रदान की। सुबह जब प्रस्थान की बेला आई तो ईसुरी ने ठकुराइन के सम्मान में फाग कही –

तुमने राखो मान हमारौ, हू है भलौ तुमारौ।
दिवा पठई पानन की बिरिया सुख की सेजन पारौ।
कोउ बात की कमती ना रई, सब बातन कौ बारौ।
होत भोर निग चले ईसुरी, तकियौ अपनो द्वारौ।

यही प्रथा बुन्देलखण्ड में आज भी चली आ रही है। इस तरह बुन्देली सभ्यता और संस्कृति को अक्षुण्य बनाने में ईसुरी का, उनकी चौकड़िया फाग का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

ईसुरी के साहित्य विधान को तीन अवस्थाओं में बांटकर देखा जाना प्रासंगिक लगता है, जिनमें– नीति परक सामाजिक दिशा बोधक साहित्य विधान, श्रृँगारिक साहित्य विधान और भक्तिपरक साहित्य विधान।

जीवन की अवस्थाओं के अनुसार उनके साहित्य की दिशा–दशा में भी तदनुसार परिवर्तन देखने में आते हैं। ईसुरी के साहित्य विधान को उनके जीवन से जुड़ी परिस्थितियों ने बहुत प्रभावित किया है। बचपन में ही माँ–बाप का साया सिर से उठ जाना, पालन–पोषण तथा शिक्षा मामा के घर रह कर होना, मामा का निजी स्वार्थ कि यदि स्वयं की औलाद नहीं हुई तो गोद लेकर सर्वस्व सौंपने का इरादा– किन्तु मामा की निजी औलाद पैदा होने के कारण जो पुत्रवत स्नेह मात्र औपचारिकता रह जाना।

विवाह संस्कारों की सम्पन्नता और ससुराल पक्ष की मिलकियत पर धौर्रा में रहना, किन्तु अकारण झूठे अपराध में निन्दा और प्रताड़ना का ग्रास बनना। यह इतनी बड़ी बिडम्बना थी कि ईसुरी इस घटना को अपने जीवन भर भूल नहीं पाए। चारित्रिक अनुआ ससुराल पक्ष के समक्ष चारित्रिक शादीशुदा जीवन में कितनी असहनीय पीड़ा भोगी होगी और कैसे? कल्पना मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जो जितनी कठिन परिस्थितियों से गुजरता है, उसके इरादे उतने ही पक्के हो जाते हैं। कहा जाता है कि सोना जितना तपाया जाता है उतना ही उसमें निखार आता है। बिना माँ–बाप के बचपन के दिन फिर पत्नी पक्ष के रहम–ओ–करम पर जीवन संग्राम में कुछ अस्तित्व स्थापित करने की ललक किन्तु अकारण षड़यंत्र का शिकार होना। वह भी शादीशुदा

जीवन में चारित्रक अनुआ। चोरी में संलग्नता, शारीरिक प्रताड़ना, सहनशीलता की हदें पार कर गई। धौर्रा छोड़ने का निर्णय कर लिया और चले गए ठठेवरा।

ऊपर वाले पर भरोसा रखने पर अनुआ झूठा साबित हुआ और ससम्मान पुनर्वास किन्तु दिल की लगी वही जान पाता है, जिस पर गुजरती है । ईसुरी ने अपनी सच्चाई और निर्दोषता को साबित जरूर कर दिया, किन्तु हिए में लगी चोट वे कभी न भुला पाए और न भुला पाए जीवन पर्यान्त उस नायिका को जिसकी वजह से प्रताड़ना मिली और जग हँसाई हुई । वे सच्चे ईमानदार व्यक्ति थे। लोगों ने झूठे दोष मढ़कर सजा दिलाई और बदनाम कराया तो ईसुरी ने भी ठान लिया कि वे उन्हें मुँहतोड़ जवाब देंगे और अपने अपमान का ऐसा बदला लेंगे कि ठाकुर कुल–खानदान उसे कभी भुला नहीं पायेगा।

ईसुरी लोकजीवन की सांसों में रमें–रचे पचे कवि हैं तथा उनकी चौकड़िया फागों के लोग रसिक। मेरी उत्कण्ठा देख लोग अचम्भित थे, किन्तु किसी ने बगैर कुछ प्रश्नांकित किए सारी जानकारियां दीं। लोगों से जो जानकारियाँ मिलीं, वे लिखित साहित्य से बहुत भिन्न हैं तथा कुछ तो लिखित में मिली भी नहीं। यहाँ यह बता देना भी जरूरी है कि लोगों ने ईसुरी के बारे में जो लिखा है, उसमें बहुत कुछ तो मनगढ़न्त ही है।

ईसुरी की साहित्यिक नायिका

जिस तरह संत कवि जयदेव के गीतगोविन्द की नायिका राधा जी थीं। मैथिली शरण गुप्त के साकेत की नायिका उर्मिला, कालिदास के अभिज्ञानशाकुंतलम् की नायिका शकुंतला और बंकिम चट्टोपाध्याय के देवदास की नायिका पारो रही हैं। उसी तरह महाकवि ईसुरी के फाग साहित्य की नायिका **रजऊ** को सर्वमान्य स्वीकारोक्ति प्राप्त है।

रजऊ कौन है? ईसुरी से उनका ताल्लुकात क्या रहा है? इसके सम्बंध में साहित्यकार एकमत नहीं है। कोई कहता है कि धौर्रा के मुसाहिब ठाकुर जगत सिंह की बेटी का नाम **रजऊ** था, जिसके प्रेम प्रसंग में ईसुरी ने ठाकुर के यहाँ कामगारी की, मेलजोल के अवसर बढ़ाए और बढ़ गए चर्चाओं के दौर। ये प्रेम प्रसंग इतने बढ़े कि ईसुरी को अपमानित होना पड़ा, शारीरिक प्रताड़ना और मानसिक वेदना भोगनी पड़ी और सहन करना पड़ी निष्कासन की पीड़ा। ईसुरी ने स्वयं एक फाग में कहा –

जा भई दशा लगन के मारें, रजऊ तुम्हारे द्वारें।

ईसुरी न तो उस अपमान को कभी भूल पाए, न शारीरिक प्रताड़ना को और न ही रजऊ को। उन्होंने इस वेदना को भी अपनी फाग में व्यक्त किया है –

कैसे मिटें लगी के घाओ, ई की दवा बताओ ।

अधिकांश साहित्यकारों ने इसी **रजऊ** को ईसुरी की साहित्यिक नायिका की मान्यता दी है। कुछ साहित्यकारों ने **माधौपुर** निवासी **प्रताप** की पत्नी रज्जो को ईसुरी की नायिका प्रतिपादित किया है। उनका मत है कि जब ईसुरी पं. चतुर्भुज किलेदार की कामदारी के सिलसिले में बगौरा आकर रहने लगे थे। एक दिन फाग गाने जब वे **माधौपुर गए** तो वहाँ पर अकस्मात उनकी भेंट एक नवविवाहिता सुन्दरी से हो गई, जिसका पति छतरपुर में रहकर पढ़ाई कर रहा था और वह बाला अपनी सासु माँ के साथ **माधौपुर** में रह रही थी। लोगों का मत है कि यह रज्जो धौर्रा के मुसाहिब ठाकुर जगत सिंह की बेटी रज्जू ही थी, जिसका विवाह **माधौपुर** के प्रताप से हो गया था। किन्तु इसके कोई ठोस प्रमाण नहीं मिल सके, मात्र उड़ती हुई सी बातें ही हैं, जिन पर इस कथन की पुष्टि नहीं की जा सकती है।

ईसुरी **रजऊ** को सम्बोधित कर फागें कहते थे और उनकी मण्डली ढोलक, नगड़िया, झांझ, मंजीरा के साथ इन फागों को गाया करती थी। एक रात बड़ी विचित्र घटना घटी। ईसुरी की मण्डली फागें गा रही थी। श्रोताओं की भीड़ एकत्र थी। उस भीड़ को चीरती हुई एक बुढ़िया ईसुरी को गालियाँ बकती हुई आगे बढ़ी चली आ रही थी। वह अपने आपको असंयमित करती हुई चिल्ला रही थी –

'ओ नास के मिटे फगवारे (ईसुरी)! लुच्चा, छिनट्टा, तेरी नास हो जाय, महामाई उठा लै जाय, तोखां अगली होरी न आबै।' कहती हुई मंच पर चढ़ गई और ईसुरी का कुर्ता पकड़कर गला दबाने को उद्वत हुई।

'अरे–अरे काकी...!' ईसुरी ने उन्हें सम्भालने की कोशिश की, किन्तु वह बुढ़िया गालियाँ देती हुई ईसुरी के गालों पर तड़ातड़ चांटे जड़ने लगी। लोग बीच–बचाव करने दौड़ पड़े और पूछने लगे कारण। बुढ़िया आग बबूला होती हुई बोली –'ठठरी के बंधे! हमारी बहू की जिन्दगानी बरबाद करने के लिए तुम जौ फगनौटा गा रए हो, का मिल जै हैं तुम्हें। तुम्हारी जीभ पै लूघरा धरें, तुमारी नास हो जाय, बर गए हरो तुमें शरम नईं आय।'

उपस्थित भीड़ स्तब्ध थी। किसी में साहस नहीं था कि कुछ हस्तक्षेप कर सके। धीरे पण्डा ने स्थिति को सम्भालने की कोशिश की, किन्तु काकी ने उन्हें भी चार–चबौदी

सुना डाली। पिरभू नगडिया वाले ने काकी के हाथ जोड़े और पाँवों में गिरकर क्षमा माँगते हुए बोला– 'मोरी अच्छी काकी छिमा कर दो।' बुढ़िया तो एक सांस में हजार गाली देती हुई हंगामा मचाने लगी। फगवारे अपना सामान समेटने लगे और श्रोता अपने–अपने घर को बढ़ चले।

इस बुढ़िया की पुत्रवधू का नाम रज्जो था, जिसकी उम्र बीस वर्ष की थी और उसका पति छतरपुर में पढ़ाई करने के लिए गया था। रज्जो अत्यधिक सुन्दर थी। चढ़ती जवानी, हँसता–मुस्कराता चेहरा बड़ा सुहावना लगता था। एक दिन ईसुरी कहीं जा रहे थे । रास्ते में पनिहारी कुआँ था। गली में पानी व कीचड़ था। न जाने कैसा उक्टा लगा और ईसुरी बुरी तरह से लड़खड़ाकर गिर पड़े। उसी समय रज्जो पानी भरने के लिए निकली हुई थी। ईसुरी को गिरा देख उसे हँसी आ गई, किन्तु उसने स्वयं को सम्भाला और कराहते हुए ईसुरी को उठाने दौड़ पड़ी। ईसुरी को चबूतरे पर बैठाकर अपने घर को दौड़ी और जल्दी से कांसे के बेला में हल्दी पीसकर ले आई और ईसुरी के घुटने में पोतने लगी। ईसुरी उसके भोले चेहरे की सुन्दरता को देखते रह गए। वे लगी चोट भूलकर रज्जो को एकटक देखते रह गए। वे रज्जो को देखकर मुस्करा पड़े। रज्जो ने उन्हें मुस्कराते देखा तो उसके होश जागे और वह अपने घड़े उठाकर पानी लेने चल दी। ईसुरी उसकी ओर देखते रह गए।

सुन्दर मुखड़ा गालों पर गड्ढे पड़ते हुए काले घुँघराले बाल, जिन्हें तरीके से सम्भाल कर पटियाँ पारीं गईं थीं। मांग में सिंदूर भरा हुआ, कजरारी काली बड़ी–बड़ी आँखें, जिनमें बड़े सलीके से क़ाज़ल आंजा हुआ था। कलाइयों में सुर्ख लाल चूड़ियाँ जेवर सी दिखतीं। माथे पर सुन्दर लाल बिन्दी लगी हुई। नुकीली गोरी ठोड़ी पर गुदने का बूंदा रज्जो साक्षात् सुन्दरता की प्रतिमूर्ति नज़र आ रही थी।

मुस्कराता चेहरा, मजबूत बाँहें, पुष्ट और मांसल जांघें, पाँवों में पैजना जिनमें बजने वाले कंकड़ डले हुए थे। आल में पके रंग की धोती और हरे रंग की अंगिया पहने रज्जो उड़ती और हँसती हुई चली गई। ईसुरी जितने घायल गिरने से नहीं हुए थे, उतने रज्जो की हेरन–हँसन और इठलाती निगन से जैसे हो गये।

इस मत के मानने वालों के अनुसार ईसुरी रज्जो के दीवाने हो गए और उसकी एक झलक पाने के लिए लालायित रहने लगे। रज्जो अनजान थी और ईसुरी उससे मिलन की तड़पन में। जब वह कुआँ पर पानी भरने या कूडा–करकट घूरे में फेकने के लिए आती, तब ईसुरी उसकी एक झलक पाने को बाट जोहते रहते। इस मत की पुष्टि निम्न फाग से होती है –

भर लओ कितनी बेरा पानी, रजऊ न आज दिखानी।
कै हम बैठे पीठ करें ते, कै बिरियां नहिं जानी ।
कै हम गए ते बाग बगीचा, कै वे कढ़ी चिमानी।
ईसुर मन तक गए कुआं लो, लए लवन की खानी।

लोगों की ऐसी मान्यता है कि प्रताप की इसी रज्जो को ईसुरी ने रजऊ का नाम दे रखा था और वे उसी को सम्बोधित कर फागें लिखते थे।

ईसुरी शादीशुदा थे। उनकी पत्नी राजाबेटी उनके साथ रहती थीं, किन्तु कभी–कभी वे अपने मायके भी चली जाया करती थीं। उनकी बेटियों के जन्म संस्कार लगभग सभी सींगौन में उनके पितृग्रह में हुए थे। अतः ईसुरी को अकेलापन यदाकदा मिल जाता था, जिसमें वे रजऊ का ध्यान कर लिया करते थे और उसे पाने–निहारने के लिए गलियों में घूमते–फिरते थे।

ईसुरी की मण्डली में एक साथी थे– प्रेमानन्द सूरे, जो अंधे थे, किन्तु जन्मांध नहीं। ईसुरी उनकी कुटिया में रजऊ की एक झलक पाने के लिए घन्टों बैठे रहते थे।

प्रेमानन्द सूरे के सम्बंध में जो उल्लेख मिलता है, वह चौंका देने वाला है। वह देशी फौज में सिपाही था। धुबेला महल में एक किसान की लड़की को कुछ लोग उठाकर ले आए। प्रेमानन्द को जैसे ही जानकारी मिली, उसने कार्य पर उपस्थित रहते हुए भी विरोध किया। उसने किसानों से मिलकर उन्हें धुबेला महल को घेरने के लिए उकसाया। प्रेमानन्द का सुझाव काम कर गया । किसानों ने महल को घेर लिया। रियासत का मालिक घबरा गया। उसने किसानों से सुलह कर ली और वादा किया कि उठाई गई लड़की को वह विधि–विधान से पत्नी बनायेगा।

किसानों ने शर्त रखी की इस लड़की से जो पुत्र होगा, वह धुबेला रियासत का अगला वारिस एवं धुबेला महल का मालिक होगा। शासक ने यह शर्त भी मंजूर कर ली । किसानों का उस साल का लगान माफ कर दिया गया। किसान खुश हो गये। उस लड़की का महल में मंगल मुहूर्त अनुसार विवाह किया गया। प्रेमानन्द सिपाही को रियासत की ओर से इनाम की घोषणा की गई, क्योंकि उसी ने किसानों के वर्चस्व की पहल की थी। इनाम के घात से धुबेला के महल के तैखाने में प्रेमानन्द को ले जाया गया और सांकलों से बांधकर आँखों में आग के दहकाए गए सूजे उतार दिए गए।

प्रेमानन्द के जीवन में अंधेरा छा गया। वह माधौपुर में एक कुटिया में रह रहा था। वह फाग मण्डली में झींका बजाता था। ईसुरी उसी की कुटिया में बैठकर रज्जो को आते–जाते हुए देखा करते थे, निहारा करते थे।

इस बात के मानने वालों का कहना है कि जब प्रताप की रज्जो पानी भरने या किसी अन्य काम से घर से निकलकर गलियों में आती थी, तो ईसुरी उसे सम्बोधित कर फाग कहा करते थे –

चलतीं कर खाले खौं मुइयां, रजऊ बसै लरकइयां।
हेरत जात उंगरियन में हो, तकती हो परछइयां।
लचकें तीन परें करिहा में, फरके डेरी बइयां।
हँसतन मुख से झरें फूल से, जे बागन में नइयां।
धन्न भाग वे संइयां ईसुर, जिनकी आंय मुनइयां।

बेचारी रज्जो शरमा कर सह जाती और अपने घर जाकर चुपचाप रह जाती। उसकी उदासी देख सास उससे उदासी का कारण पूछती, किन्तु वह कुछ न कहती। वह समझती थी कि यदि उसने शिकायत की तो अम्मा जाकर ईसुरी को चार बुरी–भली सुनायेंगी और हल्ला मच जायेगा गाँव भर में। किन्तु ईसुरी तो उसके दीवाने थे ही, जैसे ही वह फिर गलियों में आती दिखी तो उन्होंने फिर फाग कही–

घूंघट काए खोलती नइयां, दिखनौसू है मुइयां।
गोरे बदन गुलाबी नैना, बंग एकऊ नइयां।
चूमन गलुअन मन ललचावे, झपट उठालें कइयां।
ईसुर जिनकी आय दुलैया, बड़े भाग वे सईयां।

ईसुरी का रज्जो के प्रति इतना आकर्षित होना, उसके लिए तड़पना उसकी एक झलक पाने के लिए प्रेमानन्द सूरे की कोठरी में राह पर नज़र गड़ाए बैठे रहना, तात्कालिक परिस्थितियों और ईसुरी के वैवाहिक जीवन को देखते हुए गले से नहीं उतरता है। एक प्रसंग में तो इसी मत के मानने वालों ने स्वयं अपनी ही बात का खण्डन स्वयं ही कर दिया। उन्होंने स्वयं उल्लेखित किया है –

एक बार ईसुरी प्रेमानंद की कोठरी से निकले और रज्जो के घर की ओर चल दिए। उनके पाँव खुद–ब–खुद गली का मोड़ आते ही रुक गए। वे असमंजस की हालत में खड़े थे। उन्हें इस हालत में खड़े देख पिरभू बोला– 'महराज भौजी के घर तरफ जाते–जाते अब लौट काए रए हो?'

ईसुरी ने जो उत्तर दिया, वह इस मत वालों के मुँह पर करारा थप्पड़ है– 'पर स्त्री से मिलना व्यभिचार है, जब तक कि उससे माँ–बहन का नाता न हो। रज्जो से हमारा ऐसा कोई सम्बन्ध नहीं है।'

फिर सच्चाई क्या है? ये रजऊ कौन है? इस पहेली का उत्तर दे पाना आसान काम नहीं है। खास तौर से उन परिस्थितियों में जब एक ही नाम की दो नायिकाएँ, दो अलग–अलग गाँवों की हों। धौर्रा के ठाकुर जगत सिंह की बेटी रज्जो जिसके झूठे आरोप से बदनामी और शारीरिक प्रताड़ना का दंश झेलना पड़ा और दूसरी माधौपुर निवासी प्रताप की पत्नी जिसकी सास ने फागें सुनकर बखेड़ा खड़ा कर दिया था। प्रताप भी पढ़ा–लिखा नवयुवक था। अगर ईसुरी उसकी पत्नी के लिए इतनी अश्लील फागें कहते थे तो क्या उसका खून नहीं खौलता? और वह भी फौज में नौकरी करता था। फिर प्रश्न उठता है कि क्या धौर्रा के माफीदार ठाकुर जगत सिंह की पुत्री रज्जो ही माधौपुर के प्रताप की पत्नी रज्जो है? क्या धौर्रा वाली रज्जो का विवाह माधौपुर के प्रताप से होकर वह माधौपुर आ गई थी?

यहाँ एक प्रश्न और उत्पन्न होता है कि ईसुरी बगौरा में बेगम की कामदारी करते थे और बगौरा में सपरिवार रहते थे तो माधौपुर की रज्जो की प्रतीक्षा में दिन रात लगे रहने वाली बात भी गले से नहीं उतरती है। ऐसे कोई भी प्रमाण नहीं मिले हैं। मैंने धौर्रा, बगौरा, नगारा, लुगासी, महुआबाद ढिलापुर, सीगौन, मड़रका, मेंढ़की, धबार आदि ग्रामों का भ्रमण कर विषयांकित समस्या की वास्तविकता उकेरने के प्रयास किए, किन्तु किसी ने भी यह पुष्टि नहीं की कि धौर्रा की रज्जो और माधौपुर की रज्जो एक ही थीं, जिसके ईसुरी दीवाने हो गए थे।

एक बार तो स्वयं ईसुरी ने इसका खुलासा भी करने का प्रयास किया था जिसका उल्लेख करने के पूर्व बुन्देलखण्ड के रीति–रिवाजों का जिक्र करना जरूरी है। बुन्देलखण्ड में ठाकुरों (क्षत्रियों) को आम–बोलचाल में राजा और उनकी स्त्रियों या कुमारियों को रजऊ या रज्जू कहने का चलन है। भले ही वे राजा साहब कितने भी गरीब–कंगाल हों, दूसरों का हल हांक कर परिवार का पालन कर रहे हों, किन्तु उनकी पत्नियाँ उन्हें राजा नाम से ही सम्बोधित करती हैं। इसी तरह उनके पति उन्हें रज्जो, रजऊ या रज्जू कहेंगे, भले ही वे किसी और के यहाँ झाड़ू–पोंछा करती हों या गोबर–कूरा।

बुन्देली राजपूताना घसियारी भी हो तो भी उसका पति अथवा प्रेमी उसे रज्जो, रजऊ या रज्जू ही कहेगा। किन्तु अपनी फागों की नायिका रजऊ के सम्बन्ध में जब उनसे ही लोगों ने पूछ लिया तो उन्होंने जो उत्तर दिया, उसी से इस समस्या का हल देखिये–

नईयां रजऊ काउ के घर में, विरथा कोउ भरमें।
सब में है और सब से न्यारी, सब ठौरन में मन में।
को कय अलख–खलक की बातें, लखी न जाय नजर में।
ईसुर गिरधर रयें राधे में, राधा रयें गिरधर में।

ईसुरी ने एक फाग में कहा है –

देखी रजऊ काउ ने नइयां, कौन वरन है मुइयां।
कां तो उनकी रहस–रहन है, कां दए जनम गुसइयां।
पैलउं भेंट हमईं सें ना भई,भरी कृपा हम पइयां।
ईसुर हमनें रजऊ की फागें,कर दई मुलकन मइयां।

इस कथन की पुष्टि एक फाग से और हो जाती है, जब वे अपनी पत्नी से कहते हैं–

मानस होने के नईं होने, रजऊ बोल लो नोंनें।
जियत–जियत लो सबके नाते,मरें घरी भर रौंने।
कितनी बेरां प्राण छोड़ दए,की के संगें कौने।
ईसुर हात लगे न हंड़िया,आवै सीत टटौनें।

यहाँ एक फाग का उल्लेख कर यह स्पष्ट करना है कि ईसुरी ने बुन्देलखण्ड में रजऊ शब्द अपनत्व और आदर का सूचक होने का प्रमाण माना है। एक समय वे एक गाँव से निकल रहे थे, शाम हो जाने के कारण रात्रि विश्राम करने की जरूरत पड़ी तो वे एक ठकुराइन के यहाँ गए और उनके घर के सामने लगे पेड़ के नीचे डेरा जमा कर एक फाग लिखकर ठकुराइन के पास भेजी। देखिए वह फाग –

नीके लागें दिव्य दुआरे, रानी रजऊ तुम्हारे।
आंगू कुआं बनी दालानें, देत पारुआ पारे।
साजे रूख देख के हमने, डेरा इतै उतारे।
ईसुर इतै अस्त भये सूरज, उतै पगन सौं हारे।

उपरोक्त फाग द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि ईसुरी की साहित्यिक नायिका न तो धौर्रा के ठाकुर जगतसिंह की बेटी रज्जो है और न माधौपुर के प्रताप की पत्नी रज्जो। कुछ लोगों ने इस समस्या की तह में टोह निकालने का उपक्रम किया और उन्होंने ईसुरी जी की अर्द्धांगिनी राजाबेटी को ही रजऊ कह डाला। किन्तु ईसुरी की

उपरोक्त फाग से स्पष्ट है कि ईसुरी की साहित्यिक नायिका एक काल्पनिक पात्र है। वे अपनी कल्पना का नाम 'रजऊ' रखे थे और उसी की उपासना में लगे रहते थे।

चौकड़िया फागों में रस

ईसुरी का साहित्य वृहद फलकीय है, जिसे किसी सीमा में बाँध सकना सम्भव नहीं है। उन्होंने प्रायः सभी रसों में अपनी रचनाएँ लिखीं हैं। उनकी फागों में यथासम्भव सभी विषय तथा सभी रसों का समावेश देखने को मिलता है। रसराज श्रृँगार तो मानो उनके साहित्य का केन्द्र बिन्दु है। उन्होंने एक फाग में अपनी रचनाओं के बारे में कहा है –

फागें सुन आए सुख सोई, देई देवता मोई।
इन फागन में फाग न आवै, कइयक करौ अनोई।
भौंर मखन कौ उगलत रै गओ, कली–कली में गोई ।
बस भर एक ना बचो ईसुरी,सब रस लओ निचोई।

इसके पहले कि ईसुरी के साहित्य पर विस्तृत विवेचनात्मक व्याख्या की जाय, रसों के सम्बंध में भी प्राथमिक जानकारी उपलब्ध कराना जरूरी है।

विविध वादों के आधार पर रचित आधुनिक काव्य साहित्य चाहे वह पिंगल पद्धति से आबद्ध हो या मुक्त, व्यापक रूप से जनरुचि को आकर्षित नहीं कर सका, जितना लोक साहित्य। ईसुरी लोक साहित्य के कवि हैं, जिन्होंने बुन्देली भाषा में अपनी रचनाओं का सृजन किया है, जो आज के युग में भी जन की पसंद बना हुआ है।

विद्यापति तथा कबीर की तरह ही ईसुरी की रचनाएँ बहिरंग और अंतरंग दोनों में लोकभाषा की गहराई तक समाहित है। इनकी रचनाओं में हृदय प्रधान नैसर्गिक काव्य प्रवाह और मष्तिस्क प्रधान शास्त्रीय विधान दोनों का समन्वय देखने को मिलता है। ईसुरी की फागों में बुन्देली लोक साहित्य की समृद्धता प्रचुर है। रसों के बारे में राजशेखर के काव्य मीमांसा में काव्य–पुरुष की उत्पत्ति के सम्बन्ध में देवगुरु ने कहा है कि– 'प्राचीन काल में पुत्रेषणा से प्रेरित वाग्देवी ने गिरिराज पर तपश्चर्या की और कालान्तर में उन्होंने विरंचि के वर से काव्य–पुरुष को जन्म दिया। उसने तुरन्त ही उठकर मातृचरणों में वंदना करते हुए कहा –

यदेतद्वाड्मयं विश्वमयंमृत्यां विवर्तते
सोऽस्मि काव्य पुमानम्बपादौ बन्देय तावकौ।

जो यह नाना रूप विश्व दिखाई पड़ रहा है, यह आरम्भ में शब्दात्मक था। माँ! वही काव्य–पुरुष मैं आपके चरणों की वंदना करता हूँ।

माँ ने कहा– 'पुत्र इस छन्दोमयी वाणी के द्वारा तुम मुझे भी पराजित कर रहे हो, जो शब्द की जननी की भी जननी है । मैं इस पराजय में द्वितीय पुत्र–जन्म के आनंद का अनुभव कर रही हूँ।

पुत्रात्पराजयं द्वितीयं पुत्र जन्म।

अभी तक लोग गद्य जानते थे पद्य नहीं। अब तुम्हारी इस छन्दोमयी वाणी के पश्चात् छन्दोमयी रचनाएँ होंगी। पुत्र तुम श्लाघनीय हो। शब्द और अर्थ तुम्हारा शरीर, संस्कृत मुख, प्राकृत बाहुएं, अपभ्रंश जंघाएँ, पिशाची चरण तथा इन भाषाओं का मिश्रण हृदय है। तुम सम, प्रसन्न, मधुर, उदार और तेजस्वी हो। उक्तिपूर्ण तुम्हारा वचन है, रस आत्मा है, छन्द रोम हैं, प्रहेलिकाएँ वाणी विलास हैं तथा अनुप्रास उपमादि तुम्हें भूषित करने वाले अलंकार हैं।

इस तरह माँ वीणापाणि उस काव्य–पुरुष को सुरक्षित रख स्नान करने चली गईं। इधर शुक्राचार्य जी निकल पड़े और उसे अनाथ समझकर दयार्द्र हो अपने आश्रम में ले गए। उस काव्य–पुरुष बालक ने उन्हें विस्मय में डालते हुए उसी छन्दोमयी वाणी में कहा–

या दुग्धापि न दुग्धेव कवि दोग्धृभिरन्वहम्।
हृदि नः सन्निधताम् सा युक्तिधेनुः सरस्वती।।

अर्थात् जो सदैव कवि दोहकों के द्वारा दुही जाने पर भी अदुही सी बनी रहती है, वही सूक्ति धेनु सरस्वती हमारे हृदय में वास करे।

शुक्राचार्य तभी से कवि कहलाने लगे। उधर सरस्वती ने स्नान से लौटकर जब अपने पुत्र को वहाँ न पाया तो उसकी याद में करुण क्रन्दन करने लगीं। अनायास महर्षि वाल्मीकि ने आकर उन्हें सारी कथा सुनाई और शुक्राचार्य के आश्रम में ले आए। वे पुत्र को पाकर प्रसन्न हुईं। उन्होंने महर्षि को कवि होने का वरदान देकर विदा किया।

अग्नि पुराण में वाग्विदग्धता की वक्रोक्ति से उत्पन्न चमत्कार को प्रधान और रस को काव्य का प्राण माना है ।

वाग्येदग्ध्यं प्रधानेति रस एवात्र जीवितम।

शुद्धोदनि को भी यही मान्य है।

अलंकारस्तु शोभायाम् रसः आत्मा परे मनः।

अर्थात् काव्य को शोभित बनाने के लिए अलंकार हैं, उसकी आत्मा तो रस ही है। रस की व्युत्पति है–**' रहस्ये इति रसः।'** जो आनंद दे वही रस है। रस को ब्रह्मानन्द का सहोदर माना गया है। रस वास्तव में वेदान्त प्रसिद्ध बह्म की भाँति अखण्ड और अभेद्य है।

पढ़ लिख अथवा देखकर होता जो आनंद।
कहते हैं रस काव्य में ज्यों गुल में मकरंद।
नायक एवं नायिका, मगन होंय रति भाव।
तब जानो श्रृँगार रस जिसमें रूप प्रभाव।

भरत मुनि के अनुसार रस आठ हैं। विश्वनाथ और मम्मट ने आठवीं संख्या पर विराम देकर 'शान्त' को भी नवाँ रस मान लेने की अनुसंसा की है –

श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानकाः।
वीभत्सोऽद्भुत संज्ञो चैत्यष्टौ नाट्येरसाःस्मृताः।
निर्वेद स्थायिभऽस्ति शान्तोपि नवमोरसः। (मम्मट)
श्रृँगार हास्य करुण रौद्र वीर भयानकाः
वीभत्साऽद्भुत इत्यष्टौ रसाः शान्तस्तथा माः। (विश्वनाथ)

इस प्रकार कुल आठ रसों में एक रस शान्त जोड़कर नौ रस मान लिए गए हैं। वर्तमान में एक और रस को मान्यता प्राप्त हुई है, जो वात्सल्य नाम से स्वीकार किया गया है। अतः कुल दस रस शास्त्रीय मान्यता प्राप्त हैं।

रसों की उत्पत्ति के विषय में जो विवेचना दी गई है, उसके अनुसार अक्षर, अज, विभु और सनातन ब्रह्म के सहज आनन्द की यह अभिव्यक्ति चैतन्य, चमत्कार और रसमयी होती है। उसके आदि विकार को अहंकार कहते हैं, जिससे अभिमान और ममता का आविर्भाव हुआ। भुवन व्याप्त इस ममता संवलित अभिमान से रति की उत्पति हुई। यह रति श्रृँगार रस की जननी है। तत्पश्चात् तीक्ष्णता से रौद्र, गर्व से वीर और संकोच से वीभत्स रस की उत्पत्ति हुई। अतः रसों की उत्पत्ति के अनुसार रस क्रम इस प्रकार है– श्रृँगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शांत और वात्सल्य।

भरत मुनि के अनुसार संसार में जितनी पवित्र, कोमल, उज्ज्वल और सुन्दर

वृत्तियाँ हैं, ये सभी श्रृँगार से ही प्रस्फुटित होती हैं। भोजराज ने तो कहा है कि– श्रृँगार रस सर्वश्रेष्ठ रस है। इसीलिए इसे रसराज कहा गया है। रसों का विस्तार सहित वर्णन करना यहाँ इतना आवश्यक नहीं है।

सहृदय के ह्रदय में स्थाई भाव, विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भाव जब अपनी परिपकता अवस्था में आकर आनंद की अनुभूति कराते हैं तो रस की उत्पत्ति होती है। आचार्य भरत मुनि के अनुसार रस साहित्य का प्राण है। रस रहित काव्य को काव्य नहीं कहा जा सकता। विभाव, अनुभाव, संचारी भावों के संयोग से सहृदय के ह्रदय में स्थाई भाव रस के रूप में निष्पत्त होता है ।

रस के मुख्य अवयव

रस के मुख्य अवयव चार हैं– 1. स्थाई भाव, 2. विभाव, 3. अनुभाव 4. व्यभिचारी भाव (संचारी भाव)

स्थाई भाव – सहृदय के अन्तःकरण में जो मानोविकार वासना रूप से सदा विद्यमान रहते हैं तथा जिन्हें अन्य कोई भी अविरुद्ध अथवा विरुद्ध भाव दबा नहीं सकता, उन्हें स्थाई भाव कहते हैं। यही स्थाई भाव, विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों द्वारा चरमानुभाव की स्थिति में उद्वेलित होकर रस का रूप धारण करते हैं। इन्हीं स्थाई भावों के अनुसार रसों का वर्गीकरण किया गया है –

स्थाई भाव	**–**	**रस**
रति	–	श्रृँगार
हंसी	–	हास्य
शोक	–	करुण
क्रोध	–	रौद्र
उत्साह	–	वीर
भय	–	भयानक
घृणा	–	वीभत्स
विस्मय	–	अद्भुत
निर्वेद	–	शान्त
स्नेह (वत्सल्य)	–	वात्सल्य

विभाव– भरत मुनि ने कहा है –

बह वो अर्था विभावयन्ते वायंमिनयाश्रयः।
अनेन यस्मास्ते नायं विभाव भूति कथ्यते।

अर्थात् जो वाणी और अंगों के अभिनय के आश्रय से अनेक अर्थों का विभावना (उद्‌बोधन) या अनुभव कराते हैं, उन्हें आस्वाद के योग्य बनाते हैं। उन्हें विभाव कहते हैं। विभाव से अभिप्राय उन वस्तुओं या विषयों के वर्णन से है, जिनके प्रति किसी प्रकार का भाव या संवेदना होती है।

विभाव दो प्रकार के होते हैं– आलम्बन विभाव और उद्दीपन विभाव। **आलम्बन विभाव** – वे भाव हैं जिनका रत्यादि स्थाई भाव आलम्बन लेकर रस के रूप में उत्पन्न हो जाते हैं। जैसे –श्रृँगार रस में नायक–नायिका, युद्ध क्षेत्र में वीर रस में अर्जुन और कर्ण। आलम्बन विभाव के दो भेद हैं– विषय और आश्रय। जिस पात्र के प्रति किसी के भाव जाग्रत होते हैं, वही आलम्बन होता है, जैसे– महाभारत युद्ध में कर्ण को देखकर अर्जुन के मन में उत्साह उत्पन्न होता है उस समय कर्ण आलम्बन का विषय होता है। आश्रय रस का आधार माना जाता है। जैसे वीर रस में महाभारत युद्ध में कर्ण को देखकर अर्जुन के हृदय में उत्साह भाव उत्पन्न होता है, वहाँ पर अर्जुन आश्रय है। **उद्दीपन विभाव–** आश्रय के ह्रदय में जाग्रत हुए स्थाई भाव को, जो भाव और अधिक उद्दीप्त करते हैं, बढ़ाते हैं, उन्हें उद्दीपन विभाव कहते हैं। जैसे– श्रृँगार रस में चाँदनी रात, फूलों की सुगंधित हवा, एकान्त प्रदेश, नदी का किनारा उद्दीपन विभाव हैं।

अनुभाव– सह्रदय (आश्रय) के शरीर में उत्पन्न होने वाली शारीरिक चेष्ठाएं अनुभाव कहलाती हैं। ये विभाव के बाद उत्पन्न होते हैं। आश्रय की वे वाह्य चेष्ठाएँ जो स्थाई भावों को जगाकर इनका अनुभव कराती हैं। उन्हें अनुभाव कहते हैं। जैसे– पुष्पवाटिका में श्रीराम का सीता को टकटकी लगाकर देखना। आँखों को तिरछा करना तथा मुस्कराना आदि अनुभाव हैं।

अनुभाव के दो भेद हैं– **सात्विक अनुभाव–** स्तम्भन , लज्जा, प्रलय, स्वेद, कम्पन, स्वरभंग, अश्रु और **कायिक अनुभाव–** भौंहों का मटकाना, हाथ–पैर चलाना आदि।

व्यभिचारी भाव (संचारी भाव)– स्थाई भाव में रस निष्पत्ति करके कभी स्थिर न रहने वाले मनोविकार या चित्त वृत्तियाँ ही संचारी भाव कहलाते हैं। ये संचरण करते रहते हैं, जैसे बिजली की चमक, समुद्र की लहरें आदि। इनकी संख्या 33 मानी गई है– निर्वेद, ग्लानि, शंका, श्रम, धृत्ति, जड़ता, हर्ष, दैन्य, उग्रता, चिन्ता, त्रास, आसूया, अमर्ष,

स्मृति, मरण, दम, स्वप्न, निद्रा, विवाद, क्रीड़ा, अपस्मार, मोह, मति, आलस्य, आवेग, वितर्क, अवहित्था, व्याधि, उन्माद, विषाद, औत्सुक्य, चंचलता और गर्व।

ईसुरी के साहित्य का बारीकी से अध्ययन करने से देखने में आया है कि ईसुरी की अधिकांश फागों में श्रृँगार रस की प्रधानता है। 53 वर्ष की उम्र के बाद जब वे मथुरा–वृन्दावन गए और उन्होंने भगवान श्री कृष्ण और राधा की भक्ति में लीन लोगों से भेंट की तो उनके अन्दर का भक्त जाग्रत हुआ और उन्होंने भक्ति रस में पगीं हुई फागों का सृजन किया ।

इसके पहले ईसुरी की श्रृँगारिक फागों पर प्रकाश डाला जाय, प्रथमतः रसराज श्रृंगार रस की एक झलक दी जाना आवश्यक एवं उचित समझकर यहाँ दी जा रही है –

श्रृँगार रस

इसे रस राज कहा जाता है। सहृदय के हृदय में विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से पुष्ट हुआ स्थाई भाव रति जब अपनी परिपक्वता अवस्था को प्राप्त होता है, तो श्रृँगार रस की उत्पत्ति होती है।

श्रृँगार रस में सभी सात्विक अनुभावों का पूर्ण परिष्कार होता है। भावों का उल्लेख केवल इसी रस में किया जाता है तथा उग्रता, मरण, आलस्य और जुगुप्सा को छोड़कर शेष सभी संचारी भावों का इसमें समावेश हो जाता है। इस रस में नायक और नायिका दो देह एक प्राण बन जाते हैं। उनका द्वैत भाव समाप्त हो जाता है। आलम्बन और आश्रय का यह अद्वैत भाव अन्य किसी रस में नहीं मिलता। अतएव इन दृष्टियों से भी उसका रस राजकत्व सवर्दा सिद्ध हो जाता है।

श्रृँगार रस का स्थाई भाव रति है और इसका व्यवहारिक रूप प्रेम है। प्रेम (रति) के अन्तर्गत काम, वात्सल्य, आत्म समर्पण, आत्मरक्षा, समाज प्रियता आदि मनोवेग अन्तनिर्हित हो जाते हैं।

प्रेम एक मनोवेग है जो एक स्थिर एवं सुव्यवस्थित मनोदशा है, जिससे वात्सल्य भाव, काम, आत्म समर्पण तथा आत्मप्रतिष्ठा का सुखद संयोग रहता है।

श्रृँगार रस का प्रेम के साथ सीधा काया और छाया का सम्बन्ध है। अतः श्रृँगार रस समस्त सुखों का मूल है। यह प्रेम प्रभाव का अधिष्ठाता और प्रीति का प्राण है।

श्रृँगार रस के दो प्रकार माने गए हैं–

संयोग श्रृँगार – जिसके अन्तर्गत नायक–नायिका के नाना हाव–भाव अनुराग की चेष्टाएँ, परस्पर अवलोकन, मिलन और आलिंगन आदि आते हैं।

प्रिय–प्रेमिका मिलन यदि, काव्य मध्य जो होय।
तहं संयोग श्रृँगार रस, विग्य जानते सोय।

वियोग श्रृँगार– इसके अन्तर्गत शंका, उत्सुकता, मद, ग्लानि, प्रमाद, चिन्ता असूया, निर्वेद और स्वप्न आदि संचारी भाव परिपक्वता स्थिति को प्राप्त कर नायक–नायिका का एक दूसरे के विछोह में, मधुर स्मृतियों को याद कर–करके तड़पते हैं, अर्थात् उनके प्रेमभाव को याद करते हुए तड़पते हैं।

नायक एवं नायिका होय परस्पर दूर।
तब वियोग श्रंगार रस होय विरह भरपूर।

ईसुरी की फागें श्रृँगार रस में पगी हुईं दृष्टिगत होती हैं। उन्होंने अपनी नायिका रजऊ को केन्द्रित कर शाश्वत श्रृँगार का जो अद्‌भुत चित्रण किया है, वह लाजवाब है। इस प्रसंग पर उनकी कुछ फागों को संदर्भित किया जाना आवश्यक समझता हूँ।

ईसुरी की फागों में श्रृंगार रस की प्रधानता देखने को मिलती है। सर्वप्रथम कुछ फागों में संयोग श्रृंगार के प्रतिबिम्ब देखें –

मोरी रजऊ से नौनों कोहै, डगर चलत मन मौहै।
अंग–अंग में कोल–कोल कें, ईसुर रंग भरो है।
मन को हरन गाल कौ गुदना, तिल सौ तनक धरौ है।
ईसुर कात उठन जोबन की, विरहा जोर करो है।

इसमें कवि अपनी नायिका के रूप श्रृँगार का वर्णन करता है। मेरी नायिका (प्रेयसी) से अधिक सुन्दर कौन है? वह जब रास्ते पर चलती है तो मन को मोह लेती है। बनाने वाले ने उसके अंग–अंग में रंग ऐसे भरे हैं कि उसे देखकर मन में हुलाश उठती है। उसके गाल पर गुदा हुआ गुदना तिल सदृश दिखता है और उभरता सीना देख विरह सताने लगता है।

तोरे नैन मुलक उजियारे, हमें हेरतन मारे।
लगा भभूत करौ बैरागी, बाबा बना निकारे।

कइयक खां भिक्षुक कर दओ, कइयक दीन निगारे।
कइयक भए फकीर ईसुरी, इन बिन्नू के मारे।

नायिका रूप श्रृँगार वर्णन में ईसुरी का कोई जवाब नहीं है वे नायिका के नयनों की सुन्दरता के सम्बंध में कहते हैं कि ये नयन जिसे देख लें, वह घायल हो जाय। इतना ही नहीं, उसके प्राण भी चले जायें। अगर जीवित बच भी गया तो वह भभूत रमा कर बैरागी हो जायेगा, घर–द्वार छोड़कर भीख माँगता फिरे। नायिका की सुन्दरता को देखकर कौन दीवाना न हो जायेगा? रूप गर्विता का एक और सुन्दर चित्रण ईसुरी की फागों में से देखिए –

ऐसो बदन बनों बंधवारौ, रजऊ कौ डील दुआरौ।
पिउरी चढ़ी मसीली जागें, कव्जन ओर निहारो।
औलें तिहरी परें पेट में, माफक कौ गुदवारौ।
गोरे अंग स्यामली सारी, लगै लिपटतन प्यारौ।
ईसुर चली आउतीं जैसें, गज घूमत मतवारौ।

नायिका के शरीर की गठन का वर्णन करते हुए कहते हैं–रजऊ का दुहरा और बना हुआ गठीला वदन अति लुभावना लग रहा है। स्थूल होती पिंडलियाँ, मांसल जंघाएँ अति सुन्दर लग रहीं हैं। इस तरह उनकी सुन्दर नायिका आती हुई ऐसे लग रही है, जैसे कोई मतवाला हाथी मस्ती में अपनी सूंड लहराता हुआ चला आ रहा हो। नायिका के नेत्र श्रृँगार वर्णन में ईसुरी कहते हैं –

दोई नैनन की तरवारें, प्यारी फिरे उबारें।
अलेमान गुजरात सिरोही, सुलेमान झक मारें।
ऐंचन बाढ़ म्यान घूंघट की, दे काजर की धारें।
ईसुर स्याम बरकते रइयो, अंधयारे उजयारैं ।

ईसुरी ने इस फाग में पूर्णोपमालंकार का प्रयोग किया है। उन्होंने नायिका के नेत्र रूप श्रृँगार का वर्णन करते हुए कहा है कि रजऊ के नेत्र तलवारों की तरह नुकीली धार वाले पैने हैं। वे घूँघट में से ऐसे बार करते हैं, जैसे म्यान से निकलकर तलवार। इस फाग में नेत्र उपमेय में तलवारों की ऐंचन में बाढ़ का घूँघट में म्यान का तथा काजल में धार का आरोप करके उपमेय और उपमानों में अभेद की स्थापना की है। कितना सुन्दर सांगरूपक बांधा है। दूसरी कड़ी में अलेमान गुजरात सिरोही और सुलेमानी तलवारें नैनों की तलवारों के समान झक मारती हैं, यही उपमेय में उत्कर्ष से व्यतिरेक बन गया है।

ईसुरी की फागों में रसराज की झलक के साथ–साथ बुन्देली संस्कारों के भी भरपूर दर्शन मिलते हैं । बुन्देलखण्ड के आभूषणों का बड़ी चतुराई के साथ प्रयोग करते हुए उन्होंने नायिका श्रृँगार का वर्णन किया है –

पैरें रजऊ ने प्रान हरन के, ककना कोमल करके।
बंईयन पै बाजूबंद बांदे बिगरू संग बरन के ।
छापें छलन बजुल्ला, छल्ला, गजरा, कैउ तरन के।
तक तीर से लगत ईसुरी, ये नग तरन–तरन के।

यहाँ बुन्देली आभूषण की जानकारी देना आवश्यक समझता हूँ। बुन्देली लोक संस्कृति में आभूषण सौन्दर्य के पूरक हैं। महाकवि केशव ने कहा है–

जदपि सुजाति सुलच्छाना, सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषण बिना न राजहि, कविता वनिता मित्र।

बुन्देलखण्ड में परम्परागत अनेक आभूषण हैं, जो नारी के सौन्दर्य को निखारते हैं तथा आयुवर्द्धक होते हैं। ऐसा विश्वास है कि शरीर पर धारण की गई धातु व रत्न का सम्बन्ध राशि के ग्रहों से होता है, जो ग्रहों के प्रतिकूल प्रभावों को अनुकूल बनाकर विपरीत परिस्थितियों से रक्षा करते हैं।

आभूषण पहनने का प्रचलन समाज के सभी वर्गों में पाया जाता है। केवल सामर्थ्य अनुसार स्थिति परिवर्तित हो जाती है। जहाँ धनी वर्ग स्वर्ण व रत्नजडित आभूषण पहनते हैं, वहीं दूसरे लोग चाँदी तथा गिलट जैसी अन्य धातुओं के आभूषणों को पहनकर अपनी श्रृँगारिक इच्छाओं की संतुष्टि करते हैं।

सोना,चाँदी, गिलट, ताँबा, पीतल, काँसा तथा काँच के रंग–बिरंगे गहने बुन्देलखण्डी नारियों को आभूषित करते हैं।

बुन्देलखण्ड के मांगलिक अवसरों पर गहने पहनने का प्रचलन है और आभूषण दान एवं उपहार में देने का भी। बुन्देली लोक गीतों में गहनों का यदा–कदा उल्लेख मिलता है, जिनके कुछ उदाहरण निम्नानुसार है –

मांगलिक कार्यों में देवी गीतों में आभूषणों का उल्लेख है, देखिए –

माई तोरी धूरा भरी पैजनियाँ।

ये पैजनियाँ पाँव में पहनने वाले आभूषण हैं।

मोसे भुवन चढ़ो न जाय लांगुरिया,
एड़ी में धमक लगे पायल की।

पायल भी नारियों के पैरों में पहनने वाले आभूषण हैं। बुन्देलखण्ड में मनुष्य के जीवन में सोलह संस्कार होते हैं तथा नारियों के सोलह श्रृँगार। पुत्र जन्म के अवसर पर गहने उपहार में देने का प्रचलन है –

छूटा न ल्याई पौंचिया न ल्याई।
पटवा को यार संगई लैके आई।
चूरा न ल्याई करदौनी न ल्याई।
सुनरा कौ यार संगई लैके आई।

ननंद–भौजाई से नेग में माँगती है –

दै राखो भौजी मोहे कंकना लालन के भये।

तब भाभी कहती है –

मांगों–मांगो ननंद बैया जो मांगों सो देय।
जेवर तौ जिन मांगों बैया दुब्बन को सिंगार है।
जेवर में से नथनी ले जा, सरजा लैहों कटारी।

जब पुत्र जन्म के बाद बुन्देली नारी कुँआ पूजन को जाती है, तब सोहर गीत गाती है –

हम पैरे मूंगन की माला, हमारी कोऊ गगरी उतारो।

बुन्देलखण्ड में विवाह संस्कार में तो आभूषण के बिना कोई नेग चार होता ही नहीं है, वर–वधू दोनों को आभूषण से सजाया जाता है–

कानन कुण्डल मोरे बनरे जू खाँ सोहैं।
सो गालन बिच मुतियन लर सरकत हैं।
केसर खौरें मोरे राम जू खौं सोहैं।
सो गल बिच गोप जंजीर बसत हैं।
कंचन चूरा मोरे राम जू खौं सोहैं ।
सो हाथन बिच–बिच गजरा सजत हैं।

बुन्देलखण्ड में वैवाहिक कार्यों में हास–परिहास बहुत होता है और नारियाँ इन्हीं हास– परिहासों में आभूषणों का उल्लेख कर गारियाँ गाती हैं –

भरी सभा में बैठे समधी जी, बड़े–बड़े झल्ले मारे रे।
गोप–गुंज भारे की पैरें, लर भारे की डारैं रे।

बुन्देलखण्ड में स्थान विशेष को आभूषण विशेष के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त है, जैसे–

1. *पन्ना हीरा की खान,*
   मोरी बेंदी में हीरा जड़ा दो।

2. *दतिया की बजनू बाँक,*
   पैजना अजब बनो रे चरखारी को।

वर्षा ऋतु में गाये जाने वाले राछरों में भी आभूषणों का उल्लेख मिलता है–

खेलो–खेलो नदी जमना तीर दुलारौ हरिसंग खेलो।
माथे को बीज जड़ाये बाकी बेंदन की छवि न्यारी।
कान तरकुला झुमकन वारे खुटलन की छवि न्यारी।
गरे खंगवारों गुंजन की बाकीं हँसली की छवि न्यारी।
बाहन बोटा झंझरी बाकें बाजूबंद की छवि न्यारी।
हाथन कंगन जड़ाऊ बारों,बांके कंकण की छवि न्यारी।
कम्मर करधौनी बाकी झंझरी की छवि न्यारी।
पाँवन पैजनियाँ बाके बिछियन की छवि न्यारी।

बुन्देलखण्ड में कार्तिक मास के व्रत का बड़ा महत्त्व है। कतकारियों द्वारा गाये जाने वाले कार्तिक गीतों में आभूषणों का वर्णन देखिये –

जिनकी हम दासी बेई न मिले।
कानन कुण्डल मोरे ठाकुर जी को सोहैं।
गले माल हरि डारैं गले हरि डारैं बेई न मिले।
जिनकी हम दासी बेई न मिले।
मुतियन लटकन मोरे ठाकुर जी को सोहैं।
हाथन कंगन बाजत प्यारे बेई न मिले।

होली के रसियों में भी गहनों का बड़ा मनोहारी दृश्य देखने को मिलता है –

रसिया को नार बनाओ री रसिया को।
बइयाँ भर बाजूबंद लै के।
माथें बैंदी लगाओ री रसिया को।
पाँव पैंजना घुंघरू वाले।
पाँव पैंजना ककरन डारे।
लै बिछिया पैनाओं री रसिया को।

बुन्देली नायक–नायिका प्रसन्नता का इजहार करते हुए आभूषणों का कैसा उल्लेख करते है,देखिये –

बिदियाँ गढ़ी सुनार ने दमकल माँझ लिलार,
बिंदियाँ तो लै दई, रसीले छैल ने हो।

अगर पति आभूषण नहीं लाता तो देखिये –

रिसाई राजा जेई दुःख से रे,जेई दुःख से रे,
पिया कबहुँ न लाए गाने गुरिया।

इसी तरह और भी बुन्देली पारम्पारिक गीत है, जिनमें गहनों का वर्णन देखने को मिलता है। कुछ उदाहरण देखिये –

1. *नींदत में बारी कौ कूरा,*
   हिरा आई सोने के चूरा।

2. *धन सपरत बेला ताल,*
   मछरिया माथे की बिंदियाँ ले गई।

3. *ककनवा की खिलिया न खुले रे,*
   खिलिया न खुले रे।
   चूमें बाजू में भारी बाजूबंद रे,
   ककनवा की हो।

4. *ककनवा तौ गाढ़े हते रे,*
   गाढ़े हते रे, ढीले पर गए,
   बलम जू के देश रे।
   ककनवा– अरे हो।

5. *सैंया ले दो करधनिया मैं तोसै बिरजी।*
जुआ में हार दई बिंदिया मोरी अबलों नहीं उठाई।
कंगना कतुना चूडी के बिन, सूनी लगे कलाई।
बिक गई नाक की नथनियाँ मैं तोसैं बिरजी।

6. *काका चकरी से लाये हो रसवारी के सुअना।*
माई खौ हरवा,बहन को कठला,
गोरी धनै को कछू न ल्याये हो।

7. *माथे शीशफूल सोहें कानन करन फूल।*
अम्बर अतुल सुख मूल रंगना के हैं ,
कवि हरिदेव कंठ लल्लरी, बिचौरी हरा,
भुजन बजुल्ला बरा कर ककना के हैं।
छीन कटि करधनी नितम्बन संवारी छवि।
गति मतवारी कुच कुंभऊ धनाके हैं।
लोकन सनाथे जे झनाके पैजना के हैं।
झांझन के ककरन के परत छनाक हैं।

बुन्देलखण्ड के पारम्परिक आभूषण अंग–प्रत्यंग में शोभायमान होते हैं तथा नर –नारी की सुन्दरता में चार चाँद लगाते हैं। बुन्देली संस्कृति में महिलाओं की माँग में सिंदूर, ललाट में रोरी का तिलक,काँच की बिन्दी, आँखों में काजल, हाथों में चूड़ियाँ, पैरों की अंगुलियों में बिछिया पहनना अनिवार्य रहता है, क्योंकि ये सभी सुहागवती होने के प्रतीक हैं। बुन्देली नारियों के नख से शिख तक अंग–प्रत्यंग के गहनों का वर्णन देखिये –

सिर के आभूषण

बुन्देली सुहागिन के सिर के आभूषण हैं– बीज, शीशफूल, बेंदा, बेंदी, बंदिया, टिकली, दावनी, टीका, सिरजेब, झूमर, केकरपार, रेखड़ी आदि। बीज और बेंदा को बाँधने के लिए सोने या चाँदी की सांकल बनवाई जाती है, जो बंदिया कहलाती है। बंदिया दोनों तरफ कान के पास तथा बीच में मांग की सीध में चोटी या जूड़ा में बाँधी जाती है, जिससे आभूषण सधे रहते हैं।

बुन्देली आभूषणों के सम्बन्ध में फाग साहित्य के कवि भूरे मिसर ने कहा है–

बैंदा बसे जुलम करें बूँदा, बूँदा ने जब से दओ बूँदा।
फैंली इस्कबाज सब मो लये, पंडित मोलये सूदा।
मोलये जती–सती संन्यासी, मोलये मुखिया मूंदा।
उपमा दैंय कौन कबि इनकी,उपमा कौ धर रूँदा।
भूरे मिसर लिखौ नदनंदन, चित्त फिरै कूँदा कूँदा।

सिर माथे के कुछ खास–खास गहने इस प्रकार है –

बैंदा– सोने का जड़ाऊ बैंदा बनता है, जिसमें नग जड़े होते हैं, तीन डोरा कुन्दन में बंधे रहते हैं।

टीका– यह सोने की पत्ती होती है जो दो से चार अंगुल तक लम्बी होती है। दोनों तरफ कुन्दा बने होते है जिसमें डोरा बांधा जाता है।

तिलक– यह सोने का बना होता है जो सोने की सांकर से लिलार में बांधा जाता है।

टिकुली–ये गोलाकार, पलियादार होती हैं, जो सोने या चाँदी की बनी होती है, जो रार से चिपकाई जाती है।

खुसमा– ये विवाह में चढ़ाये जाने वाले गहने हैं, जो सोने–चाँदी या गिलट का बना होता है।

दावनी – से सोने–चाँदी, मोती की लरें हैं जो माथे के बीचों बीच से दोनों कानों तक जाती हैं। दावनी के सम्बन्ध में मनभावन की फाग देखिये –

सिर पै दमक दावनी सोहे, मनमोहन मन मोहे।
झालर झूम रही मोतिन की, हीरालाल गसो है।
खासो खुबोमांग के नैचें, बूंदालाल लगो है।
तापर आड़ खैंच सैंदुर की, मोहन जोड़ लसो है।
मनभावन नित दैंय राधिका, तीनों लोक में को है।

शीशफूल

शीश फूल तीन गोला के बराबर सोने के कुन्दों से जुड़े रहते हैं तथा जरी या डोरा से बंधे रहते हैं। ये ठोस, जड़ाऊ, चपरा भरे होते हैं। ये माथे पर पहने जाते हैं। मन भावन ने शीशफूल के सम्बन्ध में कहा है –

पटियाँ मन हरबे खाँ पारें, रुच–रुच मांग समारें।
चुटिया चुस्त बंदी चुटला से, गुटिया कुच पै डारें।
ऊपर मांग भरी मोतिन की, शीशफूल को धारें।
मनभावन मन हरबे कारन, हर–हर बैर उतारें।

बीज– बीज सोने के जड़ाऊ और ठोस तथा चपरा भरी होती है। मालवा क्षेत्र में इसे बोर कहा जाता है। यह तीन सांकरों या डोरा से माथे पर बांधा जाता है।

सिर पेंच –ये पुरुष के उपयोग के आभूषण हैं। ये सोने के सादा बने होते हैं तथा रत्नजड़ित होते हैं। इनमें कलगी खोंसने के लिए जगह बनी होती है। साफा, टोपी या पाग में सिरपेंच लगाये जाते हैं।

कौकर पान –सोने या चाँदी के गोल छोटी लहरियादार बारीक सुरमा से कटे होते है। महिलाएँ इसे माँग में पहनती हैं।

छैल रिजौनी –ये भी सोने या चाँदी के बने होते हैं। एक कुन्दा से सांकर द्वारा चुटिया से बंधे रहते हैं ।

नाक के आभूषण

नारी की सुन्दरता नाक से आंकी जाती है, वैसे भी नारी को परिवार की नाक कहा जाता है। भ्रांतिमान अलंकार को परिभाषित करते हुए कहा गया है –

नाक का मोती अधर की कान्ति से,
बीज दामिड़ का समझकर भ्रांन्ति से।
देखकर सहसा हुआ शुक मौन है,
सोचता यह दूसरा शुक कौन है।

बुन्देलखण्ड में नाक में कई गहने पहने जाते हैं, जिनमें पुंगरिया, दुर बुलाक, बेसर, दूलरी, नथनी आदि प्रमुख हैं। नाक के जेवरों के बारे में ईसुरी ने कहा है –

दुर से लगै लाड़लो चेरा, रजऊ रंगीली तेरा,
मजेदार मौतिन को गुच्छा,टोड़ी ऊपर ढेरा।

लुर–लुर परत कपोलन के ढिग, सुन्दर आनन फेरा,
हीरा लाल जड़े सिरजा में, मुख पै होत उजेरा।
ईसुर श्याम तनक न छोड़े, नजर गई है भेरा।

नाक के आभूषणों का विवरण निम्नानुसार है –

दुर– सोने की झुलनीदार दुर महिलाएँ बड़े चाव से पहनती हैं।

बेसर– दुर में जड़ाऊ या मोतिन की बनी होती है।

सुरजा– ये नाक के आभूषणों में बहुत महत्त्वपूर्ण है। ये जड़ाऊ होती है तथा मोती बरे रहते हैं।

पुंगरिया– पुंगरिया नाक में पहना जाने वाला प्रमुख गहना है। यह छोटी, बड़ी तथा विभिन्न आकार–प्रकार की होती है। ये सादा तथा जड़ाऊ हर प्रकार की बनती है। बनावट के आधार पर पुंगरिया गर्रादार, कलस्याऊ, नगदार, डेमलकाट आदि प्रकार की होती है।

पुंगरिया माता–पिता द्वारा विवाह के समय बेटी को दी जती है। बुन्देलखण्ड में नंगी नाक अशुभ मानी जाती है तथा नाक छेदन एक पवित्र संस्कार के रूप में किया जाता है। कन्या का 3, 5 या 7 वर्ष की उम्र में नाक–कान छेदन कराया जाता है। पुंगरिया के लिए कवियों ने अनेक प्रकार से रचनाएँ लिखीं हैं, जिनमें ईसुरी की रचना देखिये–

बनके आज पुंगरिया आई, देखो जिजी हमाई,
हीरामनी कनी लगवाकैं, नौ रतनन सजवाई।
ऐसी करी तुमारे देवरा, सुघर सुनार बनाई।
ईसुरी अब जिन जिन ने देखी, तिन तिन ने साराई।

कील– आजकल महिलायें बड़ी–बड़ी पुंगरिया न पहनकर छोटी–छोटी कीलें पहनने लगी हैं। ये बहुत सुन्दर प्रकार की सादा या नग जड़ाऊ बनती हैं, इनको नीचे तरपलिया से कसा जाता है।

खुटियाँ– खुटियाँ पुंगरिया का ही छोटा रूप है। यह ज्यादातर सोने या चाँदी की बनी होती हैं तथा विभिन्न आकार–प्रकार की होती है।

बुल्लाख – बुल्लाख सोने का बना आभूषण है, जो नाक के दोनों नकुओं के बीच में पहना जाता है।

नथ– नथ बुन्देली आभूषणों में सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण गहना है। यह सोने के तार की बनी होती है। नथ पहनाने की रस्म होती है जो नारियों के जीवन में

एक विशेष महत्त्व रखती है। नथ विभिन्न आकार की बनती हैं तथा पहनाने वाले की हैसियत के अनुसार भी होती हैं।

बाली – छोटी–छोटी बेटियों को कनछेदन के बाद पतली–पतली बालियाँ पहनाईं जाती हैं। ये पतले तार की बनी होती हैं। सोने–चाँदी तथा तांबे की बालियाँ पहनने का रिवाज है बुन्देलखण्ड में।

फूल – ये पुंगरिया का ही एक प्रकार है जो सोने–चाँदी के बने होते हैं। बनफरी की लोदने नाक के बीचों बीच फूल पहनती हैं ।

टिप्पो– टिप्पो भी पुंगरिया की तरह का ही गहना है, जो फूल की तरह ही बना होता है। इसे नारियाँ नाक के टौपै के बीचों बीच पहनती हैं। ये सोने तथा चाँदी के बने होते हैं। सागर–दमोह जिले में टिप्पो पहनने का रिवाज है।

कान के आभूषण

नारी के अंग–प्रत्यंग आभूषणों से सजाये जाते हैं तो कान भी क्यों अधूरा रह जाय। कानों में पहने जाने वाले आभूषणों में कर्णफूल, लोला बाली, पत्रा, यान, ऐरन, लोंग, तरकिया, कुंडल, बिजरी, झुमकी, कनौटी, ढारें आदि पहने जाने का रिवाज है। कानों के आभूषण निम्नानुसार हैं–

कर्णफूल – कान का यह आभूषण बुन्देलखण्ड की नारियों का प्रमुख आभूषण है। ये सोने–चाँदी के बनते हैं। इनकी बनावट के आधार पर ये छीताफली, अंतखड़ा, रबादार, झुमकादार कई प्रकार के होते हैं। इनका ऊपरी भाग गोलाकर, कलशाकृति का होता है तथा नीचे एक कुन्दा लगा रहता है, जिसमें उल्टे आकार की छोटी सी टोकड़ी डली रहती है। इसके नीचे छोटे–छोटे सोने के रोना या सफेद लाल रंग के मनके डले रहते हैं। कर्णफूल के ऊपर एक कुन्दा लगा रहता है, जिसे सोने की सांकल से बालों में फंसाया जाता है। कर्णफूल के सम्बन्ध में कवि अनुचर ने कहा है–

कान करन फूल कंचन के, दमके प्रीत बरन के,
लोलक ललित कपोलन ऊपर, लटकत चित्त हरन के।
फिटियन ऊपर देख कनौती, जीब होत रनबन के।
हेम विचित्र बिचौली कंठन, छूटा कई तरन के।
अनुचर जल जमाल हिय राजे, शिव सिर गंगधरन के।

ढारें– ढारें भी कान के आभूषणों में महत्त्वपूर्ण हैं। ये सोने या चाँदी के गोलाकार या चपटे बने होते हैं। इनके साथ सांकरे भी पहनी जाती हैं।

लटके दोई गालन पै ढारैं, रजुआ आंगन झारें
जारीदार लगे नये पखिया, तैरी सांकर डारैं
शीशफूल माथे पै बैंदा, ऊपर पटियां पारें।
ईसुर कहें दरस खाँ ठांड़े, रोजऊ छैला द्वारें ।

झेला – झेला कर्णफूल और ढारें के साथ–साथ पहने जाने वाले गहने हैं, ये भी सोने अथवा चाँदी के बने होते हैं।

कनौती – ये कान में पहनने वाली सांकरें हैं। इन्हें कहीं–कहीं कान चिड़ी भी कहा जाता हैं। ये सोने और चाँदी की बनती हैं।

झुमकी– बुन्देलखण्ड में झुमकी पहनने का खास प्रचलन हैं। ये अनेक प्रकार की बनती हैं, जिनमें गोला, चौखूंटी अठपायली तथा बोरा लगे रहते हैं। ये कर्णफूल के साथ भी पहनी जाती है, झुमकी में लटकन लगे रहते हैं। ये कर्णफूल के साथ भी पहनी जाती है।

बाली – ये सोने एवं चाँदी के तार की बनी होती है। कर्ण छेदन के बाद सर्वप्रथम बालियाँ पहनाईं जाती हैं।

तिगड़ी –ये सोने और चाँदी की बनी होती है, इनमें तीन गुरिया तार में गुंथे रहते हैं।

दुरबच्ची – ये छोटी बाली की तरह होती है, इनमें बोरा लगे रहते हैं। बोरों में ककरा और मोती लगाकर और भी आकर्षित बना दिया जाता है।

गुरखुरूँ – ये भी बोरा लगी बालियाँ ही होती हैं, किन्तु इनकी बनावट थोड़ी भिन्न रहती है।

मुरकी– ये सोने अथवा चाँदी के मोटे तारों से बनती हैं, जो कानन की लोंड़ी में ढीली पहनी जाती हैं।

खुटियाँ– खुटियाँ बुन्देलखण्ड में नर–नारी दोनों पहनते हैं। ये भी सोने या चाँदी की ही बनती हैं। इनमें पान, चिड़ी, ईंट, फूल, पत्ता और जड़ाऊ हीरा–मोती, नीलम लगाकर बनती हैं। ये छोटी तथा बड़ी हर प्रकार की बनती है।

सुराई – ये भी बाली की तरह की होती हैं, किन्तु इनकी मोटाई बालियों से अधिक होती है।

बाला – ये बड़े–बड़े गोलाकार तार से बने होते हैं, इनमें ककरा, मोती, मूंगा लटके रहते हैं। बुन्देलखण्ड में बाला नर–नारी दोनों पहनते हैं।

तिगड़ी– ये सोने और चाँदी की बनी होती हैं, इनमें तीन गुरिया तार में गुंथे रहते हैं।

कुण्डल– कुण्डल बाला का ही बड़ा रूप होता है। इनमें भी मोती लगे रहते हैं। ये सोने–चाँदी के बनते हैं। कुण्डल दूल्हा के गहनों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है–

कानन कुण्डल तुम पैरों राजा बनरे।

लोलक– ये सोने–चाँदी के बने बड़ें आकर्षक आभूषण हैं –

लोलक लली कान रतनारे, लगें लटकतन प्यारे।
कसकें काम करें कारीगर, कौन दुकान समारे।
नग जड़ दये जड़ाऊ बिच बिच, हीरन के उजयारे।
ऐसो लगत लाड़ली आनन, चंद गेर गए तारे।
अवध झाँक छूना हो पाई, हो गये प्राण दरारे।

बिजली– बिजली कान के आभूषणों में बहुत प्रचलित हैं, ये भी बारी की तरह ही होती है, किन्तु इनमें तरह–तरह के नग लगे होते हैं। इन्हें पहनकर नारी की सुन्दरता अलौकिक लगती है।

सांकर– सांकरे कर्णफूल और ढारन के साथ–साथ पहनी जाती है। इनकी लम्बाई अपनी–अपनी पसंद की होती है। ये सोने–चाँदी की बनती हैं तथा इकहरी या दोहरी जैसी भी पसंद होती हैं, पहनी जाती है –

सांकर कर्णफूल की झूमें, गोरी को मौं चूमें।
झुक–झुक परत गिरत आनन पै, लेत चलत में लूमें।
थिर नई रात करत चंचलता, दमकत घूंघट हूं में।
देखी नहीं आज लौ ऐसी, न छवि और किसू में।
गंगाधर मनमोहन को मन, रात नहीं काबू में।

गले के आभूषण

जिस प्रकार महिलाओं को सुहागवती होने के प्रतीक के रूप में माँग में सिंदूर, माथे पर बिन्दी, आँखों में काजल अनिवार्य होते हैं, उसी तरह गले में काले पोत की छुटिया, जिसका स्थान आजकल मंगलसूत्र ने ग्रहण कर लिया है, आवश्यक है। बुजुर्गों का कहना है कि भैयावाली बहन को नंगे गले पानी भी नहीं पीना चाहिए। इसका आशय है कि नंगा गला रखना अशुभ माना जाता है। गले में पहने जाने वाले आभूषण जातक की सामर्थ्य पर निर्भर करते हैं, किन्तु इतना तो तय है कि गरीब–अमीर सभी अपनी–अपनी क्षमता के अनुसार गहने पहनते हैं। गले के आभूषणों के सम्बन्ध में ईसुरी ने कहा है–

जिदना रजऊ पैरतीं गानों, जियरा जात बिरानों।
सरमाला लल्लरी मोहरन सेली हार सुहानों।
पावन पोस पैजना बोरा, जानक जिया लुभानो
ईसुर देत बदन अति शोभा, जब चोली बंदतानों।

गले के आभूषणों का संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है –

खंगोरिया– ये चाँदी की बनती है तथा इन्हें सुहाग की निशानी माना जाता है। ये बीच में मोटी तथा दोनों किनारों पर पतली होती जाती है। इनके किनारे मुड़कर कुण्डा (गूंजे) बनाते हैं, जिन पर बाँधने के फूंदने लटके रहते हैं।

सुतिया– यह सोने की बनी हुई खंगौरिया है। मध्यम वर्गीय परिवार के लोग ताँबे या पीतल का गाबा तथा ऊपर से सोने का पत्ता चढ़ी सुतिया बनवा लेते हैं।

कठमा– कठमा में सोने के छब्बीस फल बने रहते हैं। ये फल एक पट्टा की तरह बने रहते हैं और पत्तादार चपरा के भरे हुये या ठोस बनते हैं।

गजरा– गजरा में तबिजिया या ढुलनिया बरीं जाती हैं। ये सोने और चाँदी दोनों के बनते हैं। नर तथा नारी दोनों गजरे पहनते हैं।

कंठा– सोने के बड़े–बड़े गुरिया जरी में बरके कण्ठा बनाये जाते हैं, इन्हें लल्लरी भी कहा जाता है। कण्ठा में गुरियों के बीच–बीच में तरा जरी की गुटिया भी बरी रहती है। पुराने जमाने में राजा–महाराजा इनाम में कण्ठा दिया करते थे।

तबिजिया– चौखूँटी सोने की बनी होती है, जो जरी या डोरा में बरी जाती हैं। तबिजिया ज्यादातर नर धारण करते हैं, किन्तु नारियाँ भी पहनती हैं।

ढुलनियाँ– ये ढोल की तरह की बनी होती है। बीच में थोड़ी मोटी और किनारे कुछ पतले से बनते हैं। ये कुन्दन से डोरा में बरी होती है, इन्हें भी नर तथा नारियाँ दोनों पहनते हैं।

गुलूबन्द– सोने–चाँदी के पट्टे हैं, जिन्हें मखमल के ऊपर बड़ी सुन्दरता के साथ जड़ा जाता है । दोनों किनारों पर फुँदरनदार डोरा लगा रहता है, जिससे मजबूती से गले में बांध लिया जाता है।

ठुसी– सोने या चाँदी के गुरिया और मोती एक पट्टे में बरे जाते हैं।

तिदाना– ये शादी–विवाह में चढ़ाये जाते हैं, इनमें तीन गुरिये डोरा में बरे रहते हैं।

लल्लरी– ये भी शादी–विवाह में चढ़ाये जाते हैं। सोने के गुरिये बीच–बीच में रबा भरे हुये डोरा में बरे जाते हैं। दोनों छोर सोने के एक गुरिया से निकले रहते हैं, जिनसे इसे गले में ढीला या गाढ़ा करके पहना जाता है।

माला– सोने के गुरिया गोल, छः पलिया, अठपलिया या चौखूंटे बनाकर डोरा में गुथें रहते हैं। माला लम्बी बनती है।

सर– सर भी सोने के गुरियन की बनी होती है। ये माला की तरह डोरा में बरे रहते हैं। इसे सरमाला भी कहा जाता है।

चम्पो– ये चम्पा के फूल की पखुंरियन की भाँति बने सोने के गुरियन का बना हार होता है। ये पखुरियाँ डोरा या सोने के तार में बरी रहती हैं।

हार– हार बहुत किस्म के होते हैं। ये मोतिन के जड़ाऊ नौरत्नी सब तरह के बनते हैं। हारों में नौलखाहार, चन्द्रहार, सीतारामी हार आदि नाम से जाने जाते हैं।

गुंज– गुंज में सोने के गुरियों की चार–पाँच लरें होती हैं। गुंज की लरें, कुन्दन की डोरों या सोने–चाँदी के बारीक तारों में बरी होती हैं। गुंज पाँच तोला से लेकर दस–पंद्रह तोला तक के बनते हैं।

गोप– ये भी सोने के बनते थे। इनमें सोने की दो मोटे तार की लरें होती हैं। बीच–बीच में टिकरा बनाये जाते हैं, जिनमें हीरा, पन्ना, माणिक, मोती, काँच के ककरे जड़े रहते हैं।

बधियाँ– सोने–चाँदी की बनी चार लरें होती हैं। ये लरें गले में चिपकी रहती हैं।

सेली– ये कई लरों की बनी होती है। किनारों पर सरावैं लगी रहती हैं। ये बड़ी लम्बी रहती है कि टुंडी तक छूती रहें हैं।

हमेल– ये गजरे के समान होते हैं, इनमें सोने की मोहरें या चाँदी के कल्दार, कुन्दा बनाकर जड़े रहते हैं। इन मोहरों या कल्दारों को डोरा में बरा जाता है। ये भी बहुत लम्बे बनते हैं।

बिचौली– बिचौली भी जड़ाऊ बनती थी तथा सादा बनी पत्तियाँ या गुरिया,मोतिन की लरें लगी हुई डोरा में बरी हुई बनती थी ।

करसली– ये सोने के गुरियन की माला जैसी बनती थीं। ये भी काफी लम्बी बनती थी।

सांकर– ये सोने–चाँदी की बनी हुई होती है। आजकल भी इन्हें महिलायें पहन रही हैं। इन्हें वर्तमान में चैन या जंजीर कहा जा रहा है। इनके बीच में लॉकेट भी डालने का प्रचलन आ गया है। सांकर मंगलसूत्र का भी रूप ले रहा है।

हाय– सोने या चाँदी की टिकियाँ बनाकर केन्दे से डोरा में बरी जाती हैं। बुन्देलखण्ड में छोटे बेटा–बेटियों को हाय पहनाने का प्रचलन है।

चन्दा– सोने–चाँदी के चन्दा–जुंदइया बनते हैं, जो कुन्दे से डोरा में बंटे जाते हैं। ये भी छोटे बच्चों को पहनाये जाते हैं।

बघनखा– शेर नाहर,तेंदुआ के नाखून के ये सोने चाँदी में जड़कर बनाये जाते हैं तथा डोरा में बरकर गले में पहनाये जाते हैं।

पुतरिया– सोने चांदी की पुतरिया कुन्दा में डोरा में बरकर गले में पहनाई जाती हैं। ये सौत की पुतरिया कहलाती हैं। जब किसी आदमी की पहली पत्नि मर जाती है और वह दूसरा विवाह करता है तो नई दुल्हिन को सौत की पुतरिया चढ़ाये में चढ़ाई जाती है।

बारी– यह जच्चा को पहनाई जाती है। जबा फुलाकर गुच्छादार बड़ी माला बनाई जाती है। बीच–बीच में लोंग,इलाइची, डोंड़ा सुपारी, गुबे रहते हैं। धनाढ्य घरों की महिलाओं को पहनाये जाने वाली जबारियों में सोने–चाँदी के गुरिये या तबिजिया बरी जाती हैं।

धुकधुकू– ये सोने के हार हैं, जिनमें हीरा जड़े रहते हैं, इनमें घड़ी की बाल कमानी की तरह बनी होती है जो सांस लेने के साथ–साथ हिलते–डुलते रहते हैं।

बीजासेन की पुतरिया– जिन परिवारों में बीजासेन देवी– 'पारौ क्री' पूजा होती है, उन परिवारों में नववधू को चढ़ाव में चढ़ाई जाती है।

मंगल सूत्र–वर्तमान समय में बुन्देलखण्ड में मंगलसूत्र का प्रचलन आम हो गया है। पोत के गुरियों के बीच–बीच में सोने के मनके बरे रहते हैं तथा बीच में सोने का लॉकिट बरा रहता है। मंगलसूत्र एक. तीन या पाँच लर के बनाये जाते हैं।

हाथों के आभूषण

हाथों में रची लाल मेहंदी तथा कलाइयों में खनकती लाल, पीली हरी चूड़ियाँ सुहागिन महिला की पहचान मानी जाती हैं। बुजुर्ग दादी, परदादी आशीर्वाद में कहा करती हैं– हाथ भर चूड़ियाँ, मांग पर सिन्दूर सलामत रहे, अर्थात् चूड़ियाँ अमर रहें। विवाह में नववधू को सुहाग के 'कचेरा' पहनाये जाते हैं। बच्चे के जन्म होने पर जच्चा को दस दिन बाद दस्तोन के दिन लाल–पीले रंग की दो–दो जोड़ा चूड़ियाँ मिलाकर पहनाई जाती हैं, जिन्हें 'अमरस' कहते हैं।

हाथों के जेवरों आभूषणों का वर्णन करते हुए ईसुरी ने कहा है –

बैयां लागे बरन में नौनी, खग्गन सहित सालौनी,
इनई करन में ककना दौरी, बाजूबंद मिलौनी।
पौंची पैर पटेला पैरें, पीछे छैल रिजौनी,
ईसुर इन गोरी बैपन पै, करैं बजुल्ला बौनी।

हाथों के आभूषणों का विवरण निम्नानुसार है –

हथफूल– ये सोने–चाँदी के बने होते हैं, इनमें पाँचछला सांकरन से जुड़े हुए होते हैं। बीच में पालफूल बने रहते हैं। कलाई में पहनने के लिए लम्बी सांकर लगी रहती है।

दस्तबंद – ये भी सोने–चाँदी के पट्टा एवं सांकर के बने होते हैं तथा कलाई में बांधे जाते हैं।

गजरा– ये चाँदी–सोने के जालीदार गोला और पट्टीदार बनते हैं।

ककना– ये भी सोने–चाँदी व गिलट के जालीदार, ककनियादार बनते हैं।

बंगलिया – ये फूलदार चूड़ियाँ होती हैं।

दौरी – ये रबादार चूड़ियाँ होती है जो सोने तथा चाँदी के बनते हैं।

पटेला – ये सोने–चाँदी के जालीदार पट्टे बने होते हैं।

चूरा– गोला, जालीदार, जड़ाऊ, इमरती के सादा, मीना के ठोस या चपरा चढ़े नक्कासदार बनते हैं। चूरा तथा इन्हीं के समान कम वज़न की चूड़ियाँ भी बनने लगी हैं।

नोगरई– ये नीम की निबौरी की तरह बने हुए डोरा में बरकर बनाये जाते हैं।

चूहा–दत्ती – ये सोने–चाँदी की बनी चूड़ियाँ होती हैं, जिनके किनारे चूहे के दाँतों की तरह बने होते हैं।

गजरियाँ –ये भी सोना या चाँदी की बनती हैं। छीताफली निकासी बारी ऊपर और बगल में उठी हुई होती हैं।

बगुआ – ये अच्छे भरावदार बने हुए चूरे हैं, जो सोने–चाँदी के बने होते हैं।

लिड़आऊ पौचियाँ– ये छिरिया की लैंड़ी की तरह बने हुए गुरियों को डोरा में बरकर बनाई जाती हैं। ये भी सोने या चाँदी की बनती हैं।

पोचियाँ–ये जालीदार पट्टों की चाँद, सितारे, बोरा, लटकनदार बने होते हैं। ये भी सामर्थ्य अनुसार चाँदी–सोने के बनते हैं।

बैल चूड़ी– ये जालीदार पट्टी की बनी होती हैं, ये भी सोने या चाँदी की बनती हैं।

गुंजे– ये हाथों के कौंचन में पहनी जाती हैं। ये सांकरों की तरह बनते हैं। इनके छोरों पर कुन्दे लगे रहते हैं। ये भी सोने–चाँदी के बने रहते हैं।

चुरियाँ– चूड़ियाँ विभिन्न प्रकार की बनती हैं, इनमें रंग–बिरगें कड़े भी जड़े जाते हैं। ये चूड़ियाँ विभिन्न धातुओं की बनी रहती हैं, जिनमें सोना–चाँदी तथा गिलट प्रमुख हैं।

तैतियाँ– ये विशेष तरह के गहने हैं, जिनमें छोटी–छोटी तबिजिया भी सोना या चाँदी की बनती हैं।

रूनझुनियाँ– ये भी सोना–चाँदी की बनी छोटी–छोटी तबिजिया होती हैं, जिनमें रोने जड़े रहते हैं। ये कुन्दन से धागे में बरी रहती हैं।

कचेरा– ये काँच की रंग–बिरंगी चूड़ियाँ होती हैं जो नववधू को चढ़ाये में पहनाई जाती हैं। ये सुहाग की चूड़ियाँ कही जाती हैं।

लाखें – ये लाख की बनी चूड़ियाँ होती हैं, इनमें काँच–पोत–मूंगा तथा अन्य चमकने वाले नग जड़े रहते हैं। इन्हें सुहागनियाँ बड़े चाव से पहनती हैं। ये गरीब–मजदूर किसानों में बहुत लोकप्रिय हैं ।

जुरिया–जुरिया हाथों में चुस्त पहनी जाती हैं। इनके पहनाने का तरीका भी बड़ा कठिन है। इन चुरियों को काटकर हाथ पर चढ़ा दिया जाता है, फिर हाथ पर ही उन्हें तपाकर जोड़ा जाता है। बुन्देलखण्ड में लाख की चूड़ियाँ तथा जुरिया सावनी में सुहागन के लिए भेजी जाती हैं।

छैल चूड़ियाँ– ये भी पट्टे की तरह बनी होती हैं। ये झिझरियनदार होती हैं तथा सोने या चाँदी की बनी होती हैं ।

हाथ की कोहनी के ऊपर के ज़ेवर

बरा– ये कोहनी के ऊपर और बाजू के नीचे पहने जाते हैं। ये सोने–चाँदी, गिलट या कसकुट के छोटी पैजनियों की तरह बने होते हैं।

बजुल्ला – ये बरन के साथ–साथ पहने जाते हैं। ये सोना–चाँदी या गिलट के सत्ताइस तार के गोकर परिखयादार छापदार बनते हैं।

बाँके– ये लहरियादार पटा के बनते हैं। ये भी चाँदी या गिलट के बनते हैं।

टडियाँ– कोहनी के ऊपर पहनी जाने वाली ये चुरियाँ नक्कासीदार बनती हैं।

अनंता – ये अनन्त चतुर्दशी की पूजा कर पहनी जाने वाली चूड़ियाँ हैं, जो चाँदी की बनती थीं, अब सोने की भी बनने लगी हैं।

बाजूबंद– ये छोटी–छोटी तबीजिया जरी में गूँथकर डोरा में बरकर बनाये जाते हैं। डोरन के गुटियाँ फुँदरे छोरन पर बनाकर लटकाये जाते हैं। बाजूबंद ज्यादातर सोने के बनते हैं।

भुजबंद– ये जड़ाऊ टिकियाँ, गोला, पक्खबारी आदि से दोनों ओर डोरा में कसकर बनते हैं। ये भी सोने के बनते हैं।

खग्गा– बरा बजुल्ला के ऊपर पहने जाने वाले ये आभूषण दो तार के उमठा कर बनते हैं। ये चाँदी या गिलट के बनते थे। आजकल सामर्थ्यवान लोग सोने के भी बनवाने लगे हैं।

बगुआ – ये छोटी पैजनियों की तरह के बने होते हैं। ये उमठा के बनाये होने के कारण सुन्दर दिखते है।

बखौरियाँ – ये चाँदी के तारों की लहरियादार बनती हैं। बीच–बीच में टूटदार छोड़न में कुन्दा लगे रहते हैं, जिनमें पतली सींके डरी रहती हैं।

कमर के जेवर

बुन्देलखण्ड में नवजात शिशु की कमर में काला धागा पहनाया जाना, कमर बंद की प्रथम रस्म मानी जाती है । कहा जाता है कि नंगी कमर अशुभ होती है। जब बच्चा चलने फिरने लायक हो जाता है, तो उसे पतली करधनी पहना दी जाती है। कमर के जेवरों का विवरण देखिये –

करधौनी– ये ज्यादातर चाँदी की बनती हैं। कई सांकरे एक साथ बीच–बीच में ढप्पों से कुन्दों के माध्यम से पिरी रहती हैं। इन झालरों में मीना, करमा, डैमन आदि भी सुन्दर तरीके से लगी होती हैं। करधौनी झालरदार, इमरतीदार, बनारसी तथा पट्टेदार बनती हैं। कुछ धनाढ्य लोग सोने की भी बनवाते हैं ।

चौरसी – ये बड़ी करधौनियाँ हैं जिनमें बारह लरें होती हैं तथा बीच में बोरा लगे रहते हैं।

बिछुआ– ये दो या तीन लर की बनती हैं तथा बीच–बीच में फन चिड़ी भी बने रहते हैं। बिछुआ भी चाँदी तथा गिलट के बनते हैं। कुछ सम्पन्न लोग सोने के भी बिछुआ बनवाते हैं ।

अध करधोनी– ये करधौनी की आधी बनती हैं। ये पूरी कमर का घेरा न होकर

आधी होती हैं, जिन्हें नारियाँ दाई अथवा बाईं ओर साड़ी में खोंसकर पहनती हैं।

डोरा– ये एक दो लर की बनी सादा करदोंनी होती हैं, जो चाँदी या गिलट की बनती हैं, किन्तु कुछ महिलाएँ सोने की भी बनवाकर पहनती हैं।

पाँव के जेवर

नवजात शिशु के पाँवों में पोत की बनी पैजनियाँ पहनाई जाती हैं। तुलसीदास जी ने कहा है –

ठुमुक चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ।

बुन्देलखण्ड की नारियाँ नख से शिख तक गहने पहने रहती हैं। दुजकान कवि ने अपनी फाग में जेवरों से सजी नारियों की सुन्दरता का विवरण करते हुए कहा है–

हमखाँ सजवा लाये बिटुलिया, बिरन तोर नंदुलिया।
हीरा लाल लगे नये पन्ना, गढ़ा लाये चौफुलिया।
भीतर से बाहर कड़ आई, ले जेवर की चुलिया ।
कर सिंगार सेज के ऊपर, बन बैठी मामुलिया ।
कह दुजकान नज़र लग जैहैं, दे लेव तनक डिठुलिया।

बुन्देलखण्ड की नारियों के पैरों में पहने जाने वाले गहनों का संक्षिप्त विवरण देखिए –

गेंदे– ये पैरों की अंगुलियों में पहनने वाले छल्लों पर बनी गोल–गोल गेदें हैं। ये चाँदी या गिलट की बनी होती हैं।

गुच्छी– गुच्छी भी चाँदी या गिलट के बनते हैं। इन छल्लों में बोरे डरे रहते हैं। ये पैरों की अंगुलियों में पहने जाते हैं।

कटीला– ये छलन पै काँटेदार फलसियन जैसे बने होते हैं। ये भी चाँदी या गिलट के बनते हैं। ये भी पैरों की अंगुलियों में पहने जाते हैं।

चुटकी – ये पैरों की अंगुलियों में पहने जाने वाले गहने हैं, जो सुहागिनों को अनिवार्य रूप से पहनने पड़ते हैं।

बिछिया– ये छल्ले की तरह बनते हैं, किन्तु इनमें मीना जड़े रहते हैं। ये भी चाँदी या गिलट के बनते हैं।

बिरमिड़ी– ये भी बिछिया की तरह ही बनी छल्लियाँ है, किन्तु एक सांकर से एक दूसरे से जुड़ी रहती हैं।

छल्ली– ये भी चुटकी की तरह ही बनी रहती हैं, किन्तु ये बारीक होती हैं।

पोंते– ये पाव की छिंगरी में पहनी जाती हैं। ये विवाह के चढ़ाये में चढ़ाईं जाती है, इन्हें छला–छिंगरी भी कहते हैं ।

गरगज के छला– ये पाँव के अगूठा में पहनते हैं। ये भी चाँदी या गिलट के बनते हैं।

बाँके– ये अंगूठा के बगल की पहली अँगुली से लेकर हर अंगुली में पहनी जाती है, जो एक पट्टा से जुड़ी रहती है। इनमें पान फूल बने रहते हैं।

अनौटा– ये पाँव के अंगूठा के छला हैं, जिनके ऊपर डिजाइन बनी रहती है।

जुड़वाँ– ये भी पाँव के अंगूठा के छला हैं, इन्हें बैंड़ादार भी कहा जाता है। इनके बीच–बीच में रबादार पट्टी नीचे से लगी रहती है।

पाँव पोस– ये पाँव की अंगुलियों और कुर्च के बीच पंजा में पहनी जाती हैं। ये ककनियादार, झिझरियनदार, करमा, गढ़ता, ढरमा के बने होते हैं, ये पानचिड़ी या फूलदार बने रहते हैं। अनुचर कवि ने अपनी फाग में इन जेवरों के बारे में कहा है –

पावन पायजेब प्यारी के राजत बदन शशी के ,
ताके नीचे पांव पोस की, सांकर लसित लली के।
शोभें द्रव्य अंगूठन ओंटा, अंगुरिन गैंद अली के
धरत भूमि पग शब्द श्रवन सुन, चौंकत लोग गली के,
ईसुर धोती और कछोटा, जे गोने में सींके।

पैजना– ये पांवों में पहने जाने वाले जेवर हैं। ये चाँदी या गिलट के ढरमा, गढ़ता, करमा के बनते हैं। ये कोड़िया, भैड़ासिंगी, छतरपुरी, छीताफली, टीकमगढ़ी, पलरासाई, दतियासाई बनते हैं। इन पैजनों में कंकड़ डाले जाते हैं, जिसके कारण ये छमाके पारते रहते है –

तोरे मधुर पैजना बाजें, गोरे पगन बिराजें,
नित उठ प्रात जात हैं जल्दी आई तला से मांजें

लुरकत रहें मुखन के नीचे, छोड़त कड़ी अवाजें।
जे सुर भरे हिया के भीतर, मन के बीचें छाजें।
ईसुर परन चहत काहू पै, भादों कैसी गाजें।

चुल्ला– ये चपटे और गोल दोनों तरह के बनते हैं। ये पैरों में दो–दो या तीन–तीन पहने जाते हैं। ये चाँदी या गिलट के बनते हैं।

गुजरियाँ– चार से छः इन्च की चौड़ी एवं ऊँची पट्टीदार तथा बीच में टूटदार और किनारे पर कुन्दा बने हुए बनती हैं। इनको फैलाकर पाँवों में पहनाया जाता है तथा पुनः फैर में फँसाकर कुन्दा कस दिया जाता है। ये चाँदी या गिलट के बनते हैं।

टोडर– ये दतिया साई पैजनन से थोड़े पतले बनते हैं। ये पन्ना,दमोह तथा छतरपुर की बिजावर तहसील में ज्यादा पहने जाते है। ये चाँदी या गिलट के बनते हैं।

रूल– ये तोड़ा और पायजेब से बहुत मिलते–जुलते होते हैं। ये भी चाँदी या गिलट के बनते हैं। ये टोड़ा के साथ पहने जाते हैं।

साके– ये गुजरियन की तरह होती है, किन्तु गुजरियन से थोड़ी चौड़ी बनती हैं। इनके नीचे बोरा लगे रहते हैं जो चलने में छमाछम बजते हैं।

महावर– ये चाँदी या गिलट की लहरियादार तार की बनी होती है।

पैरियाँ– ये पायजेब की तरह बनी रहती है जो बीच से खुलती है। दोनों छोरन पर कुन्दा बने रहते हैं। कुन्दन में सींके डाली जाती हैं। ये चाँदी–गिलिट या कसकुट की बनती हैं।

झाँझे– ये फूलदार, झिझिरियादार, ठोस तथा पोली दोनों तरह की बनती हैं, इनमें कंकरा डाल दिये जाते हैं, जिससे ये छमाछम बजते हैं। ये चाँदी–गिलट या कसकुट के बनते हैं।

लच्छा– ये ऐंठा के तारन से बनते हैं। ये पैजना झांझों के साथ–साथ पहने जाते हैं। दोनों पाँवों में चार–चार या छः–छः पहने जाते हैं। ये भी चाँदी या गिलट के बनाये जाते हैं।

छैल चूड़ी–ये चाँदी या गिलट के पतले पत्ता की बनती हैं। कुछ लोग सोने की भी बनवा रहे हैं।

घुँघरू– ये पतले पतरे की बनती है, इनमें भी ककरा डाले जाते हैं, जिससे ये चलने में बजती है। ये घुँघरू डोरा में बरी रहती है। घुँघरू नाच–गाने में अधिक पहनी जाती है। घुँघरू चाँदी–गिलट, कसकुट तथा पीतल आदि की बनती है।

बाँकें– ये लच्छन के साथ–साथ पहनी जाती है। ये लहरियादार बनती है। दोनों किनारे पतले रहते हैं।

पायजेब– ये चौड़ी सांकरों की बनी रहती है तथा दोनों किनारों पर पेंच लगाकर कसीं जाती हैं।

तोड़ा– ये गुठमा के बनते हैं। इन्हें गड़रिया जाति की महिलाएँ ज्यादा पहनती हैं। पहले दूल्हा को तोड़ा पहनाये जाने का रिवाज था।

चूरा– सादा–सपाट अथवा कड़ाईदार ठोस चूरा बनाये जाते हैं। ये चाँदी या गिलट के बनते हैं।

अनोटा– ये लच्छों की तरह बनते हैं। इनमें भी बोरा लगे रहते हैं। ये भी चाँदी, गिलट या कसकुट के बने रहते हैं ।

पायल– पायल छोटी–बड़ी वजन की हलकी या भारी कई तरह की बनती है। पान, चिड़ी, फूल तथा सांकरन की बनी पायलें हर वर्ग की महिलायें पहनती हैं। ये चाँदी या गिलट की बनती हैं। सम्पन्न लोगों की महिलायें सोने की भी बनवा कर पहनती हैं। इनमें मीना जड़े रहते हैं। घुँघरू तथा बोरा भी इनमें लगाये जाते हैं, ताकि ये चलने में बजें और आहट करें।

गुजरी– ये पैजना की तरह बनती है, किन्तु उनसे पतली। ये चाँदी तथा गिलट की बनती है।

जेहर– ये तिकौनी तीन लर के बनते हैं। आखिरी किनारे पट्टे में जड़े जाते हैं, जिनमें कुन्दा बने रहते हैं। ये चाँदी–गिलट तथा कसकुट के बनते हैं।

गजरा– ये आधा इन्च चौड़े झिझरियनदार बनते हैं। किनारे सुन्दर गोल तथा गुटकादार बने रहते हैं। ये चाँदी के बनते हैं। राजा–रानी तथा जागीरदारनी इन्हें सोने के बनवाकर पहनती हैं। जेवरों के सम्बन्ध में एक दादरा देखिये –

श्यामलिया जालम जोर करे, राधे रंग भरी।
शीशफूल सिर सोहें, दाउनी बिछिया लसै लिलार
कै मोतिन मांग भरी।
अतलस लहंगा, कुसम रंग सारी आँगिया
बूटेदार कै रेशम तनी लगी।
बाहुबरा बाजूबन्द सोहै, ककनन धरी रबार।
कै चुरियन बांह भरी,
दस अँगुरी दस मुंदरी सोहैं हाथ नगींना, अच्छे लाल जड़ी।
पाँव पैजना अनघट बिछिया जेहर की झनकार
कै घुंघरिया अजब बनी।
कर श्रृँगार चली मधुवन खाँ,
जहाँ नंद के लाल सें उनसे सुरत लगी।

इसी तरह नायिका के श्रृँगार का ईसुरी ने बड़ी सुन्दरता तथा सलीके से चित्रण किया है –

देखो रजऊ खां पटियां पारें, सिर सब यार उगारैं।
मोतिन मांग भरी सेंदुर सें, बेंदा देत बहारें।
ठाड़ी हती टिकी चौखट से सहजऊ अपने द्वारें।
काम कमर में सिर कटबे खां, खोंसे दो तरवारें।
मानों रूप कनक कसबे खां, कनक कसौटी धारें।
सोने के गुम्मट पै ईसुर, पंखा काग पसारें।

नायिका का कायिक वर्णन, उसकी हुलिया, दुबला पतला शरीर, उसी पर आभूषण धारण करने के बाद जो सुन्दरता में चार–चाँद लगे हैं, उसका चित्रण ईसुरी की फाग में देखते बनता है –

पतरे सींकों जैसे डोरा, रजऊ तुमारे पोरा ।
बड़ी मुलाम पकरतन धरतन, लगना जाय मरोरा ।
पैरावत में दैया मैया, दाबन परे ददोरा ।
रतन भरे से भारी हो गए, पैरत कंचन बोरा ।
ईसुर कऊ कां देख ऐसे, नर नारी के जोरा।

नायिका श्रृँगार में नेत्रों के सम्बंध में कवियों ने तरह–तरह की उपमाएँ दी हैं। भृकुटि कटाक्ष, रतनारे नयन, कजरारे नयन, तिरक्षे नयन, मृगनयनी इत्यादि शब्द नेत्रों की उपमा में बहुत प्रयुक्त हुए हैं, किन्तु ईसुरी ने नेत्रों की जो उपमाएँ दी हैं, नेत्र श्रृँगार का जो वर्णन किया है, वह अद्वितीय है। देखिए कुछ फागें जिनमें ईसुरी ने नेत्र श्रृँगार का वर्णन किया है –

अखियाँ जब काऊ सें लगतीं, सब–सब रातन जगतीं।
झपती नई झींम न आवै, का उसनीदें भगतीं।
बिन देखे से दरद दिमानी, पके खता सी दगतीं।
ऐसो हाल होत हैं ईसुर पलकन पलतर दबतीं।

नेत्रों की प्रशंसा में ईसुरी का विवरण श्रृँगार देखने लायक है, वे कहते हैं–

ऐसे अलबेली के नैना, मुख से कात बनें ना ।
सामें परै सोउ छिद जैहै, अगल–बगल बरकें ना।
लागत चोट निसानै ऊपर, पंछी उड़त बचैं ना।
जियरा लेत पराये ईसुर, जे निर्दई कसकें ना।

ईसुरी नायिका श्रृँगार वर्णन में उपदेशक की भूमिका में आकर सचेतक की तरह कहते हैं –

छूटे नैन बान इन खोरन, तिरछी भौंय मरोरन।
इन गलियन जिन जाओ मुसाफिर,हैं अंखियां रनजोरन।
नोकदार बरछी से पैने, चलत करेजे फोरन।
ईसुर हमने तुमसे कैदई, घायल डरे करोरन।

ईसुरी की इस फाग में जहाँ श्रृँगार रस की उत्कृष्ट पराकाष्ठा का उपयोग हुआ है, वहीं अतिशयोक्ति अलंकार का भी पूर्णता के साथ प्रयोग किया गया है। वे नेत्रों का पिस्तौल, तलवार और बाण की उपमा देते हुए श्रृँगार वर्णन करते हैं–

अंखियां पिस्तौलें सीं भरकें, मारत जात समर कें।
दारू दरस लाज की गोली, गजकर देत नज़र सें।
देत लगाय सैन को सूजन, पलकी टोपी धर कें।
ईसुर फैर होत फुरती में, कोउ कहां लो बरकें।

× × ×

गोरी तोरे नैन उरजैला, छले छबीले छैला।
गैलारन पै चोट करत हैं, बांदें रात चुगैला।
हँस मुस्कान दाउनीसी दयं, करौ गांव दबकैला।
इनसे जस न हुइये ईसुर, आगें अपजस फैला।

नायिका के नयनों की हेरन और हँसन का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा है कि रजऊ ने उनपर अपने नयनों के ऐसे वार किए हैं कि वे घायल से तड़प रहे हैं।

हम खां नैनन की संगीनें, हँसके मारी ईनैं।
पूरे लगे दूर नौ भाले, मैया घाव उछीनैं।
नैयां घाव मलम पट्टी के, दवा रकाय खां पीनैं।
हार हकीम गए हिम्मतकर, सिंयत बनेना सीने।
ईसुर श्याम दरद नई जानें, जो लो जग में जीने।

इसी तरह उन्होंने दूसरी फाग में कहा है –

कड़तन मारी नैंन तलवारें, रजऊ ने अपने द्वारें।
आवौ जान गई पैलां सें, ठाड़ी हतीं उबारें।
दुबरी देह दसा के ऊपर, हिलत चलीं गईं धारें।
उत ईसुर को कोउ हतो न, तक लओ पीठ उगारें।

ईसुरी ने नायिका के नैनों की सुन्दरता के वर्णन में उपमा अलंकार का बड़ा सटीक प्रयोग किया है, वे कहते हैं –

इनके अजब सिकारी नैना, छैल छड़कते रैना।
भौंय कमान बान चितबन सी, लएं रात दिन सैना।
परत दाब चाव न चूकैं, पंछी उड़त बचैना।
छिपे रात घूंघट के भीतर, वे भौंचक उगरैना।
पर हियरा के लेन ईसुरी, वे निरदई कसके ना।

ईसुरी कहते हैं कि रजऊ के नैन बड़े सिकारी हैं, तुम इनसे बच के रहना। इनकी भौंह कमान की तरह तथा हेरन बाण जैसी नुकीली है। इनका दांव पड़ते ही ये शिकार कर देंगे। ये चूकते नहीं हैं। ये यद्यपि घूँघट में छिपे हुए रहते हैं, किन्तु इनकी मार बड़ी भयानक एवं घातक है।

वे कहते हैं कि अलसाए से दिखने वाले ये नयन भी बड़ी फुरती से वार करते हैं। उनकी मार से चोटिल हुए करोड़ों लोग तड़प रहे हैं।

तेरी आलसयुत हँस हेरन, करत मोल बिन चेरन।
चंचल चपल नेत्र तुव लगकर, घायल हो गए ढेरन।
मम तन चोट घालवे को भये, तोरे नैन अहेरन।
ईसुर ई हेरन चितवन पै, घायल भये करोरन।

जिन सहृदयों को इन नैनों के बाण लग जाते हैं, उनकी पीड़ा भुलाए से भी भूल नहीं पाते हैं–

हम खां बिसरत नहीं बिसारी, हेरन हँसन तुमारी।
जुबन विशाल चाल मतवारी, पतरी कमर इकारी।
भौंह कमान बान से ताने, नजर तिरीछी मारी।
ईसुर कात हमाई कोदों, तनक हेर लो प्यारी।

रूप श्रृँगार में नायिका का कटीले नैनों से हँस–मुस्कराकर देखना कभी भुलाया नहीं जा सकता। उस पर भी पतली कमर, इकहरी देह, सुडौल स्तनों वाला सीना, कमान जैसी खिंची भौहें तथा तिरछी हेरन वाली निगाहें जिस किसी की ओर एक बार देख लेती हैं, वह कभी उसे भुला नहीं सकता।

ईसुरी की फागों में श्रृँगार की यह पराकाष्ठा काबिल–ए–तारीफ है। वे नायिका नेत्र श्रृँगार के वर्णन में यहाँ तक कह गए हैं कि –

तुमने नैन कसाई कीने, पाप पुरातन लीने।
बरनी डोर डार के बांदे, काठे में सिर छीने।
वे बेजान जान से मारे, कटा छटा के बीने।
इनके हात काय काजर दै, गवां वगुरदा दीने।
ईसुर जनम जिए जे जखमी, जखम खाय है दीने।

गहने रूप श्रृँगार वर्णन करते–करते ईसुरी कबीर की तरह उपदेशक बन जाते हैं और वे नायिका से कहते हैं–

बांके नैन कजरवा आंजौ, बलम बिना ना साजो।
दुलहिन घरै दिखइया को है, वो परदेश बिराजो।
आई बड़ी बड़न कें ब्याईं, अपने कुल कौ लाजौ।
साजौ नईं लगत है ईसुर, बे औसर की बाजो।

हे सुन्दरी! तुम्हारा पति बाहर गया है, तुम इन सुन्दर कटीली आँखों में काज़ल

आँजकर किसे दिखाना चाह रही हो! तुम बड़े कुल–खानदान की बेटी हो, ऐसा अनावश्यक व्यवहार करके तुम अपने कुल को कलंकित करने वाला उपक्रम क्यों करती हो? साज–श्रृँगार उचित समय पर ही ठीक लगता है। जब तुम्हारा नायक तुम्हारे पास नहीं है तो यह श्रृँगार किसके लिए है? ये बेमतलब का है जो उचित नहीं लगता। जिस तरह बेअवसर पर बाजे बजें तो वे उत्साह उमंग नहीं देते हैं, बल्कि क्रोधाग्नि प्रज्ज्वलित करते हैं।

ईसुरी ने नायिका नयन सुन्दरता के वर्णन में इस तरह साहित्यिक सांगोपांग रूपक बांधा है, जिसकी व्याख्या कर पाना कठिन है। यही कारण है कि ईसुरी का श्रृँगार वर्णन शाश्वत माना जाने लगा–

लख इन नयनन की अरुनाई, रहे सरोज छिपाई।
मृग शिशु निज अलि भयखां, तजके बसे दूर बन जाई।
चंचल अधिक मीन खंजन से, उन नई उपमा आई।
ईसुर इनको कानों बरनों, नयनन सुन्दरताई।

ईसुरी ने अपनी फागों के माध्यम से सचेतक की बखूबी भूमिका निभाई है। देखें इस फाग में वे कैसे सुझाव दे रहे हैं –

जो कोऊ नयनन को बरकाबै, जियरा में सुक पावैं।
तिरछे नयन चले घूंघट में, चोट चपेट जमावैं।
भीतर पेटे लगी कतन्नी, ऊपर घाव न आवैं।
ईसुर नर से नारी भारी, ऊसुई पेस न पावैं।

वे नायिका को इंगित कर सम्पूर्ण नारी जाति को भी दीक्षित करते हुए कहते हैं–

बांकी रजऊ तुमारी आंखें, रओ घूंघट में ढाकें।
हमने अबै दूर सैं देखी, कमल फूल सी पाखें।
जिनखां चोट लगत नयनन की, डरे हजारन कांखें।
जैसी राखें रई ईसुरी, ऊसई रइओ राखैं।

इसी तरह उन्होंने युवा पीढ़ी को समेकित रूप में कहा है–

बिगरन बारे नयन नसाने, की के नईयां जाने।
हेरन लगे–लगे न बरके, चलत न लगै निशाने।
भरे उमंग उपत के उरझे, बरबस अनुआ ठाने।

अनियानी नोकन ने यारी, कोऊ धरन की हाने।
ईसुर खान जगत अपजस की, कीरत नईं अमाने।

उनका कहना है कि जो भी गलत राह पर चलता है, उसे सभी समझ जाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी रामचरित मानस में कहा है –

जो कुपंथ पग धरहिं खगेशा। रहे न तेज बुद्धि लवलेशा।।

उसी तरह से ईसुरी ने कहा है कि यह अपयश की खान है। मनुष्य की कीर्ति को नष्ट करने वाली है। अतः मनुष्य को गलत रास्ते से बचकर चलना चाहिए । नेत्रों की मार के सम्बंध में ईसुरी ने कहा है –

ऐसे अलबेली के नैना, बिना लगे माने ना।
लेती आन उपत के खूदों, मानुष गैल निमै ना।
बाने बांद हार गए इनसे, सोमें कोऊ बरकै ना।
ईसुर प्रान जात नाहक में, लेना एक न देना।

नेत्रों की महिमा या श्रृँगार वर्णन ईसुरी ने जिस तरह से किया है, इसकी तुलना अन्य कवि से कर पाना कठिन है। वे कहते हैं कि नायिका के नयन ऐसे लुभावने हैं कि हर कोई इनकी परिधि में आ फँसता है। कितनी भी कोशिश करें, किन्तु उनसे बच पाना बड़ा मुश्किल होता है। ये नेत्र स्वयं अपना जाल फैला कर फँसाने में माहिर होते हैं। आप सामने पड़ने से कितने ही बचो, किन्तु बच पाना कठिन है, ये फँसा ही लेते हैं। जो इनके चक्कर में एक बार फंस गया तो फिर मुक्त हो पाना कठिन ही नहीं, असम्भव हो जाता है। देखिये एक और फाग जो ईसुरी ने इसी सम्बन्ध में कही है –

अखियाँ मित्र बिगर ना मानें, मौत कपट की ठाने।
छेकें खोर मित्र के लाने, दो बातें मोय काने।
लम्बी खोर दूर लौ तकती, मिलहैं कौन ठिकाने।
ईसुर कात दरस दो जल्दी, नईं भए जात दिमाने।

संयोग श्रृँगार में कठिन आकर्षण बड़ा महत्त्वपूर्ण माना गया है। नायक–नायिका की सुन्दरता उसके आव–भाव हँसन–हेरन, चलन–मटकन आदि क्रियाओं से इतना आकर्षित हो जाता है कि वह उसके बिना एक पल भी रहना नहीं चाहता। ईसुरी की फागों में श्रृँगार के एक से बढ़कर एक बड़े सटीक उदाहरण देखने को मिले हैं। यह कवि की सफलता दर्शित करता है। बुन्देली में ईसुरी की सानी का कोई दूसरा कवि दिखाई नहीं देता है।

नायिका श्रृँगार में वस्त्राभूषण और रूपसज्जा का बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान है। ईसुरी ने रसराज के संयोग श्रृँगार पक्ष का अपनी फागों में बड़ी सफलता के साथ निर्वाह किया है। वे नायिका के आभूषणों का चित्रण करते हुए कहते हैं–

चलतन परत पैजना छमके, पांवन गोरी धन के।
सुनतन रोम–रोम उठ आवत, धीरज रहत न तनके।
छूटे फिरत गैल–खोरन में, ये सुख्तार मदन के।
करवे जोग भोग कुछ नाते, लुट गए बालापन के।
ईसुर कौन कसाइन डारे, जे ककरा कसकन के।

श्रृँगार रस में ऋतु वर्णन का भी बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। अनेक कवियों से ऋतुराज वसन्त का अपनी रचनाओं में बड़ी सुन्दरता के साथ वर्णन किया है। वसंत के आगमन पर मानव मन में जो उत्साह, हर्ष और गुदगुदी उठती है, उसकी मनोहारी रागात्मक अभिव्यक्ति ईसुरी की फागों में झलकती है। एक किशोरी की अभिलाषाओं का चित्रण ईसुरी ने कितनी बारीकी से किया है, देखिए –

ये दिन गौने के कब आवें, जब हम ससुरे जावें।
बारे बलम लिवौआ होकें, डोला संग सजावें।
गा–गा गुइयां गांठ जोर के, दोरे लौ पौंचावें।
हाते लगा सास ननदी के, चरनन सीस नवावें।
ईसुर कबै फलाने जू की, दुलहिन टेर कहावें।

ईसुरी की इस फाग में बुन्देली लोक जीवन की कुछ प्रथाओं की सुन्दर झलक देखने को मिलती है। संयोग श्रृँगार में उज्ज्वल भविष्य की कल्पनाओं का संजोना, शामिल करना बड़े हुनर का काम होता है। जब कवि नायिका के मन में उठने वाली उमंगों, मन में आने वाली सुखद हिलोरों की कल्पना करता है तो उसके साज श्रृँगार एवं सहायक उपक्रम चार चाँद लगा देते हैं, जैसे– उपरोक्त फाग में नायिका सोचती है– पति डोला सजाकर साथ लायेगा, मैं उसमें बैठकर ससुराल जाऊँगी, विदा के समय नायक के साथ गाँठ बाँधकर सखी–सहेलियाँ द्वारे तक पहुँचाने आयेंगी। ससुराल पहुँच कर लोकाचार होंगे, जिनमें द्वार पर पहुँचकर हत्ता (तेल और हल्दी के लेप में हथेलियाँ डुबोकर द्वार के दोनों और भित्ति पर छाप लगाना) लगाकर सास और ननद के चरणों में शीश झुकाकर गृह प्रवेश करेगी।

नायिका को सबसे सुखद अनुभूति तब होती है, जब उसे फलाने की दुल्हिन

कहकर पुकारा जाता है (नायक का नाम लेकर नायिका को उसकी पत्नी के रूप में सम्बोधित किया जाना)।

बुन्देली लोक संस्कृति में नारियाँ अपने पति का नाम नहीं लेती हैं। इस फलाने जू शब्द में हिन्दुस्तानी नारी के शाील और सौजन्य की बड़ी मनोहारी अभिव्यक्ति होती है। लोकजीवन की ऐसी रीति पर प्रकाश डालते हुए ईसुरी ने तुलसीदास जी के रामचरित मानस के उस प्रसंग को जीवंत कर दिया है, जो श्रीराम के वनगमन के अवसर पर ग्रामीण नारियों द्वारा सीताजी से उनके साथ चल रहे पुरुषों का जब परिचय पूछा तो सीताजी ने कहा –

सहज सुभाय सुभगतन गोरे, नाम लखन लघु देवर मोरे।।
बहुर बदन विधु अंचल ढांकी, पिय तन चितय भौंह कर बांकी।।
खंजन मंजु तिरीछे नयननि, निज पिय कह्यो सोच तिन सयननि।।

ईसुरी उस बालिका की मनोदशा का सुन्दर चित्रण कर बुन्देली लोकमूल्यों की झलक देकर बुन्देली साहित्य में अपना नाम स्वर्ण अक्षरों में लिख गए हैं। यहाँ ईसुरी की उन फागों का उल्लेख करना अत्यधिक प्रासंगिक है, जिनके द्वारा वे ग्रामीण नारियों के श्रृँगार का वर्णन कर लोकाभूषणों, गहनों तथा वस्त्र सज्जा के माध्यम से श्रृँगार को जीवटता प्रदान करते हैं।

बनवा लेव पुंगरिया तड़के, आज पिया से अड़के।
ऐसी सखियां कोउ न पैरें, गांव भरे से कड़के।
हीरा–मोती खूब जड़े हों, भई मोल में बढ़के।
कहें ईसुरी प्यारी लाने, धुरी भुंसरा जड़के।

इसके पहले बुन्देली गहनों का विवरण है, जिनमें पुंगरिया नाक में पहनने का एक आभूषण होता है। ईसुरी बुन्देली माटी में जन्में पले–बड़े होने के कारण बुन्देली संस्कृति का उन्हें पूर्णरूपेण ज्ञान था। सच्चा कवि वही माना जाता है, जो समकालीन परिप्रेक्ष्य की झलक अपने रचना संसार में समाहित करके सृजन धर्मिता का निर्वाह करे।

ईसुरी को बुन्देली का महाकवि इसी आशय के साथ स्वीकारा गया है कि उन्होंने बुन्देली सभ्यता, संस्कृति, रीति–रिवाज, संस्कार, तीज–त्योहारों आदि सभी को अपनी रचनाओं में समाहित किया है। उनकी फागें बुन्देली जनजीवन की आत्मा बनकर उभरी हैं। उनकी कुछ फागों को देखिये –

दूर से नौंनी लगत ना मुंइयां, भलो पैर लो गुइयां।
गोल गाल गोरे छवि बारे, कऊं बंग है नइयां।
गाड़ी बैठी मोटी डांड़ी, भई पुंगरिया मइयां।
रजऊ रंगीली निकरी ईसुर, अकती खेलत खंइयां।

इस फाग में ईसुरी ने नाक के गहनों का उल्लेख कर दुर और पुंगरिया गहने का नायिका की सुन्दरता में कितना अहम योगदान है, उसका वर्णन कर बुन्देली तीज–त्योहारों के अवसर पर गहने पहनने की प्रथा की ओर इशारा किया है। यहाँ अक्ती पर्व का उल्लेख आया है। उसके सम्बंध में भविष्य पुराण में उल्लेख मिलता है–

वैसाख मासे यत्पुण्या तृतीय शुक्लपक्षजा।
अनन्त फलदा सातु स्नानदानादिकर्मसु।
यतिकंचिद्वीयते दानं स्वल्यं वा यदि वा बहु।
तत्सर्वमक्षयं यस्माते नेयमक्षया स्मृतः।

बुन्देली लोकजीवन में अक्षय तृतीया को अकती कहते हैं, जो बैशाख माह के शुक्ल पक्ष की तृतीया को मनाया जाता है । नायिका श्रृँगार वर्णन में ईसुरी महारत प्राप्त कवि माने गए हैं। उन्होंने नारी सुन्दरता में गहनों, वस्त्रों तथा साज–श्रृँगार का बड़ा ही मनोहारी चित्रण किया है। देखिए उनकी कुछ फागों में –

लै गई प्रान पराये हरकें, मांग में सेन्दुर भरकें।
एक टिबकिया नैचें दैकें, टिकली तरे उतरकें।
तीके बीच सींक मिल बेंड़ी, कै गई भौंह पकरकें।
ईसुर बूंदा दए रजऊ ने, केसर सुधर समरकें।

इसी तरह एक और फाग देखिए –

सांकर कन्नफूल की होते, इन मोतियन की कोते।
बैठत उठत निगत बेरन में, परे गाल पै सोते।
राते लगे मांग के नैंचें, अंग–अंग सब मोते।
ईसुर इनको देख–देख कें, सबरे जेबर जोते।

जहाँ ईसुरी ने अपनी फागों में गहनों को समाहित कर बुन्देली साज–श्रृँगार का उल्लेख किया है, वहीं वस्त्रों के महत्त्व की नारी श्रृँगार में भूमिका का भी बड़ी सिद्दत से चित्रण किया है –

सैंया बिसा सौत के लाने, अंगिया ल्याये उमाने।
ऐसे और बनक के रेजा, अब ई हाट बिकाने।
उनने करी दूसरी दुल्हिन, जौ जी कैसे माने।
उए पैर दौरे से कड़ने, प्रान हमारे खाने।
मयके से न निंगत ईसुर,जो हम ऐसी जाने।

ईसरी नायिका सुन्दरता का वर्णन करते हुए कहते हैं–

ऐसी क्या काऊ की गोरी, जैसी प्यारी मोरी ।
दाड़िम दसन सुआ सम नासा, सब उपमा है फोरी।
छू न कड़ी तनक चालाकी, चाल चलन की भोरी।
ईसुर चाउत इन खां ऐसे, जैसे चन्द्र चकोरी।

नायिका की सुन्दरता, हँसन–हेरन बोलन सभी का वर्णन कर ईसुरी ने श्रृँगार रस का बड़े ही सलीके से निर्वाह किया है। वे कितनी बारीकी से कह जाते हैं, अपने उद्‌गारों को, देखिए –

इनकी बोलन भौतउ साजी, सुने होत मन राजी ।
कड़ते बोल कोकिला कैसे, दवा कौन खां माजी।
रोजउं–रोजउं हँसती रातीं, बोले से कओ आंजी।
ईसुर कभऊं काउ पै ना भई, मौं से ये इतराजी।

× × × ×

ऐसी हँस–हेरन मुंनियां की, मौत भई दुनियां की।
बरबस जात मुठन ना पकरी, ना कांधे पनियां की।
डारें जात गरे में फांसी, गगर भरे पनियां की।
ईसुर पाप गठरिया बांधे, सिरजादी बनिया की।

× × × ×

पैरें छूटा कौन तरा के, भौजी संग हरा के।
अस कुसमानों कार विजानों, खुब रए गेर गराके।
डरवाये रेशम के गुरिया, बीच–बीच रह ताके।
ईसुर गरे गरो लेवे खां, गुलूबंद गजरा के।

नारी श्रृँगार में जितना महत्त्वपूर्ण स्थान गहनों–वस्त्रों का है, उतना ही महत्त्व है

गुदने का। ईसुरी ने नारियों के गुदनों का भी बड़ी सुन्दरता के साथ वर्णन किया है। गुदना लोकजीवन का पुराना व्यापक शौक है। ऐसी मान्यता है कि इसका प्रारंभ वात–व्याधि की चिकित्सा के रूप में हुआ। बुन्देली जनजीवन में गुदनों का व्यापक प्रचार है। ग्रामीण जनजीवन में गुदनों की अलग ही मान्यता है। इन्हें अनिवार्यता के रूप में स्वीकारा गया है। गुदना देह के विभिन्न अंगों में विभिन्न प्रकार से गोदे जाते हैं और महिलाएँ बड़ी रुचि के साथ गुदवाती हैं। नारियाँ अपने भाई– बहन तथा प्रिय के नाम भी अपने शरीर पर गुदवा लेती हैं। ईसुरी की फागों में भी गुदनों को देखिये–

गोदे गुदनारी ने गुदना, मिली हमारे जिदना।
जबरई बांह पकरकें मोरी, कर दए छिदना–छिदना।
अंसुआ गिरे आग के ऊपर, भीज गए दोउ जुबना।
देखी की दिखनौस बरै वा, घरी आई थी उदना।
गिरी तमारो खाय ईसुरी, रईतन मान की सुदना।

× × × ×

गोदौ गुदनन की गुदनारी,सबरी देय हमारी।
गालन पै गोविन्द गोदवे, कर में कुंज बिहारी।
बइयन भात भरी बरमाला, गरे में गिरवर धारी।
आनन्द कन्द गोद अंगिया में,मांग में भरौ मुरारीं।
करया गोद कन्दइया ईसुर, औठन मदन मुरारी।

ईसुरी के साहित्य में श्रृँगार रस की प्रधानता उनकी साहित्यिक सक्षमता को प्रतिपादित करने वाली है। वे जीवन के हर परिदृश्य को श्रृँगार की चासनी में पगकर अपने श्रोताओं को देते थे, जिसका रसास्वादन आज उनके पाठक ले रहे हैं और उनकी फागों को गाने वाले फगवारे। ईसुरी की कई फागें ऐसी हैं जिनमें शाश्वत श्रृँगार देखने को मिलता है–

देखी पनहारिन की भीरें, कुआं वेर के नीरें।
ऐसी चली आउती जातीं, गैल मिलै न चीरें।
दो–दो जनी एक जोरा सें, घड़ा ऐंचती धीरें।
ईसुर ऐसी–देखी हमनें, दई की खाईं अहीरें।

ईसुरी पनहारियों को पानी भरने के लिए आते–जाते देखकर उनके उस दृश्य का वर्णन करते हुए कहते हैं कि पनहारिने झुण्ड की झुण्ड पानी भरने के लिए आती–जाती

हैं। रास्तों में चल पाना मुश्किल है। जब वे कुँओं से पानी निकालती हैं तो घड़ा को रस्से से बाहर खींचते वक्त दो–दो पनहारियाँ उसे साथ–साथ खींचती हैं। दूध–दही खाकर हस्ट–पुष्ट शरीर वाली अहीर जात की नारियाँ बड़ी लुभावनी लगती हैं। ईसुरी नायिका के प्रति उत्पन्न आकर्षण का चित्रण करते हुए कहते हैं –

तुमने नेह का जादू कीन्हा, हिया परायी लींना।
परगओ मंत्र मोहनी मोपै, बातन में पड़ दीना।
गिरदी खात रात दिन औरत,अब कल परत कहीं ना।
ईसुर आप भई मुंदरी हैं, मोखां करी नगीना।

ईसुरी रूप श्रृँगार का बड़ी सफलता से चित्रण करने वाले कवि है–

पैरे फिरें लाख परदनियां, परधीली सी धनियां।
जगमगात पोत को गजरा, झिलमिलात दरपनियां।
लगा जोत जरवीली लागी, माथे पै मोहनियां।
ईसुर खात चली गई झोंका, ठनकारें पैजनियां।

इसी तरह नायिका के प्यार में तड़पते नायक की मनोदशा का जितना प्यारा चित्रण ईसुरी की फागों में देखने को मिलता है, उतना किसी अन्य कवि की रचनाओं में नहीं। यहाँ कुछ उदाहरण देना चाहता हूँ –

जिदना लौट हेरती नइयां, बुरऔ लगत है गुइयां।
सूक जात मौं बात कड़त ना, मन हो जात मरैयां।
दुविदा होत तौन के डारो, तुम ही जान करइयां।
ईसुर पानी भरन चली गई कछवारे की कुइयां।

× × × ×

तिल की तिलन परन में हलकी, बांय गाल पै झलकी।
कै मकरन्द फूल पंकज पैं, उड़ बैठन भई अलकी।
कै चूं गई चन्द के ऊपर, बिन्दी जमुना जलकी।
ऐसी लगी ईसुरी दिल में, कर गई काट कतल की।

× × × ×

दुल्हिन जो नई बेंदी दैहें, छैलन मन लग जै हैं।

अमल अनन्द अनोखे मौंकों, नाका नाक बने हैं।
जाके लगे एक दिन धोकौ, सब खुल कान गमें हैं।
ईसुर भाल लाल रंग देखें, हाल बचन नई पैं है।

ईसुरी ने नायिका के रूप–श्रृँगार एवं अंग–प्रत्यंग वर्णन में सामाजिक मर्यादाओं को ताक पर रख दिया और उस हद तक जाकर फागें लिख दी, जिन्हें सार्वजनिक रूप पर गाया जाना आसान नहीं हैं। इसके कुछ उदाहरण देखिये, किन्तु ये श्रृंगार की दृष्टि से साहित्यिक विधान में खरी उतरती हैं –

जुबना नोकदार प्यारी के, बने बैसबारी के।
इनने रेजा इतने फारे, गोटा और जारी के।
चपेरात चोली के भीतर, नीचे रंग सारी के।
ईसुर कात बचन ना पावें, मसक लेव दारी के।

× × × ×

जुबना दए राम ने तोरें, सबकोई आवत दोरें।
आएं नहीं खांड़ के घुल्ला, पिएं लेत ना घोरें।
का भओ जात हात के फेरें, लएं लेत न टोरें।
पंछी पिए घटी न जातीं, ईसुर समुद्र हिलोरें।

× × × ×

राती बातन में भरमाएं, दबती नइयाँ छाएं।
आउन कातीं आईं नइयां कातीं थीं हम आएं।
किरिया करीं सामने परकें, कौल हजारन खाएं।
इतनी नन्नी रजऊ ईसुरी, बूढ़न कों भरमाएं।

ईसुरी नायिका राग में डूबे लोगों के दिल की बातें उजागर करते हुए कहते हैं–

दिन भर देबू करे दिखाई, जामें मन भर जाई।
लागी रहो पौर की चौखट, समझें रहे अबाई।
इन नैनन भर तुम्हें न देखें, हमें न आवे राई।
ईसुर तुम बिन ये जिन्दगानी,अब तो जिई न जाई।

ईसुरी ने उपरोक्त फाग में कहा है कि हर नायक चाहता है कि उसकी नायिका

उसकी आँखों के सामने रहे। वे कहते हैं कि नायक जब तक अपनी नायिका को जीभर के देख नहीं लेता है, तब तक उसके जी में चैन नहीं रहता है। यह ईसुरी के संयोग श्रृँगार रस की उत्कृष्टता का उदाहरण है।

ईसुरी ने जितनी सिद्दत और गहराई से संयोग श्रृंगार का अपनी फागों में वर्णन किया है, उतना ही वियोग श्रृँगार का भी।

उन्होंने वियोग श्रृँगार को परिभाषित करते हुए कहा है कि जब किसी कारणवश नायक और नायिका एक दूसरे से बिछुड़कर अपने साथी की मधुर स्मृति में तड़पते हैं। अर्थात् उनके प्रेमभाव को याद करते हुए तड़पते हैं, तो इस अवस्था में वियोग श्रृँगार की उत्पत्ति होती है।

इस रस को दूसरा नाम विप्रलंभ श्रृँगार भी रखा गया है। इसके चार भेद हैं – पूर्णराग, मान, प्रवास और करुण। इस रस की दस दशाएँ मानी गई हैं– चिन्ता, अभिलाषा, स्मृति, गुण, कथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और स्मरण।

वियोग श्रृँगार के अवयव

1. स्थाई भाव – रति

2. आलम्बन विभाव – नायक, नायिका।

3. उद्दीपन विभाव– प्रेमपत्र, पिछली प्रेममयी बातें, क्रियाओं की स्मृति।

4. अनुभाव–शरीर का पीला पड़ना, निःश्वास छोड़ना, विलाप करना आदि।

ईसुरी की फागों में जितना संयोग श्रृँगार का प्रयोग देखने को मिलता है, उतना ही वियोग श्रृँगार का। ईसुरी की फागों में जिस तरह संयोग श्रृँगार की भरमार है, उसी तरह वियोग श्रृँगार की भी। ईसुरी ने एक फाग में अपने मन के उद्गार व्यक्त करते हुए उस पीड़ा का वर्णन किया है, जिसने उन्हें धौर्रा छोड़ने को मजबूर किया था और वे ठठेवरा जाकर रहने लग गये थे। वियोग श्रृँगार का उत्कृष्ट उदाहरण बनकर उभरी है यह फाग –

हंसा फिरें विपत के मारे, अपने देश बिनारे।
अबका बैठे ताल तलैंया, छोड़े समुद किनारे।
चुन चुन मोती उगले उनने, ककरा चुगत विचारे।
ईसुर कात कुटुम्ब अपने सें, मिलबी कौन दिनारे।

ईसुरी के सम्बन्ध में कहा गया है कि उन्हें रजऊ से प्यार होने की बात जब ठाकुर जगत सिंह को मालूम चली तो उन्होंने ईसुरी को पेड़ से उल्टा लटका कर शारीरिक प्रताड़ना दी थी तथा धौर्रा से निष्कासित कर दिया। रजऊ के विछोह में उन्होंने अपनी दशा का जो वर्णन किया है, उसे देखिये–

बस्ती बसत लोग बहुतेरे, कौन काम के मेरे।
बैठे रात हजारन कोदी, कबहुं न जे दृग हेरे।
गैल चलत गैलारे चरचे, सब दिन सांझ सबेरे।
हाथ दई उन दो आँखन बिन,सब जग लगत अंधेरे।
ईसुर फिर तक लेते उनखां, वे दिन विधना फेरे।

वे रजऊ के बिछोह में कहते हैं– इस गाँव में भी बहुत सी हैं किन्तु उनके जैसी कोई नहीं और यदि है भी तो मेरे किस काम की। उनकी दो आँखों में कितना जादू था, जिनके बिना यह संसार अन्धकारमय लग रहा है। क्या विधाता दुबारा ऐसा अवसर उपलब्ध करायेंगे, जब उनके देखने का अवसर मिलेगा। वे वियोगी नायिका की विरह दशा का वर्णन करके कहते हैं –

हम पै बैरिन बरसा आई, हमें बचा लेव भाई।
चढ़कें अटा घटा न देखें, पटा देव अगनाई।
बरादरी दौरियन में हो, पवन न जावे पाई।
जै द्रुम कटा छटा फुलबगिया, हटा देव हरयाई।
पिय जस गाय सुनाव न ईसुर, जो जिय चाव भलाई।

नायिका विरह अग्नि में जलती हुई उन सभी परिस्थितियों से आक्रोशित होती है, जो श्रृँगार को उद्दीत्ति करने वाले हैं। वह अपनी दुश्मन वर्षा ऋतु पर क्रोध कर उसे कोसती है। वह उन सभी उद्दीपनों को प्रतिबंधित कर देना चाहती है, जो उसे नायक की स्मृतियों में जलने की पीड़ा देते हैं। ईसुरी नायिका की विरह पीड़ा का वर्णन करते हुए कहते हैं –

जे दिन कटत बैन बज्जुर के, अबै दुपर ना मुरके।
पूरब से सूरज नारायण, पच्छिम खां ना मुरके।
अपने–अपने घरन मजा में, लोग–लुगाई पुर के।
जान जिवावन आन मिलेंगे, कबे यार ईसुर के।

ईसुरी ने ऋतु वर्णन करते हुए नायक–नायिका विरह की पीड़ा का जो चित्रण

किया है, उसे देखकर लगता है कि वे उन परिस्थितियों से पूर्ण रूपेण भिज्ञ हैं, जो नायक–नायिका विरह की तपन से जलते हुए कलेजे झेलते हैं। नायिका अपनी पीड़ा व्यक्त करती हुई कहती है –

अब के गए कबै तुम आ हौ, वो दिन हमें बताओ।
होय आधार तनक ई जी खां, ऐसी स्यात धरायो।
जल्दी खबर लियौ जो जानों, इन प्रानन खां चाओ।
ईसुर नेंक चलत की बिरिया, कण्ठ से कण्ठ लगाओ।

नायिका कहती है कि हमें यह तो बता दीजिए कि आज के गए आप कब और किस दिन आऐंगे। अगर आप उस तय अवधि पर नहीं आऐंगे तो फिर मुझे जीवित नहीं पाओगे। नायिका विछोह के वर्णन में ईसुरी कहते हैं –

देखो नइयां आँखें भरके, जब से गए निकरकें।
आपन ज्वान फारकत हो गए, मोय फकीरन करकें।
अपने संगै ले गए प्यारे, प्रान पराए हरकें।
ऐसे मानस मिलने नैंया, मानस कौ तन धरकें।
खपरा भओ सूख तन ईसुर, खाक करेजो जरकें।

जब से आप गए, तब से इन आँखों में वह रूप माधुरी न भर सकी। मुझे फकीरन बनाकर आप निश्चिंत हो चले गए हैं। मेरे प्यारे। आप मेरे प्राण चुराकर अपने साथ ले गऐ हैं। तुम सच पूछो तो मैं तुम्हें पाकर बड़ी धन्य हूँ कि चाहे कितने भी शरीर धारण कर लूं, किन्तु आप से अच्छा प्रियतम मुझे नहीं मिलेगा। मैं आपकी विरह अग्नि में जल रही हूँ, इस दुःख से मेरा शरीर सूख कर खपरा बन गया है और कलेजा जलकर खाक।

रीति कालीन कवियों की भांति ईसुरी फागों में भी विप्रलम्भ श्रृँगार की छटा स्वभाविकता में परलक्षित होती है। उदाहरण स्वरूप फाग देखिए–

पीतम बिलम विदेश रहे री, नैनन नीर बहे री।
मोय अकेले निबल पिय बिन, लख अंग अनंग दहे री।
बागन–बगन बंगलन बेलन, कोयल सबद करे री।
ईसुर ऐसी विकल वाम भई, सब सुख बिसर गए री।

ईसुरी ने वियोग श्रृँगार का अपनी फागों में जिस तरह निर्वाह किया है, उसे

देखकर लगता है कि ईसुरी विरह पीड़ा की तड़पन से भलीभाँति परचित रहे हैं –

तुमने मोह टोर दओ सैंयां, खबर हमारी नैंयां।
कोचन में हो निबकन लागीं, चुरियन छोड़ी बइयां।
सूकी देह छिपुरिया हो गई, हो गए प्रान चलैयां।
जे पापिन ना सूखी अंखियां, भर–भर भरी तलैयां।
उन्हें मिलादो हमें ईसुरी, लाग लाग कें पैयां।

नायिका कहती है कि विरह ताप में मैं इस तरह जल रही हूँ कि मेरी देह सूखकर छिपुरिया हो रही है–

हड़रा घुन हो गए हमारे,सोचन रजऊ तुमारे।
दौरी देह दूबरी हो गई,करकें देख उगारे।
गोरे अंग हतै सब जानत,लगन लगे अब कारे।
ना रये मांस रकत के बूंदा, निकरत नई निकारे।
इतनउ पै हम रजऊ को ईसुर, बने रात कुपियारे।

इसी तरह नायिका के विछोह में नायक की बुरी दशा का वर्णन करते हुए ईसुरी कहते हैं कि मेरे हांड़ घुन गए हैं, देह दुहरी हो दुर्बल हो गई है। गोरा रंग काला पड़ गया है। शरीर का मांस जल चुका है, खून सूख गया है– फिर भी रजऊ के लिए हम बुरे बने हैं।

संयोग की सुखद स्मृतियाँ और वियोग की दुःखद पीड़ा एक दूसरे से विलोभात्मक अद्वितीय है। कहा जाता है कि सुख के दिन कब गुजर जाते हैं पता ही नहीं चलता, किन्तु दुख के दिन काटे नहीं कटते हैं और जो पीड़ा, जो वेदना इन दिनों में भोगनी पड़ी होती है, उसे भुलाना चाहते हुए भी भुला नहीं पाते हैं। ईसुरी के हृदय में प्रेम का अपार पारावार हिलोरें ले रहा था। अपनी प्रवृद्ध अवस्था में जब वह अन्तर समा न सका तो वाणी द्वार पाकर फागों में फूट पड़ा। इस अन्तःस्त्रोत ने वह धारा बहाई जो यमुना, नर्मदा, चम्बल और टोंस के घेरे को तोड़कर आज साहित्य के धरातल पर सर्वत्र समानरूपेण तरंगित दिखाई पड़ रही है।

ईसुरी ने रज्जू राजा से विशुद्ध प्रेम किया था, जो वासनात्मक न होकर उनकी गुण ग्राहकता पर था। संसार के भ्रमित कलुषित नेत्रों ने उनके उस शाश्वत प्रेम में दोष देखा। रज्जू राजा के परिवार एवं धौर्रा से सम्बन्ध टूट जाने पर भी ईसुरी उन्हें नहीं भुला सके, किन्तु उनके बिछोह को सहन नहीं कर पाये। यद्यपि रज्जू राजा उनसे जीवन में

कभी नहीं मिल सकीं, किन्तु ईसुरी और उनका सम्बन्ध जल–मछली की तरह रहा। वे रज्जू राजा को अपने अन्तस में बैठा चुके थे। अतः जब तक अन्तस है रज्जू को रहना ही होगा। सूर्यदास जी ने कहा –

मीन वियोग न सहि सके, पहिले से सीखि लीजै।
देखि जु तू ताकी गतिहिं, रति न घटे तन जात।

ईसुरी ने रज्जू राजा की प्रीति को अमर करने की ठान ली और रज्जू राजा को स्मृति में रखने के लिए रजऊ को समर्पित फागें रचने लगे। वे कहते हैं –

हींसा परे आगले मेरे, रजऊ नैन दुई तेरे।
जां हम होवें मईखां हेरो, अन्त जाय ना फेरे।
जब देखों तब हम खां देखो, दिन में सांज सबेरे।
ईसुर चित्त चलन ना पावे, कबहुं दायने डेरे।

ईसुरी रज्जू राजा के बिरह में इतने आसक्त थे कि जड़–चेतन सर्वत्र में रजऊ को देखने लगे और सारा जग उन्हें रजऊमय दिखने लगा। वे पेड़–पत्ती, फूल–फल जल–थल, नभ सभी में रजऊ की छवि देख रहे थे और सदैव रजऊ के होकर जीना चाह रहे थे। उन्होंने इतनी चाहत पाल रखी थी कि अगर उसकी विवेचना की जाय तो उनके प्रेम के पर्याय से चराचर भी कम पड़ जाय। उनके कल्पना की उड़ान देखिये–

विधना करी देह न मेरी, रजऊ के घर की देरी।
आवत जात चरन की धूरा, लगत जाय हरबेरी।
लागी आन कान के ऐंगर, बजन लगी बजनेरी।
उठन चात अब हाट ईसुरी, वाट बहुत दिन हैरी।

ईसुरी रज्जू राजा के बिना एक पल भी जीना नहीं चाहते थे। वे सदैव उनकी स्मृतियाँ अपने अन्तस में रमाए रहते थे और मिलन की कल्पना की उड़ाने भरते रहते थे। वे कहते हैं –

पंछी भए न पंखनवारे, इतनी जांगा हारे।
कड़–कड़ जाते सांसन में हो, अड़ते नहीं किनारे।
सब–सब रातन मजा लूटते, परते नहीं नियारे।
ईसुर उड़ प्रीतम से मिलते, जां होंय यार हमारे।

ईसुरी अपनी नायिका की याद में तड़पते हैं और उसकी हँसन–हेरन, उठन–बैठन इत्यादि कृत्यों को स्मरण करते–करते खुद की सुधबुध भूल जाते हैं। वे संसार के सारे कार्य कलापों में उसे ही देखते हैं। सारा संसार उन्हें रजऊमय लगता है और जो कुछ भी हो रहा है, उस सभी में रजऊ की सहभागिता है –

सूजै इन आँखन अनवेली, जग में रजऊ अकेली।
भरके मूठ गुलाल धन्य वे, जिनके ऊपर मेली।
भाग्यवान जिन में पिचकारी, रजऊ के ऊपर ठेली।
ई मइना की आउन हम पै, झिली मस्त की झेली
अब की बेरें उनने ईसुर, फाग सासुरे खेली।

× × × ×

हम पै इक मुख जात न बरनी, रजऊ तुमारी करनी।
जा ठाड़ी हो जाती जाके, दिपन लगत वा धरनी।
हते नक्षत्र नई पुक्खन में, नई भद्रा नई भरनी।
आई हो औतार मांग भव, तीन ताप की हरनी।
धन्य तुमारे भाग ईसुरी, कैउ करी बैतरनी।

ईसुरी की फागें सुनने–पढ़ने में तो सरल और आसान लगती हैं किन्तु उनकी धार बहुत पैनी और मारक क्षमता का तो जवाब नहीं। वे जो भी कहते हैं उनमें एक और गूढ़ अर्थ छिपा रहता है। उसे वही समझ पाता है जिसकी बुद्धि निर्मल और प्रखर है। ईसुरी की ऐसी गूढ़ भावी कुछ फागें देखिये–

मोरी रजऊ सासरे जातीं, हमें लगा लो छातीं।
कै नई सकत गरौ भर देतीं,अंसुवन अखियां बातीं।
ऊसेई चित्र लिखि सी रैगईं, माँ से कछु न कातीं।
हमने करी हमई जानत हैं,अब पीछू पछतातीं।
ईसुर कौन कसाइन डारी,विकल विदा की पाती।

× × × ×

नीको नई रजऊ मन लगवौ, एई से कठिन हटकवौ।
मन लागै लग जात जनम कौ, रोमई रोम कसकवौ।
सुनती तुमे सओ न जैहै, सब–सब रातन जगवौ।

कछु दिनन में होत कछु मन, लगत–लगत लै भगवौ।
ईसुर जे आसान नई हैं, प्रान पराये हरवौ।

नायक–नायिका प्रीति और विछोह संसारिक गतियाँ हैं। जो जीवित है उसे ये गतियाँ प्रभावित करेंगी। ईसुरी ने रजऊ को अपनी साँसों–साँसों में रमा रखा है और वे हर क्षण उन्हीं में रमे रहते हैं। वे मनसा, वाचा और कर्मणा से रजऊ को चाहते हैं और उनके विरह में जल बिन मछली की तरह तड़पते हैं, जो उनकी फागों में स्पष्ट झलकता है –

जो जी रजऊ–रजऊ के लाने, का काउ सें का काने।
जौ लौ जीने जियत ज़िन्दगी, रजऊ के होकें राने।
पहले भोजन करै रजऊआ, पीछे मो खां खाने।
रजऊ–रजऊ कौ नाम ईसुरी, लेत–लेत मर जाने।

विरह की पीड़ा असहनीय होती है। नायक–नायिका के बिना एक पल भी अकेला रहने की कल्पना भी नहीं करता है। वह चाहता है कि उसकी प्रेयसी उसकी नजरों के सामने रहे । यदि नायिका उससे दूर जाती है तो उसके प्राण निकलने लगता है। वे एक फाग में अपनी मनोदशा का वर्णन करते हैं –

हम खां रजऊ की बिछुरन व्यापी,कड़त नई जी पापी।
भरमरात जे प्रान फिरत हैं, थर–थर देइयां कापी ।
को जाने लएं जात प्रान कों, सिर पै मौत अलापी।
उनके ऐंगर रए ईसुरी, वे मानस पिरतापी।

ईसुरी प्रीति की रीति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि प्रीति का बन्धन स्थाई होता है। वह जब जुड़ जाता है तो तब तक नहीं टूटता, जब तक तन में प्राण रहते हैं –

करकें प्रीति मरे बहुतेरे, असल न पीछूं हेरे।
फुदकत रहे परेवा बन के, बिरह की झार झरेरे।
ऐसे नर थोरे या जग में, डारन नाई फरेरे।
नीत तकन ईसुर की ताकन, ने ही खूब तरेरे।

प्रेमी को प्रेयसी की यादें दिन रात सताती हैं। वह लाख कोशिश कर ले, किन्तु भुला नहीं सकता। ईसुरी ने अपनी फागों में इस दशा को उकेरा है –

खबरें आदी रात को आवैं, कांलौ मन बिसरावें।

निस दिन चर्चा करें तुमारी, सोउत में बर्रावें।
जो तन हो गओ सूख ठठेरो, न्यारे हाड़ दिखावें।
ईसुर कात तुमारो होकें, कओ कीकौ हो जावैं।

ईसुरी कहते हैं कि जिसने प्रेम किया हो, वही प्रेयसी के विछोह की विरह पीड़ा को समझ सकता है। यह न तो कहने से कही जा सकती है और न कही हुई को कोई समझ सकता है । वे कहते हैं यह पीड़ा वही समझ सकता है, जिस पर बीती हो। ईसुरी ने इस सम्बंध में कहा है –

करके प्रीत करे सौ जाने, कात की कोउ न माने।
दाबन लगे दूर से नकुआ, लासुन भरे बसाने।
काने कछू–कछू कै आवै, ना रए बुद्धि ठिकाने।
बिगरे कैउ आ दिन से ईसुर, हम वे तरे निसाने।

ईसुरी विरह की तड़पन को कितनी बे–बाकी से कहते हैं –

तुम बिन तड़प रहे हम दोऊ, आन मिलो निर्मोही।
सोने की जा बनी देईया, कंचन जुबना दोई।
जबसे बिछुरन तुमसे हो गई, नहीं नींद भर सोई।
कात ईसुरी बिना तुम्हारे, हिलक–हिलक कै रोई।

× × × ×

तलफन बिन बालम जौ जीरा, तनक बंधत न धीरा।
बोलन लागे सैर पपीरा, बरसन लागो नीरा।
आदी रात पलंग के ऊपर, उठत मदन की पीरा।
ईसुर कात बता दो प्यारी, कबै मिलै जे जीरा।

नायक–नायिका को जब विछोह का दर्द सहन नहीं होता है, तब पश्चाताप करने लगते हैं। ईसुरी कहते हैं अब तो जो हो गई सो हो गई, किन्तु अब अगले जन्म में ऐसी भूल नहीं करेंगे –

अब न होवी यार किसी के, जनम–जनम खां सीके।
यारी करे में बड़ी बिबूचन, बिना यार के नीके।
निठुआं ज्वाब दओ है उनने, हते न जीके नीके।
मानुष जनम करौ ना ईसुर, ककरा करो नदी के।

ईसुरी कहते हैं कि एक बार किसी से लगन लग गई तो फिर कितनी भी कोशिश कर लें, आप भुला नहीं पायेंगे। जब तक जीवित रहना है, तब तक उन्हीं का होकर, आगे की राम जाने –

जा नई मिटत प्रीति की यारी,जिगर भरी मतवारी।
मन चल जात सुरत आंगना,से बिना वदन पैड़ारी।
कारे परे करेजे भीतर, मारी नैन कटारी।
ईसुर कात तुमारे लाने, हैं तन त्याग हमारी।

ईसुरी कहते हैं कि बिछोह की पीड़ा ऐसे तड़पाती है जैसे आग से जले अंगों में जलन। विरही को हर चीज, हर क्रिया प्रक्रिया तड़पाती है। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। बस अगर उसे कुछ सताता है तो अपने दिलवर–दिलवरी का मिलन, सुखद मिलन –

प्रीतम बिलग विदेश रहे री, ते दृगनीर बहे री।
निपट अकेल निबल पियबिन, बिनलख अंग अनंग दहेरी।
बागन और द्रुमन वन बेलन, कोयल सबद कहेरी ।
कात ईसुर विकल बाम भई,सब सुख बिसर गएरी।

ईसुरी की फागों में बिछोह पीड़ा का सचित्र चित्रण देखने को मिलता है। सच भी है, उन्होंने स्वयं इस दर्द को सहा जो है –

नैहा निरमोही हो डारे, तनक न दर्द बिचारे।
प्रीत लगाय प्रान तलफाये, विष दे काय न मारे।
जाके पठई सोच ना करिये, और जरे पै जारे।
हम तो हेत लगायो जो तन, वे पूरब में हारे।
कहें ईसुरी काये सजनी,रैन बिछोहा पारे।

नायिका की ओर से नायक को सम्बोधित करके ईसुरी शिकायतनुमा फाग कहते हैं–

तुमने मोह टोर दए सैंया, खबर हमारी नइयां।
कौंचन में हो निबकन लागीं, चुरियन छोड़ें बैंया।
सूकी देह छिपुरिया हो रई, हो गए प्रान चलैयां।
जे पापिन न सूखी अँखियां, भर–भर रईं तलैंया।
उन्हें मिला दो हमें ईसुरी, लागों तोरी पैंया।

ईसुरी ने रजऊ के वियोग की पीड़ा झेली है, जिसे वे अपने जीवन में कभी भुला नहीं पाए। उनकी विरह वेदना में पगीं फागें देखिए –

जब से रजऊ से नैन लगाए, बड़े कसाले खाए।
तरवन तरे फलक पर आए, उप नए पावन धाए।

भए अधमरे प्रेम के बस में, प्रान निकर न पाए।
ककरा गड़े कसक गए कांटे, सेरन खून बहाए।
ईसुर भौत भुगतना भुगती, तऊं न भले कहाए।

प्रेम एकपक्षीय नहीं होता है। सच्चा प्रेम वही है जो दोनों ओर से हो। जितना नायक की ओर से उतना ही नायिका की ओर से भी, तभी उसे सच्चा प्रेम कहा जा सकेगा। ईसुरी की फागों में विरहन की पीड़ा का वर्णन देखें –

हम पे नाहक रंग न डारौ, घरै न प्रीतम प्यारौ।
फीकी फाग लगत बालम बिन, मन में तुमई बिचारौ।
अतर गुलाब अबीर ना छिरकौ,पिचकारी ना मारौ ।
ईसुर प्रान पति बिन सूझे, सारौ जग अंधियारौ।

ईसुरी ने वियोग श्रृँगार का अपनी फागों में बहुत अच्छी तरह से निर्वाह किया है। वे नायिका वियोग के सम्बंध में कहते हैं–

तुमरी बिदा न देखी जाने, रो–रो तुम्हें बताने।
कोसक इनके संगे जाने,भटकत पांव पिराने।
पल्ली और गदेली जोरौं, नये–नये ठन्ना पाने।
जो कऊं होते दूर तलक वे, सुनी न जाती काने।
रंधे भात जे कहिए ईसुर, कीके पेट समाने।

वे इसी तारतम्य में कहते हैं–

जो जी बेदर्दिन खां दओ तो, जब मन ऐसो भओ तो।
बिगरी जात पराई बातन, जब तौ फिरत भओ तो
टूटो नेह नाव धरवाओ, निगओ सवई ने कओ तो।
आई नहीं ध्यानतर एकऊ, हर–हर तरा सिकओ तो।
समझ के सुपरस करो ईसुरी, हटक पैल से दओ तो।

विरहन नायिका अपनी व्यथा का किस तरह बखान करती है, उसका चित्रण करते हुए ईसुरी कहते हैं –

रस्ता आधी रात लौ हेरी, छैल बेदरदी तेरी।
तलफत रही पपीहा जैसी, कहां लगाई देरी।
भीतर से बाहर हो आई, दै–दै आई फेरी।
उठ–उठ भगी सेज सूनी से, आंख लगी न मेरी।
तड़प–तड़प सो गई ईसुरी, तीतुर बिना बटेरी।

ईसुरी की फागों में उनकी स्चनाधर्मिता और काव्यिक कल्पना की ऊँचाई अकथनीय है। वे नायिका बिछोह होने की सम्भावना से काँप उठते हैं और कह उठते हैं –

जो हम विदा होत सुनलैवी, माडारें मर जैबू।
हम देखत को जात लुबों, छुड़ा बीच में लैबू।
अपने ऊके प्रान इकट्ठे, एकई करके रैबू।
ईसुर कात लील को टीका, अपने माथे दैबू।

वियोग श्रृँगार का एक पक्ष ये भी कहा है ईसुरी ने कि जिसे हम अपनाना चाहते हैं वह दूर भागता है। हम उसके प्यार के दीवाने हैं और वह हमसे नफरत कर दूर–दूर भागती है। यह कैसा प्यार है, इससे तो नफरत ही उत्पन्न होती है प्यार नहीं। यह संयोग की विपरीत प्रतिक्रिया है। ईसुरी की एक फाग में इस भावना का बड़ी शिद्दत से निर्वाह हुआ है –

हमसें काये छरकतीं राती, औरन खां पतयातीं।
औरैं आंय तनक दै–दै कें, दौर–दौर के जातीं ।
हमतौ कहैं प्रेम की बातें, अपुन जहर सौ खातीं।
जो मिल जायें गली खोरन में, काट किनारौ जातीं।
अटके प्रान ईसुरी तुममें, हमें लगा लो छाती।

वियोग श्रृँगार में नायक–नायिका जब विरह व्यथा से बहुत अधिक पीड़ित हो चुके होते हैं तो उन्हें क्रोध और ग्लानि होने लगती है और वे बुरा–भला कुछ भी बोलने लगते हैं। देखिए इस फाग को –

तुमसे हमने कीन्हीं यारी, गई मति भूल हमारी।

पीछूं से सब हाथ हिलाकें, हँसी करे संसारी।
भये बर्बाद असाद कहाए, ऐसी शान बिगारी ।
गओ मौ लौट जानकें खा गए, खांड के धोखे खारी।
अपने हातन मारी ईसुर, अपने हाथ कुलारी।

यार और यारी बड़ी विचित्र स्थिति पैदा कर देते हैं। मुहब्बत किसी से और विवाह किसी और से कर लेने पर दोनों ही नायक और नायिका विरह अग्नि में जलते हैं और एक–दूसरे पर दोषारोपण तक करने लग जाते हैं। वे यह भी नहीं सोचते कि उन्होंने किन परिस्थितयों में विवश होकर यह निर्णय लिया है। ईसुरी भी अपनी नायिका से कह रहे हैं–

अबकी बेर बिछुरतन मरने, का जाने तोय करने।
तुम सुख चाओ हमें दुख दैकें, तोरौ जनम बिगरने।
मोरी कौन ख़बर राने जब, तोय खसम संग परने।
दूर से लखें रजऊ आवत हैं, पांव पुरा पर परने।
रै जै बिसर ईसुरी तुम खां, तुमना हमें बिसरने।

× × × ×

मैंने तोरे घर के लाजें, बाहर नीरे काजें।
जितने की जा भाव भगत न, बजत फूट गई झाजें
भए नटखटा दास के लाने, छिन में नीचे छाजें
हे परमेसुर मोरे ऊपर, गिरी गरज के गाजें।
वे न मिली सरम गई ईसुर, धरती फटे समाजें।

प्रेम सच्चा है या झूठा, स्वार्थमय है या निःस्वार्थ, इसे प्रेमीजन भी समझ नहीं पाते और प्रेमपास में बिंधते चले जाते हैं। किन्तु जब धोखा खाते हैं तो पश्चाताप करते हाथ मलते हैं, किन्तु यह सदैव एक सा नहीं होता है। सच्चा प्रेम निःस्वार्थ होता है और उसका निर्वाह भी दोनों ओर से करने के प्रयास होते हैं, किन्तु कुछ परिस्थितियाँ ऐसी उत्पन्न हो जाती हैं कि उन्हें ना चाहकर भी ऐसे निर्णय स्वीकारने पड़ते हैं जो उन्हें कतई स्वीकार्य नहीं होते हैं, ऐसे में प्रेमी अपनी ओर से कह उठता है। देखिए ईसुरी का कथन –

जो तुम जुड़ी बनी रई हमसें, माने बुरओ जनम सें।
प्रीति की रीति निभावत आये, हम तो अपनी गम सें।

राजी बुरी तई सिर ऊपर, भई सो भई करम सें।
दुबिधा एक दिया ना जावै, दगाबाज की दम सें।
ईसुर मोरी कोद रजऊआ, हुए भलाई तुम सें।

बिछुड़न की पीडा विरह वेदना का अनुभव वही कर सकता है, जिसने इसे भोगा हो। प्रेम करना आसान है, किन्तु निर्वाह उतना ही कठिन। चलो मान भी लें कि प्रेमी–प्रेमिका में सच्चा प्रेम है, किन्तु यह दुनिया क्या उनके इस प्रेम का निर्वाह करने देगी। जब वे असमर्थ होकर बिछुड़ जाते हैं तो फिर एक–दूसरे के लिए बहुत तड़पते हैं। ईसुरी ने इसी तड़पन का ब्यान किया है–

तुम खां रटत रात भर रौवो, और बिछुर गए सोवो।
भींजत रात बिछौना अंसुवन, सब दिन करत निचोवो।
कांलों कहें तुमें समझावें, नाहक बचपन खोवो।
ईसुर बैठ रहे घर अपने, सओ डीलन कौ ढोवो।

× × × ×

हो गई देह दूबरी सोसन, बीच परगओ कोसन।
सरबर दओ बिगार स्यानी, कर–कर शील सकोचन।
इतनी बिछुरन जानत नई ते, भूले रये भरोसन।
भई अदेखे देखवे खैंयां, अबका पूंछत मोसन।
ईसुर हुए कछु ई जीखां, तुमई खां आवे दोसन।

सच्चा कवि वही है जो संसार की हर होनी–अनहोनी का आकलन कर उसे कविता का रूप दे सके। कवि की मौलिकता का प्रमाण भी वही होता है कि वह जो देखता है, जो सुनता है और जो अनुभव करता है, उसी को अपनी कविता में कह देता है। ईसुरी की कविताओं में यह गुण प्रधानता भरपूर देखने को मिलती है। वे विछोह की जलन से तड़पते प्रेमियों की दशा का जिस तरह वर्णन कर रहे हैं, ऐसा किसी अन्य कवि के काव्य में देखने को मिल पाना कठिन है। देखिये उनकी फाग–

जानै कौन बाज दिन खाई, मित्र न देत दिखाई।
दीनी छोड़ लाज परिजन की, कुल की शान गमाई।
सास–ससुर छोड़े ससुरे में, चली मायके आई।
बरै भाग कोऊ अपनो न भओ, भुगतौ मौत सवाई।

का दिन अपने आए ईसुर, कोऊ न होत सहाई।

× × × ×

नैयां कोउ को कोउ सहाई, सब दुनिया मजयाई।
गीता अर्थ कृष्ण कर लाने, पिता सो जाने माई।
जा दई देह आपदा अपने, कीखों पीर पराई ।
विपत परे में एक राम बिन, कोउ न होत सहाई।
अपने मरैं बिना ना ईसुर, देवै सुरग दिखाई।

× × × ×

ऐसो अवगुन करो न मैंने, खबर बिसारी तैनें।
सारी बुरी मरे के ऊपर, सब लोगन की कैंनें।
जस अपजस की बांध पुटरिया, ऐई हाथ में रैनें।
माता उठ आमाता दोहैं, दाता दया अदैनें।
इस बस्ती में बसे ईसुरी, कुमत–सुमत दोऊ बैनें।

ईसुरी ने अपनी नायिका को विश्वास दिलाते हुए कहा है कि उसने अपने जीवन में तुम्हारे (रजऊ) बिना किसी और का ख्याल भी अपने मन में नहीं आने दिया है। तुम्हारे लिये ये जीवन है और तुम्हारे लिए ही जान दे देने का प्रण है। अब अपनी तुम जानो –

चाहो तुम सिवाय ना औरें, और पै दिल ना दौरें।
तुम सिवाह कोऊ मनै ना आवै, जेहि बांधे सिर मौरें।
जी के संग में परी भांवरे, परी न एकऊ रोरे।
हमें सनेही ऐसे सूझत, ज्यों सूझत शिव गौरें ।
हाल दिनन में रहे ईसुरी, बसती बसत बगौरें।

× × × ×

मोरे तुम सिवाह न दूजौ, तुम ना और की हूजो।
तुम सिवाह ई संसारी में, इन आंखिन ना सूझो ।
जो प्रन होवै पतिव्रता को, प्रान त्याग तन भूजो।
मन मरदन पै कौन चलावै, नहीं बालकन बूझो।
ईसुर अपने जनम भरे में, एक देवता पूजो।

ईसुरी कहते हैं कि विछोह की पीड़ा बड़ी कष्टदायी होती है। इसे वही जान पाता है जिसके दिल में बिछोह का दर्द छिपा हो –

कैसे मिटै लगी कौ घाओ, ई की दवा बताओ।
दिन या रात चियारें परतीं, ज्वर ना खाए चाओ।
गुनिया और नावते हारे, खेल–खेल के माओ।
कात ईसुरी कैसे करिए, चलत न एक उपाओ।

ईसुरी ने प्रीति को परिभाषित हुए कहा है कि इस पीड़ा को कोई समझता नहीं है, किसे कैसे समझाएं! इसके मर्म को समझने की ना तो कोई कोशिश करता है और अगर समझाने का प्रयास करो तो उपहास उठाओ –

सब कोउ होत प्रीत से न्यारो, ऊंचे गरे पुकारें।
यही प्रीति की ऐसी बिगरन साहूकार बिगारें।
राज बादशाह छोड़ प्रीति से, बेई जोग पग धारें।
ऐई प्रीति से लैला पीछूं, मंजनू सो तन गारें।
ऐई प्रीति से ईसुरी हो गए, ऐसे हाल हमारे।

× × × ×

कीसो कहें प्रीति की रीति, कयें से होत अनीति।
मरम ना जाने ई बातन कौ, को मानत परतीती।
सही ना जात मिलन को हारी, बिछुरन जात न जीती।
साजी बुरई लई सिर ऊपर, भई जो भाग बदीती।
परबीती नहीं कहत ईसुरी, कात जो हम पर बीती।

ईसुरी कहते हैं कि प्रेम में विछोह पीड़ा किसी से कहते नहीं बनती है और किसी से कहो भी तो उपहास के पात्र बनो। किन्तु इसे सह पाना बड़ा कठिन है, फिर भी जो भी है भोगना तो पड़ता ही है, क्योंकि यह कहीं से आई हुई नहीं, स्वयं के द्वारा की गई है। मैं और किसी की क्या कहूँ, मैं तो आप बीती को कह रहा हूँ, जो मैं भोग रहा हूँ, सहन कर रहा हूँ।

ईसुरी कहते हैं कि मुहब्बत करना आसान है, किन्तु निर्वाह बहुत कठिन है। प्रेम करने से पहले सोच–विचार कर लेना चाहिए और यदि कर लिया तो कुछ भी हो जाए निभाना भी चाहिए–

यारी सदा निवाए रइयो, बीच बिसर न जइयो।
जैसो दिन है हाल दिनन में, ऐसेऊं राखें रइयो।
सुनके बात जिया मोरे की, अपने जिउकी कईयो।
अबै कछू ना बिगरो ईसुर, बांय समर के गइयो।

× × × ×

करके नेह टोर जिन दइयो, दिन–दिन और बड़इयो।
जैसे मिलै दूद में पानी, ऊसई मनै मिलइयो।
हमरो और तुमारौ जो जिऊ, एकई जानौ रइयो।
कएं ईसुरी बांय गए की, खबर बिसर जिन जइयो।

नायक विछोह का चित्रण करते हुए ईसुरी ने नायिका की पीड़ा का कैसा हृदयस्पर्शी चित्रण किया है, देखिए –

बेला आदी रात पै फूला, घर में नईयां दूला।
अपनी छोड़ और की कलियन, भलौ भंवरला भूला।
जौ गजरा की खां पैराऊं, उठत करेजे सूला।
छूटन लागी पुहुप परागें, दृगन कन्हैया झूला।
ईसुर सुनत डगर धर आवें, नगर देह रमतूला।

ईसुरी ने नायिका वियोग की पीड़ा का वर्णन करते हुए कहा है –

मोरे मन की हरन मुनैया, आज दिखानी नइयां।
कै कऊं हुए लाल के संगै, पकरी पिंजरा मइयां।
पत्तन–पत्तन ढूंढ फिरे हैं, बैठी कौन डरइयां।
ईसुर उनके लाने हमने, टोरी सरग तरैंयां।

ईसुरी ने कहा– रहना तो वहीं का अच्छा लगता है, जहाँ चाहने वाले हों और जिनसे चाहत हो, अगर वे वहाँ न हों तो फिर ऐसी जगह रहने का क्या मतलब रह जाता है –

अब ना लगै गाँव में नीको, मित्र बिछुरगओ जीकौ।
आवौ–जावौ करे राते, अब मौं देखों कीकौ।
कर और बार पुरा पाले में, लगत मुहल्ला फीकौ।
सौने कैसो पानी ईसुर, गओ उतर मों ईकौ।

ईसुरी ने विरह पीड़ा के वर्णन में कहा है कि यह ऐसी आग है जो पानी से बुझाने से बुझती नहीं है। ये आग तो तभी बुझती है, जब विरही को उसका चाहने वाला मिल जाय–

होने जबई करेजो ओरौ, मिलै मिलनिया मौरौ।
परचत रए बिरह के अंगरा, छनकत रत रओ थोरौ।
जल के परत भवूका छूटत, कितनऊ सपरौ खोरौ।
और–और परचत है ईसुर, पंखन पवन झकोरौ।

ईसुरी कहते हैं कि प्यार–मुहब्बत का चक्कर होता ही है बड़ा कठिन जिस किसी को ये चक्कर पड़ जाता है, उसका चैन छिन जाता है, खुशी चली जाती है, शरीर विरह आग में जलता रहता है –

जबसे भई प्रीत की पीरा, खुशी नई जो जीरा ।
कूरा–माटी भओ फिरत है, इतै उतै मन हीरा।
कमती आ गई रकत–मांस की, बहै दृगन से नीरा।
फूकत जात बिरह की आगी, सूकत जात सरीरा।
ओई नीम में मानत ईसुर, ओई नीम कौ कीरा।

ईसुरी की फागों के समान किसी अन्य कवि की फागें देखने में नहीं आई हैं, यद्यपि उनके समकालीन कवियों गंगाधर व्यास, ख्याली राम आदि जैसे कई कवि हुए हैं, किन्तु उनमें से कोई भी ईसुरी के समान बहुफलकीय फागें नहीं दे पाए। उनकी रचनाओं में लोक के मनोभाव लबालब भरे हैं। इनकी रचनाओं में लोक जीवन सम्बन्धी कल्पनाएँ बार–बार उभर कर आती हैं।

ईसुरी की फागों में कालतत्त्व की महिमा का बहुत ही सटीक साहित्यक वर्णन देखने को मिलता है। कहीं–कहीं इनकी फागों में भावों की बहुत ऊँची उड़ानें पाईं जाती हैं। यही करण है कि ईसुरी की फागों की रचना लोक साहित्य का एक रूप विधान बन गया है। ईसुरी सिद्ध वाणी के अत्यंत सरस कवि थे। उनकी लेखनी ने जहाँ श्रृँगार रस में पगी फागें दी हैं, वहीं भक्तिपरक, नीतिपरक और उद्देश्यपरक फागें भी उनकी उल्लेखनीय बन गई हैं। रीतिकालीन कवियों की तरह ही ईसुरी ने श्रृँगार रस की अविछिन्न धारा बहाई है। उनकी फागों में ग्रामीण जीवन का सजीव चित्रण देखने मो मिलता है। वे कहीं बिहारी के सदृश्य तो कहीं जयदेव के पास दिखाई देते हैं। तुलसी और कबीर की तरह उनकी रचनाएँ शिक्षापरक बन गई हैं। उन्होंने जनपीड़ा को उकेर

कर जन–जन की आवाज बनने का जो अभियान चलाया था, उससे आमजनजीवन के हृदय में ईसुरी का उत्कृष्ट स्थान बन गया है। यश की प्राप्ति, सम्पत्ति का लाभ लेना ईसुरी का प्रयोजन तो था नहीं, वे तो जनकवि थे, वे जनता के बीच में रहकर उनकी भावनाओं, क्रियाकलापों को अपनी रचनाओं में संजो लेते थे। यही कारण है कि वे जन–जन के हृदयी कवि बन गए।

आल्डन ने कहा था– 'कविता मानवीय अनुभव को प्रस्तुत करने की कला है।' यही मानवीय अनुभव उपदेशों के रूप में व्यक्त करते हुए ईसुरी लोक सचेतक बनकर उभरे हैं। जिस तरह कवि बिहारी ने जयपुर नरेश के हृदय को एक दोहे के माध्यम से परिवर्तित कर दिया था –

नहि पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहिं काल।
अली कली ही सौं विन्ध्यो, आगे कवन हवाल।।

उसी धारा को आगे बढ़ाते हुए कवि ईसुरी ने समाज को शिक्षापरक फागों के माध्यम से सचेत किया है। यहाँ ईसुरी की उन फागों का उल्लेख किया जाना उचित समझता हूँ –

बखरी रैयत हैं भारे की, दईं पिया प्यारे की।
कच्ची भीत उठी माटी की, छबी फूस चारे की।
बे बन्देज बड़ी बेबाड़ा जेई, में दस द्वारे की।
बिना किबार–किबरियां वालीं,बिना कुची तारे की।
ईसुर चाय जौन दिन लैलो, हमें कौन वारे की।

× × × ×

रहना होनहार के डरते, पल में परलै परते।
पल में राजा रंक होत है, पल में बने बिगरते।
पल में धरती बूंद न आवै, पल में सागर भरते।
पल–पल की को जानै ईसुर, पल में प्रान निकरते।

ईसुरी जीवन की निरर्थकता पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं –

ऐंगर बैठ लेव कछु काने, काम जनम भर राने।
बिना काम को कोऊ नइयां, कामें सब खां जाने।

जौन काम खां करने नैंयां, कईयक होत बहाने।
जौ जंजाल जगत कौ ईसुर,करत–करत मर जाने।

ईसुरी शिक्षा देते हुए कहते हैं कि कुछ समय मेरे पास बैठ लो। मैं तुमसे कुछ सार की बातें कहना चाहता हूँ। काम तो सारे जीवन भर करते रहना है, जो कभी न पूरा होता है न समाप्त। काम मुझे भी करना है, आपको भी और इस संसार में जो भी आया है उसे भी। बिना काम का भला कौन है? वो तो जिसे काम करना नहीं होता है वह न करने के बहाने ढूंढ लेता है। दुनिया में काम अनन्त हैं और जीवन क्षण भंगुर। अतः इस जीवन में कुछ सार की बातों के लिए भी समय निकाल लेना चाहिए।

ईसुरी की आध्यात्म परक फागें अद्वितीय हैं। उनकी फागों में कला पक्ष बड़ा प्रबल है। वे द्विअर्थी फागें कहने के कुशल शिल्पी हैं। जिसकी जैसी बुद्धि–जैसी समझ होती है वह वैसा ही समझ लेता है, किन्तु वे जो कह रहे हैं, वह शाश्वत सत्य है। उनकी ये फाग दखिये –

अब दिन गौने के लग आये, हमने कईती काए।
सुसते नई काम के मारें, ऐंगर बैठ न पाए।
आसों साल वियाब भये ते, परकी साल चलाए।
तेवरस साल विदा की बातें, नाऊ संदेशा लाए।
सब सेवा विरथा गई ईसुर, आशा जीव जिवाए।

वे कहते हैं कि इस दुनियादारी के चक्कर में पड़कर दो घड़ी स्वजनों के साथ बैठकर बातें नहीं कर पाए। इस वर्ष व्याह, दूसरे वर्ष गौना और तीसरी साल विदा का समय आने वाला है। इसी फेर में जीवन निकल गया। न काम ही पूरा हो पाया है और न ही हरि स्मरण भी कर पाए हैं।

वे अपनी द्विअर्थी फागों के माध्यम से नायिका की आड़ लेकर इस संसार को उपदेशित करते हुए कहते हैं–

बाहर रेजा पैर कड़े गए, नैचौं मूंड़ करैं गए।
जीसे नाम धरै ना कोऊ, ऐसी चाल चलैं गए।
हवा चलें उड़ जाय कंदेला, घूंघट हाथ धरैं गए।
ईसुर इन गलियन में बिन्नू, धीरें पांव धरैं गए।

ईसुरी कहते हैं कि इस दुनिया में आए हो तो इसके चाल–चलन बोल–व्यवहार

भी सीख लेना जरूरी है। वे कहते हैं कि तहजीब से वस्त्रों को पहनना, घमण्ड का नशा छोड़कर नीचे सिर झुका कर विनम्रता से चलना चाहिए, जिससे कोई कुछ कह न पाए। इस जगत में अच्छाई–बुराई बराबर है। अब आपको जो अच्छा लगे, उसे अपना लो, तुम्हें संसार वैसा ही नाम देगा।

उपदेशात्मक श्रेणी में महाकवि ईसुरी की फागें कबीर की परम्परा का निर्वाह करने वाली हैं, जिस तरह कबीर ने कहा –

या दुनिया में आयके छांड़ि देय तू ऐंठ।
लेना है सो लेय ले, उठी जात है पैंठ।।

उसी तरह ईसुरी कहते हैं –

मानुस कबै–कबै फिर होने, रजऊ बोल लो नौनें।
चलती बैरां प्रान छोड़ दए, की के संगे कौनें।
जियत–जियत को सबकोउ, सबको मरे घरी भर रौनें ।
होजें और जनम खां बातें, पाव न ऐसी जोनें।
हंड़िया हात परत न ईसुर, आवै सीत टटौनें।

ईसुर ने कहा है कि आदमी को समाज में अपने बोल चाल एवं कार्य व्यवहार का ध्यान रखना चाहिए। वाणी में मधुरता लाने की जो शिक्षा दी गई है, उसका सदा पालन करना चाहिए। ईसुरी ने मनुष्य शरीर की क्षणभंगुरता को बड़े आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करते हुए कहा है –

तन को कौन भरोसो करने, आखिर इक दिन मरने।
जो संसार ओस का बूंदा, पवन लगें सें ढरने।
जो लौ जीकी जियन जोरिया, जीखां जै दिन भरने।
ईसुर ई संसारे आकें, बुरे काम खां डरने।

मनुष्य को जीवन में प्राप्त अनुभवों से सीख लेनी चाहिए। जीवन का पल–पल सीखने का होता है, जो जीवन में घटित घटनाओं से सबक ले लेता है, उसे फिर कठिनाईयों का सामना नहीं करना पड़ता है। किन्तु जो सचेत नहीं होता है, उसे बार–बार धक्के खाने पड़ते हैं।

ईसुरी के जीवन में भी ऐसे कई अवसर आए हैं, जिनके कारण उन्हें अपमान सहना पड़ा प्रताड़नाएँ सहने पड़ी। तब उन्हें आभाश हुआ और उन्हें कहना पड़ा –

अब न होबी यार किसी के,जनम–जनम खां सीके।
यार करे की बड़ी बिबूचन, बिना यार के नीके ।
नेकी करतन समझें रइओ, जे फल पाये बदी के
ये ई मान से भले ईसुरी, पथरा राम नदी के।

ईसुरी कहते हैं कि बड़े अनुभव के बाद जो शिक्षा प्राप्त कर ली है, उसे वे दूसरों को सिखा देना चाहते हैं। अनाधिकारी से प्रेम करने का कटु अनुभव लेकर वह मनुष्य जीवन तक से घृणा करने लगते हैं। वे कहते हैं कि इस जीवन से भले वे किसी पवित्र नदी (सरयू) के पत्थर बनना ज्यादा पसंद करते हैं।

ईसुरी के साहित्य में कबीर, रहीम, तुलसी, विदुर व कौटिल्य की तरह नीति विषयक सीखें देखने को मिलती हैं, जैसा कबीर ने कहा है –

ऐसी बानी बोलिए मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे आपहुं शीतल होय।

इसी तरह ईसुरी ने कहा है –

सबसे बोलें मीठी बानी, थोड़ी है ज़िदगानी।
येई बानी हाथी चढ़बावै, येई उतारै पानी।
येई बानी सुरलोक पठावै, येई नरक निशानी।
येई बानी सें तरैं ईसुरी, बड़े–बड़े मुनि ज्ञानी।

कबीर दास जी ने कहा है कि –

जग मैं बैरी कोय नहीं, जो मन शीतल होय।
या आपा को डारि दे, दया करे सब कोय।।

ईसुरी ने भी इसी तरह की सीख देते हुए कहा है –

जग में जौलो राम जिवावै, जे बातें बरकावै।
हाथ–पांव दृग–दांत बतीसऊ, सदा ओई तन रावै।
रिन ग्रेही ना बने काऊ को, ना घर बनों मिटावें।
इतनी बातें रहें ईसुरी, कुलै दाग ना आवे ।

जिस प्रकार कबीर ने कहा है –

कबिरा जौ संसार है, ऐसो सैमर फूल।

दिन दस के त्योहार को, झूठे रंग ना भूल।।
झूठा सब संसार है, कोउ न अपना मीत।
राम नाम को जानि ले, चलै सो भौजल जीत।

× × × ×

या दुनिया दो रोज की, मत कर यासों हेत।
गुरु चरनन चित लाईए, जो पूरन सुख देत।।
धर्म किए न धन घटे, नदी न घटटे नीर।
अपनी आँखों देख ले, यो कथि कहहिं कबीर।

ठीक वैसे ही ईसुरी कहते हैं –

भज मन राम सिया भगवानें, संग कछु नहिं जाने।
धन सम्पत्त सब माल खजानों, रेजै ए ई ठिकाने।
भाई बन्धु अरु कुटुम्ब कबीला, जे स्वारथ सब जाने।
कैंड़ा कैसो छोर ईसुरी, हंसा हुए रवाने।।

जीवन की नश्वरता को प्रतिपादित करते हुए ईसुरी ने कहा है कि ये मनुष्य तू क्या ये तेरा– ये मेरा के चक्कर में पड़ा हुआ भटक रहा है। इस जीवन का कोई अस्तित्व नहीं है, आज है तो कल नहीं है, तू इस संसार के मोह चाल को त्याग दे, ये सब क्षण भंगुर है –

राखे मन पंक्षी ना राने, एक दिन सब खां जाने।
खालो–पीलो लै लो–दै लो, एही लगे ठिकाने।
करलो धरम कछु बा दिन खां, जादिन होत रमाने।
ईसुर कई मान लो मोरी, लगी हाट उठ जाने।

वह कहते हैं कि ये जीवन नश्वर है, इसे एक न एक दिन नष्ट होना ही है। ये तेरा ये मेरा के जाल में उलझकर व्यर्थ समय बर्बाद न करके कुछ धर्म कर्म कर लेना चाहिए। दूसरों का भला कर कुछ पुण्य अर्जित कर लेना चाहिए, इसी में जीवन की सार्थकता है। कबीरदास जी ने कहा है –

खाय पकाय लुटाय के, करि ले अपना काम।
चलती बिरियां रे नरा, संग न चलै छदाम।

× × × ×

देह धरे का गुण यही, देह–देह कछु देह।
बहुरि न देही पाइये, अबकी देह सुदेह।
कहें कबीर देय तू, जब लग तेरी देह।
देह खेत हो जायेगी, कौन कहेगा देह।

ठीक उसी तरह ईसुरी कहते हैं –

आओ को अमरौती खाकें, ई दुनियां में आकें।
नंगे गैल पकर गए धर गए, का करतूत कमाकें।
जर गए बर गए धुन्धक लकरिया, धर गए लोग जराके।
बार–बार नई जनमत ईसुर, कूंख आपनी मांके।

अपने मन मानिक के लाने, सुघर जौहरी चाने।
नर तन रतन खान से उपजे, चढ़ो प्रेम खरसाने।
बेंचो आई दुकाने चायै, जो कीमत पहचाने।
ईसुर कैउ जगां धर हारे, कोउ धरत न गानै।

ईसुरी कहते हैं –

एक दिन होत सबई कौ गौनों, होनों और अन्होंनों।
जाने परत सासरे सांसउ, बुरौ लगे चाय नौनों।
जा ना बात काउ के बस की, हँसी लगे चाय रोनों।
राखौ चायें जौ नौ ईसुर, दयें इनई भर सोनो।

जीवन की नश्वरता के संबंध में ईसुरी ने कहा है –

नइयां ठीक जिन्दगानी को, बनो पिण्ड पानी को।
चोला और दूसरो नइयां, मानुस की सानी को।
जोगी जती तपी सन्यासी, का राजा रानी को।
जब चायें लै लेव ईसुरी, का बस है प्रानी को।

× × × ×

जो कोउ जोग जुगत कर जानें, चढ़–चढ़ जात विमाने।
ब्रह्मा ने बैकुण्ठ रचो है, उन्हीं नरन के लाने।
होन लगत फूलन की बरसा, जिदना होत रमाने।
ईसुर कहत सबई के देखत, ब्रह्म में जात समाने।

ईसुरी की फागों में जीवन की नश्वरता का अमिट सिद्धान्त देखने को मिलता है। जिस तरह कबीरदास जी ने कहा –

तन सराय मन पाहरू, मनसा उतरी आय।
कोउ काहू का है नहीं, देखा ठोंक बजाय।
आया है सौ जायेगा, राजा रंक फकीर।
इक सिंघासन चढ़ चले,एक बांधे जात जंजीर।

उसी तरह ईसुरी जी ने कहा है –

करलो ऐंगर हो दो बातें, यार पुराने नातें ।
मोरी कभउं खबर तो लेते, दुख और पीर पिराते।
जो तुम तारि देउ तो टउका, जात न कईये जाते।
ईसुर एक दिन तुम चलि जैहो,देकर पथरा छाते।

ईसुरी कहते हैं कि इस दुनिया के रिश्ते–नाते क्षण भंगुर हैं, जो आया है वह जाता है, यह अमिट सत्य है। मनुष्य तन पाकर जो भी रिश्ते–नाते बने हैं, उन्हें स्थायित्व देकर निर्वाह करना चाहिए। उन्होंने अपनी फाग में कहा है –

करके नेह टोर जिन दईयो, दिन–दिन और बढ़इयो।
जैसे मिले दूध में पानी, उसई मनै मिलइयो।
हमरो और तुम्हारो जो जिउ एकई जाने रइयो।
कात ईसुरी बांह गहे की, खबर बिसर जिन जइयो

× × × ×

करके प्रीत मरे बहुतेरे, असल न पीछू हेरे।
फुदकत रहे परेवा बनकें, बिरह की झार झरेरे।
ऐसे नर थोरे या जग में, डारन नाईं फरेरे।
नीति तकन ईसुर की ताकन, नेही खूब तरेरे ।

ईसुरी प्रकृति के अमिट सिद्धान्त का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि जो मनुष्य दोहरा चरित्र जी लेता है, उसकी कदर कोई नहीं करता है । ये दोहरापन ज्यादा दिनों तक न तो चलता है और न छिपाए छिपता है। एक न एक दिन कलई खुल ही जाती है, तब नीचे को मुँह करना पड़ जाता है–

तोरो मन पापी तन नौनों, एक भांत में दोनों।
मन से रात अन्देश सबई कोउ, तन को मचो दिखोनों
मत माटी की मोल कदर कर,तन की कीमत सोनों।
ईसुर एक नोन बिन सबरे, लगत व्यंजन रौनों।

ईसुरी दिग्दर्शक की भूमिका में संतों की सी वाणी बोलते हैं, जैसे कि कबीर ने लोगों को उपदेशित करते हुए कहा –

काल चक्र चक्की चलै,बहुत दिवस औ रात।
सगुन–अगुन दोय पाटला,तामें जीव पिसात।

× × × ×

यह बिरिया तो फिर नहीं,मन में देख विचार।
आया लाभहिं कारनै,जनम जुआ मति हार।

× × × ×

झूठा सब संसार है, कोउ न अपना मीत।
राम नाम को नानि ले,चलै सो भौजल जीत।

× × × ×

केवल बारी नाम की,जब लग दीपक बात।
तेल घटा बाती बुझी, तब सोवे दिन रात।
जागो लोगों मत सुवो, न कर नींद से प्यार।
जैसा सपना रैन का, ऐसा ये संसार।

ठीक उसी तरह ईसुरी जी ने मनुष्य को सचेत होने को कहा है –

दीपक दया धरन को जारौ, सदा रात उजियारौ।
धरम करे बिन करम खुलै ना, जों कुंजी बिन तारौ।
समझा चुके करें न रैयो, दिया तरे अंधियारौ ।
कात ईसुरी सुनलो प्यारी, लग जै पार निवारौ।

ईसुरी ने हमेशा सतकर्म की हिमाकत की है। वे कहते हैं कि कभी किसी से धोखेबाजी नहीं करनी चाहिए। उनकी इस सम्बंध में फाग देखिए –

जीकौ सेर हवेरे खइए, बदी काउ की कइए।

नौ दस मास गरभ में राखो, तिनके पुत्र कहइए।
सब जग रूठो–रूठो रनदो, राम न रूठो रइए।
ईसुर वे हैं चार भुजा के,का दो भुजा निरइए।

ईसुरी धर्म निरपेक्षता के हिमायती कवि थे। उन्होंने धार्मिक ढोंग–धतूरे पर कभी विश्वास नहीं किया। वे न जात पात पर भरोसा करते थे, न ऊँच–नीच पर। वे सभी को उसी ईश्वर का अंश मानते थे, जो उनमें रम रहा है और उनके इर्दगिर्द रहने वाले सभी में, वे कहते हैं –

सिर धरो विपत को बोजा, तै परसूदी होजा।
करने नहीं सूम की संगत, दाता कौ घर खोजा।
हिन्दू के तो विरत होत हैं, मुसलमान के रोजा।
घायल परे हजारों तुम पै,जब तुम पैरे मोजा।
ईसुर सात पांच की लाठी, एक जनै का बोझा।

ईसुरी के समकालीन समाज की दशा बड़ी खराब थी। देश गुलाम था, अंग्रेजों की सत्ता थी। अंग्रेजों के चमचे भारतीय आम जनता पर रौब जमाये रहने के लिए तरह–तरह के जुल्म ढाते थे। शिक्षा नगण्य थी। सामाजिक कुरीतियाँ इस तरह व्याप्त थीं कि आम जनजीवन का जीवन नरक की तरह था। जमींदारों, कामदारों तथा सत्ताधीशों के चमचों के विरोध में मुँह खोलने का साहस किसी में नहीं था । उस समय भारत स्पष्ट रूप से दो धड़ों में बंटा था। एक अंग्रेजी सत्ता का पक्षधर गुलामी प्रिय लोगों का सम्पन्न गुट, दूसरा अंग्रेजी सत्त्ता का विरोधी भारत की आज़ादी को चाहने वाला गुट जो स्वाधीनता के लिए प्रयासरत, संसाधन विहीन, शोषित प्रताड़ित लोगों का समूह। ऐसी स्थिति में सरकार के विरोध में होंठ खोलना खतरों से खाली नहीं था। ईसुरी की नायिका रजऊ का सम्बन्ध शब्दतः सत्ता के नज़दीक रहने वाले ठाकुर वर्ग से था, जिससे वह वर्ग ईसुरी से नाराज रहता था। किन्तु वे बहुत अच्छे फगवारे थे, जनता उन्हें चाहती थी, उनसे प्यार करती थी, उनकी फागें सुनने को भीड़ जुटती थी, जिससे ठाकुर जमींदार उनसे सीधी टक्कर नहीं ले पाते थे, क्योंकि उन दिनों स्वतंत्रता के आन्दोलनों में देशी राजाओं की बगावत जारी थी। सरकार नहीं चाहती थी कि बहुसंख्यक जनता उनकी छोटी–छोटी गलतियों के कारण सरकार के विरोध में बगावत पर उतर आयें। इसी कारण ईसुरी के विरोध में कुछ भी अन्यथा करने से बचते रहते थे, जबकि ईसुरी इन सबसे अनजान रहकर अपने काम से काम रखने वाले थे। रजऊ उनकी काल्पनिक नायिका थी, किन्तु जिस किसी की बहन–बेटी और पत्नी का नाम

रजऊ, रज्जो, रज्जू या इससे मिलता–जुलता होता था, वे उनसे बेमतलब की खार खाए रहते थे। ईसुरी तो सच्चे कवि थे, जिनका काम था दिग्दर्शन। उनकी फागों में मात्र दिशा बोध था और जन मनोरंजन का भाव। उदाहरण हेतु उनकी कुछ फागें उल्लेखित करना आवश्यक समझता हूँ, देखिए –

मौरो मन बिगरौ भओ कांसे, हाल तुमारे नांसे।
रइओ गरई हरई न हुइओ, जुरै ना लोग तमासे।
जानें नहीं जगत में कोऊ, उरै नहीं उर फांसे।
का सबूत झूठ के ऊपर, चलती नैया सांसे।
ईसुर ऐसउ रान देव अब, कांसे को स्वर कांसे।

वे कहते हैं कि मनुष्य को अपने मान–सम्मान को बचाए रखने के लिए दूसरों के मान–सम्मान का विशेष ध्यान रखना पड़ता है, जैसा की तुलसीदास जी ने कहा है –

आव नहीं आदर नही, नैनन नहीं सनेह।
तुलसी तहां न जाइए, कंचन बरसें मेह।

इसी तरह ईसुरी ने अपनी फाग के माध्यम से कहा–

को नई जानत बुरओ चितैवो,रूखे मन मुस्कैवो।
को बनतीली बात बनाये,अंधरै नैन निरैवो।

मात–पिता की कौन भलाई, सोवत चूमा लैवो।
पर घर गए सो साजौ नइयां, बिन आदर कौ जैवो।
मान–पान ईसुर इज्जत गई, तौ अच्छो मर जैवो।

सत्य समाज और समाज चिन्तक हमेशा ही इस भावना के अनुरूप कार्य करते हैं कि उनसे कभी ऐसा अनर्थक कार्य व्यवहार न हो जाय कि किसी का दिल दुःखे, किसी का अहित हो। वे सदैव ऐसे बुरे कर्मों से अपने आपको बचाकर रखते हैं। कबीर दास ने इस सम्बन्ध में कहा है –

कबिरा सोई पीर है, जो जाने पर पीर।
जो पर पीर जानई, सो काफिर बे पीर ।
कबीरा आप ठगाइये, और न ठगियो कोय।
आप ठगे सुख ऊपजे, और ठगे दुःख होय।
जग में बैरी कोय नहिं, जो मन शीतल होय।
या आपा को डारि दे, दया करे सब कोय।

इसी तरह माहात्मा विदुर जी न कहा है –

निन्दन्तु नीतिनिपुणा नित्यंवृद्धोपसेविन।
चत्वारि सम्प्रवर्धने कीर्तिरायुर्यशोबलम।

जो नित्य जनों का आदर करता है, वृद्धों की सेवा करता है, उसकी कीर्ति, बल, यश तथा आयु में वृद्धि होती है। लोक जीवन आध्यात्मिक विश्वास की एक झलक एवं मानव शरीर की नश्वरता पर प्रकाश डालते हुए ईसुरी ने कहा है –

ले लो सीराम हमारी, चलती बेरा प्यारी।
ऐसी निगा राखियौ हम पै, होय न नज़र दुआरी।
मिलके काउ बिछुरत नईयां, जितने हैं जिउधारी।
ईसुर हंस उड़न की बेरा, झुक आई अंधियारी।

जीवात्मा महाप्रयाण के लिए समुद्यत है, चारों ओर अंधकार घिर आया है। ऐसे अंतिम समय में सभी से राम–राम कहकर अन्तिम प्रणाम करना इस विश्वास के साथ कि जीवात्माएँ कभी मिलकर बिछुड़ती नहीं हैं।

नैया कोउ कौ कोउ सहाई, सब दुनिया मंजियाई।
गीता अर्थ कृष्ण कर लाने पिता सो जाने माई।
जा दई देह आपदा अपने, की खों पीर पराई।
विपत समय में एक राम बिन, कोउ न होत सहाई।
अपने मर गए बिना ईसुरी, सुरग न देत दिखाई।

ईसुरी के साहित्य का धार्मिक पक्ष

ईसुरी की जितनी प्रतिबद्धता श्रृँगारिक फागों में मिली है, उससे कहीं अधिक व्यापक उनका धार्मिक पक्ष रहा है। उन्होंने रजऊ नायिका को सम्बोधित कर बहुत फागें कहीं, जिससे वे बुन्देली लोकसाहित्य में बड़े चर्चित हुए। किन्तु जीवन के उत्तरार्द्ध में उनका रुझान भगवान श्रीकृष्ण और श्रीराम की ओर उन्मुक्त हुआ और वे अपनी तिरपन वर्ष की अवस्था में वृन्दावन चले गए। ब्रजभूमि में घूम–घूम कर उन्होंने श्रीकृष्ण जी की लीलास्थली के दर्शन किए और अध्ययन भी। उन्हें सांसारिक जीवन के भटकाव ने थका दिया था। रजऊ और इस समाज की उपेक्षा ने उन्हें बहुत झकझोरा और वे श्रीकृष्ण की भक्ति के रस में रंगते चले गए। अपने तीन वर्ष के ब्रज प्रवास में उन्होंने भक्ति रस की ऐसी धारा बहाई कि ईसुरी के साहित्य की धारा ही बदल गई। भगवान तो भक्त

के वश में होते आए हैं। मुझे इस समय तुलसी बाबा का वह दृश्य याद आ रहा है, जब वे वृन्दावन गए और भगवान श्रीकृष्ण जी के दर्शन कर उनसे बोले –

कहा कहों छवि आपकी, भले बिराजे नाथ।
तुलसी मस्तक तब नबै, धनुष बाण लो हाथ ।

बाबा की हठ देख भगवान समझ गए कि भक्त हमारे दर्शन रामरूप में चाह रहा है। भगवान तो भक्त के वश में रहने वाले हैं। बंशीवाले ने भक्त को प्रसन्न करने के लिए तुरन्त ही भक्त की भावनानुरूप श्रीराम रूप धारण किया –

कित मुरली कित चन्द्रिका, कित गोपिन का साथ।
अपने जन के कारने, श्रीकृष्ण बने रघुनाथ।

ईसुरी जी को आत्मशान्ति की आवश्यकता थी। रजऊ की फागों से इतने विवाद उत्पन्न हो गए थे कि उनकी शान्ति छिन गई थी। ईसुरी शान्ति की खोज में वृन्दावन धाम गए और श्री राधाकृष्ण जी के चरणों में गिरकर आत्मशान्ति की इच्छा प्रकट करने लगे –

अपनों तुम्हें जान गिरधारी, हमने कीनीं यारी।
काउ और से करने होती, बहुत हती संसारी।
हर–हर तरां तुमारे ऊपर, तबियत भरी हमारी।
तुलसी गंगा जामिन जाकी, जनम ज़िन्दगी हारी।
ईसुर तकी श्यामली मूरत, गोरी नई निहारी।

× × × ×

जिन पै किरपा होत तुमारी, अन्तस अधिक मुरारी।
गओ आसमान बाकी ठोक, इन्द्र तखत में भारी।
बड़े सूर सरई में बेदे, समर भूमि नई हारी।
दये उतार पील ऐरावत, ऐसी पाती डारी।
कोउ भओ न होने ईसुर, अर्जुन सो धनुधारी।

× × × ×

झूला झूलत श्याम उमंग में, कोउ नहीं है संग में।
मन ही मन बतरात खिलत हैं, फूले हैं अंग–अंग में।

झौंका लगत उड़त जौ अंबर,रंगे हैं केशर रंग में।
ईसुर कात बता दो हमका, रंगे कौन के रंग में।

ईसुरी ने राधा–कृष्ण के दर्शन किए और उन्हीं के रंग में रंग गए। अपने तीन वर्ष के ब्रज प्रवास के दौरान उन्होंने श्रीकृष्ण–राधा के चरित्र पर सैकड़ों फागें लिखीं, जिनमें से कुछ को उदाहरण स्वरूप देना आवश्यक समझता हूँ –

रेखा श्याम मंजनि काड़ी, मोय दुबीचें आड़ी।
भाल चन्द्रमा के ऊपर हो, मदकन ने लट छांड़ी।
ब्रज के लोगन के देवे खां, मानो जमुना बाड़ी।
सुखकर सुन्दर श्रीकृष्ण की, मुख पै मूरत ठांड़ी।
बलदाऊ घर बैठे ईसुर, हेरें कर पै डाड़ी।

बारे बनमाली का जाने, कई जसोदा माँ ने।
जरती काये हमसो लालन, तुमें पड़े सिहाने।
मन आवै जितनी लै लेओ, जी खां जितनी चाने।
नौ लख धेनु नन्द बाबा के, जा में नई अगाने।
ईसुर ठाड़ी रात दुआरे, रोजउ देत उराने।

श्री कृष्णजी की बाल लीलाओं का चित्रण करते हुए ईसुरी कहते हैं कि ब्रज बालाएँ कन्हैया की रोज–रोज शिकायतें करने आती हैं तो नंदरानी उनसे कहती हैं– अरी ग्वालनियों! तुम मेरे लल्ला के क्यों पीछे पड़ी रहती हो। वह बेचारा अभी नासमझ है, तुम लोग क्यों उसके पीछे पड़ी रहती हो। कन्हैया को माखन की कोई कमी तो है नहीं। उसके बाबा नंद जी के पास नौ लाख दुधारू गायें हैं, उसे कोई भूख पड़ी है क्या, जो तुम्हारा माखन छीनने जायेगा। तुम क्यों रोज–रोज उसको डराने के लिए दौड़ी आती हो। मेरा लल्ला तो बेचारा भोला–भाला है, वह क्या जाने ये छल–छद्म। गोपियाँ यशोदा जी से कहती हैं–

अपने बनमाली खां तासें, कओ जसोदा माँ से।
ले गओ दूध दई की दोनी, उठा हमारे ना से।
नई डरात पराये घर में, जाबै पैठ सुलासें।
मैं तो बूंद–बूंद जोरन, ऐसौ आय कहां से।
ईसुर छूट जात हातन से, हारी नन्द लला से।

राधा–कृष्ण की भक्ति से ओत–प्रोत ईसुरी की फागें बड़ी चर्चित हुईं हैं और होली के पर्व के समय इन फागों को लोग बड़ी उमंग के साथ गाते हैं–

मोय बल रात राधिका जी को,करैं आसरो की को।
दीनदयाल दूर दुख मेलत, जिनको मुख है नीको।
पैले पार पातकी कर दए, मोहन सौ पति जी को।
कैसे लगत खात सब कोऊ, खाद कात ना घी कौ ।
ईसुर कछू काम की जानों, कदमन के डिग झीको।

ऐसी मान्यता है कि यदि भक्त भगवान राम की कृपा पाना चाहता है तो उसे श्री हनुमान जी की कृपा प्राप्त करने से श्रीराम प्रसन्न होते हैं और उसी तरह यदि श्रीकृष्ण की कृपा चाहिए है तो श्रीराधा जी को प्रसन्न करना जरूरी है। इसी कारण से ईसुरी ने श्रीकृष्ण की कृपा हेतु राधाजी की उपासना को माध्यम बनाने पर जोर दिया है। उनकी राधा जी की भक्ति विषयक फागें देखिये –

जो काउ गुन गावे राधा को, जनम सफल हो ताको।
ऐसी नौनौ नाम लाड़ली, लेतन लगे मजाको।
ऐसो नौनौ गौनो कर दओ, अजामील गना को।
जेई भजन में पाप ईसुरी, हरे कोटि वाधा को।

ईसुरी राधा जी की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कहते हैं –

जग में होत उजेरौ जी को, राधा कौ मुख नीकौ।
उतै हिरात परब हीरन की, कुन्दन कौ रंग फीकौ
जौ रंग रूप पाइए कांसे, विरन करेजौ झीकौ।
ईसुर सदा स्वाद वानो लय, सुकस सनेह अमी कौ।

राधा जी के रूप सुन्दरता को बढ़ाने वाले गहनों की तारीफ करते हुए ईसुरी कहते हैं कि गहनों के धारण करने से राधा जी का रूप निखर रहा है और राधा जी के अंगों में पहनने से गहनों का महत्त्व बढ़ गया है।

कानन डुले राधिका जीके, लगे तरकुला नीके।
आनन्द कन्द चंद के ऊपर, दो तारागन झीके।
परतन पसर परत गालन पै, तरें झूमका जीके।
जिनके घर से जौ पैराऔ, और जनन ने सीके।
श्याम सनेह ईसुरी देखत, ब्रजवासी बस्ती के।

राधा–श्रीकृष्ण से इतना प्यार करती थी कि उन्हें सदैव श्री कृष्ण के पास जाना,

उनसे मिलना बातें करना अच्छा लगता था। जिस तरह गीत गोविन्द में जयदेव ने राधा–कृष्ण के प्रेम–प्रसंगों, केलि–कथाओं तथा उनकी श्रृँगारिक अभिसार लीलाओं का रहस्यमय चित्रण किया है, उसी तरह ईसुरी ने राधा–कृष्ण की प्रीति की रीति का वर्णन अपनी फागों के माध्यम से किया है –

राधा आउत जात कुंवारी, दई बेचन गिरधारी।
देउ अगोऊ गैल गोकुल की, मिल जै प्रानन प्यारी।
जांचो चलौ जान न पावै, जा सक की हुसियारी।
लेऊ चुकाय जगात जनम की, है माखन बेपारी।
ईसुर होत चोर की सौ लों, साउ की एक मुरारी।।

गीत गोविन्द में जयदेव जी ने कहा है कि राधा जी भगवान श्री कृष्ण से इतना अधिक प्यार करती थीं कि वे उनके बिना एक पल भी रहना नहीं चाहती थी–

रतनविनि हतमपि हार मुदारम्।
सा मनुते कृश तनु रति भारम्।
राधिका विरहे तव केशव माधव विष्णों।

राधा की सखी श्रीकृष्ण जी के पास जाकर कहती है कि हे माधव! हे केशव! आपके वियोग में राधा इतनी व्याकुल है कि वह अपना सब कुछ भूल गई है। वह इतनी दुबली–पतली हो गई है कि अपने गले में पहने हुए हार का बोझ भी सहन करने में सक्षम नहीं है। वह आपकी प्रतीक्षा में विह्वल है। वह आपके प्रेम में पागल सी होकर आपसे मिलने को घर से निकल पड़ी है।

राधा लाड़ करै गिरधर पै, रूपै न अपने घर पै।
उरझे से सुरझे ना नैना, जी कै पीताम्बर पै।
कोउ बात यो फार सामने, कै नई सकत जबर पै।
ईसुर जात मोह के बस में, सती चढ़ी सरबर पै।

ईसुरी राधा को बहुत चतुर–स्यानी कहकर उनके सम्बंध में कहते हैं कि राधा जी ने श्रीकृष्ण को अपने प्रेमजाल में इस तरह फँसा रखा है। राधा–कृष्ण प्रसंग की फागों में इसुरी की यह फाग बड़ी सुन्दर बन गई है –

ऐसी चतुर राधका जी ने, तिरलोकी बस कीने।
जानौ सुनी बाह सई जाने, कई स्यावास सबीने।
जौन हते काउ के जाने, ते भये क्वाल नवीने।

बिलखत फिरत बनई बन व्याकुल,जादू से कर दीने।
बेदन कये गांय ना ईसुर, के रस कौन कबीने।

राधा और कृष्ण का प्यार हृदय की गहराई में जाकर था। जितना श्रीकृष्ण जी राधिका से प्यार करते थे, उतना ही राधा श्रीकृष्ण से। वे एक दूसरे के बिना एक पल भी नहीं रहना चाहते थे। गीत गोविन्द में जयदेव जी कहते हैं –

तानि स्पर्शसुखानि ते च तरल स्निग्धा दृशोर्विभ्रमा।
स्तद वक्त्राम्बुजसौरभं स च सुधास्यंदी गिरांवक्रिमा।
सा बिम्बाधरमाधुरीति बिषयासंगेऽपि मन्मानसं।
तस्यां लग्न समाधि हन्त विरह व्याधिः कथं वर्तते।

श्रीकृष्ण कहते हैं कि यद्यपि मैं अन्यान्य गोप–गोपियों के साथ रमण कर रहा हूँ, किन्तु मेरा मन राधा जी के मोहक अंगों के स्पर्श सुख के अनुभव से सदैव पुलकित होता रहा है, उसके चंचल और स्निग्ध कटाक्षों का आनंद लेता रहा है, उसके मुखार बिन्द की सुगंध का पान करता रहा है। अमृत के समान मधुर एवं मोहक उसकी भोली तथा निश्छल वाणी के श्रवण का सुख अनुभव करता रहा है, किन्तु मेरा हृदय उनके ध्यान में ही खोया हुआ है। राधा के बिना मेरा मन नहीं लगता है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैंने मात्र गोपियों के स्नेह पूर्ण आग्रह को गौरव दिया है, अन्यथा राधा को छोड़कर मेरे मन ने किसी अन्य सुन्दरी को कभी नहीं चाहा है। इस प्रकार श्रीकृष्ण की राधा में और राधा की श्रीकृष्ण में अनन्य अनुरक्ति निश्छल आसक्ति जिसकी चरम परिणति नित्य संयोग में होती है। उसी तरह ईसुरी जी ने राधा–कृष्ण के शाश्वत प्रेम का चित्रण किया है–

नैना श्री वृषमान कुंवरि के, दरस लेत गिरधर के।
हैं के नई गुलाब फूल गए, बच्चा भूल भंवर के।
अंजन मुकुर कंज बन रंजन, रंजन बारे सरके ।
ईसुर तरन अरुन अलसाये, देखे बड़ी फजर के।

ईसुरी ने राधा और कृष्ण के द्वारा होली खेले जाने का बड़ी रसमयता के साथ वर्णन किया है –

ब्रज में खेलें फाग कनाई, राधे संग सुहाई।
चलत अबीर रंग केशर को, नभ अरुनाई छाई।

लाल–लाल ब्रज लाल–लाल बन, बीथन कीच मचाई।
ईसुर नर नारिन के मन में, अति आनंद समाई।

× × × ×

भीजीं फिरैं राधिका रंग में, मन मोहन के संग में।
दूध की धूमर धाम मचाई, मजा उड़ावत मग में।
कोऊमाजूम धतूरा फांके, कोउ छका दह भंग में।
तन कपड़ा गए उगर ईसुरी, करी ढांक सब ढंग में।

× × × ×

केशव दई श्यामता अलिखां, गई बृषभान महल खां।
वारि पात जल जात मांग पर, मांजद खल के मल खां।
बेनिसिरी राधिका जू की, तिरबेनी के फल खां।
ईसुर तरन लगे जे पानी, जानौ का भई कलिखां।

ईसुरी ने अपने वृन्दावन निवास के दिनों में कृष्ण चरित्र विषयक जिन–जिन फागों की रचना की है, उनमें से बुन्देली ग्रामीणों से जो उपलब्ध हो सकी हैं, उनको दिया जा रहा है –

दिन के मिलने हेतु सिधारी, श्री बृजभान कुमारी।
कुवले फूल कमल दल संपुट, निघा चकोरन डारी।
आवो भयो जात रई भीतर, मकरन्दन अंधियारी।
श्री बृजभान भुवन में ईसुर, दीपक देह दिवारी।

झूला झूलत श्याम उमंग में, कोउ नहीं है संग में।
मन ही मन बतरात खिलत हैं, फूले हैं अंग–अंग में।
झौंका लगत उड़त जौ अम्बर, रंगे है केशर रंग में।
ईसुर कात बतादो हमकों, रंग कौन से रंग में।

जब वसुदेव जी बालकृष्ण को मथुरा के कैदखाने से ब्रज में नन्दबाबा के घर ले जा रहे थे, तब यमुना नदी को पार करते समय यमुना श्रीकृष्ण के चरण स्पर्श करने के लिए बढ़ रही हैं। वसुदेवजी प्रभु लीला को समझकर आगे बढ़ते जा रहे हैं और यमुना बड़े वेग के साथ उफान पर है। प्रभु ने यमुना का आशय समझकर अपनी टांग यमुना जल को स्पर्श करा दी । यमुना प्रभु चरण स्पर्श से शीघ्र उतर गई और वसुदेव जी यमुना पार कर गए। ईसुरी ने इस दृश्य को अपनी फाग में लिया है, देखें –

रेखा श्याम मंजनि काड़ी, मोय दुबीचें आड़ी।
भाल चन्दमा के ऊपर हो, मदकन ने लट छाड़ी।
ब्रज के लोगन के देवे खां, मानो जमुना बाड़ी।
सुखकर सुन्दर श्रीकृष्ण की, मुख पै मूरत ठाड़ी।
बलदाऊ घर बैठे ईसुर, डेरे कर पैं डाड़ी।

× × × ×

गुइयां मन मोहन के मारें, जमुना गैल बिसारें।
जब देखौ तब खड़ौ कंज में, गए कदम की डारें।
गैल घाट को हँसो खेलबो, जा नई चाल हमारें।
रैबो कठिन हमारे ईसुर, जदु बंसिन के मारें।

श्रीकृष्ण, इन्द्र के कार्य व्यवहार से अप्रसन्न थे। उन्होंने ब्रजवासियों से इन्द्र की वजाय गोवर्धन की पूजा करा दी। इन्द्र नाराज हो गये और ब्रज को बर्बाद करने के लिए घनघोर वर्षा करनी प्रारंभ कर दी। सात दिन रात भारी वर्षा कर ब्रज को डुबाने की चेष्टा में इन्द्र लगा था, किन्तु कृष्णजी ने अपनी एक अंगुली पर गोवर्धन पर्वत उठा लिया और ब्रजवासियों की रक्षा की। ईसुरी ने इसी दृश्य को अपनी फाग में लेकर वर्णित किया है –

बरसौ जा ब्रज में बैजावै, मेघईं इन्द्र सुनावैं।
सात दिना और सात रात लौ, बूंदें ग़म ना खावैं।
ब्रजबासिन के घर अंगना में, जल जमुना कौ धावै।
लओ उठा गोवरधन नख पै, छैल छत्र पर छावै।
कैसे मारे मरत ईसुरी, जिनको श्याम बचावै।

× × × ×

बा दिन बांसुरिया के सुरकी, बंशी कैसी मुरकी।
जौ भौ हाल कान से लगके, खाल फूट गई उरकी।
हाँ हो आई भनक के परतन, झाक विरह के जुरकी।
ईसुर भमां गए बहुतेरे, विष की दुरकन ढुरकी।

× × × ×

सखीरी भाग हमारे भारी, हार गए गिरधारी।
दस और चार भुवन चौदा में, जिने भजत संसारी।

राम–कृष्ण में भेद कहां है, जिन गौतम तिय तारी।
पठये सुरग मरीच सुबाहू, तकत ताड़का मारी।
हैं गरीब के नाथ ईसुरी, दीनन के हितकारी।

× × × ×

गुइयां काके नाते गारी, देत हँसे गिरधारी।
ना कउं इतै सासुरौ मोरो, ना उनकी ससुरारी।
बसती सास ससुर की नईयां, ना है बाप मतारी।
एकउ गांव बसत हैं ईसुर, सरगै जाल ना सारी।
दई मारे को सात होत जब, कएं चाय बोदारी।

रइओ मनमोहन से बरकीं, तुम नई भई अहर की।
होत भोर जमुने ना जइयो, दैकें कोर कजर की।
उनकौ राज उनई की रैयत, सिर पर बात जबर की।
ईसुर कात तला में बसकें, सैये सान मगर की।।

× × × ×

नैना मोसे लगे दिलवर, घरै चलो गिरधर के।
उनखां चलो देखिए फिर कें, भर के एक नजर के।
कोउन के भीतर नों भर गए, वे रंग पीताम्बर के।
जां चित चड़े लाज ता खोई, ना रए घूंघट तइ के।
ईसुर दये मोए करुनानिधि, दरसन दोर बगर के।

ईसुरी ने गोपियों के विरह की व्यथा का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। जिस तरह सूरदास जी ने श्रीकृष्ण के द्वारका चले जाने पर गोपी और ग्वालों की विरह पीड़ा का वर्णन भ्रमर और उद्धव जी के साथ करके दर्शाया है–

मेरे नैना बिरह की बेल बई।
सींचत नीर नैन के सजनी, मूल पताल गई।
विगसति लता सुभाय आपने, छाया सघन भई।
अब कैसे निरुवारौ सजनी, सब तन पसरि छई।

ठीक उसी तरह ईसुरी ने गोपियों की विरह दशा का वर्णन किया है –

जब से ब्रज छोड़ो नन्दलाला, सोच करैं ब्रजबाला।

दीजै संघ मिरग की छाला, औ तुलसी की माला।
दीजे दोष कहां काऊ खां, भई सो लिखी कृपाला।
ईसुर कोउ देत ना देखे, धुंआ पराई साला।

× × × ×

राजा भए द्वारका जाकें, गोकुल को दई खाकें।
कारी लकुट कमरिया कारी, रहत हते तन ढांके।
खिरके बहुत बरेदी जिनके, जाने धेनु चराकें।
तन–तन छांछ मांगते फिरते, घरन–घरन में जाकें।
ईसुर का औखाद नन्द की, जाए जशोदा माँ के।

श्रीकृष्ण जी जब ब्रज को छोड़कर द्वारका चले गए। ब्रजवासी उनके वियोग में बड़े उदास एवं दुःखी रहने लगे थे। जब श्री कृष्ण जी ने उद्धव को ब्रज भेजा तो वे गोपियों और ग्वालों से कृष्ण जी का संदेश कहते हैं। गोपियों की दशा बहुत दयनीय हो रही थी। वे श्रीकृष्ण जी के विरह में बड़ी व्याकुल थीं। सूरदास जी ने इस प्रसंग में कहा है कि –

ऊधो हम हैं तुम्हारी दासी।
काहे को कटु बचन कहत हो।
करत आपनी हाँसी।

× × × ×

ऊधो इतनी बात श्याम सों।
समय पाय कहिबी।
घोष बसत की चूक हमारी।
कछू न जिय गहिबी।

राधा जी उद्धव से अपने स्वयं के दोष गिनाने लगती हैं। वे अपनी एक–एक त्रुटि का स्मरण करती हुई व्याकुल होती हैं –

मेरे मन इतनी सूल रही।
वे बतियां छतियां लिख राखी, जे नंदलाल कही।
एक दिवस मेरे ग्रह आए, मैं दधि मथति रही।
देखि तिन्हैं मैं मान कियो रखि,सो हरि गुसा गही।

वे दुखित होकर कहती हैं कि मैं अपने दोषों का कहाँ तक वर्णन करूँ, मेरी ही गलतियों से नाराज हो कन्हैया हमें छोड़कर चले गए हैं –

कहां लग मानिए अपनी चूक।
बिनु गोपाल ऊधो मेरी छाती, न गई ह्वै टूक।

उसी तरह ईसुरी ने अपनी फाग में कहा –

जोंगन भई राधका तोरी,बरस बीस की गोरी।
राख लगाए लटे छुटकाएं, डरी कंधा पै झोरी।
गावें बजत चमीटा बुटका,चमक रयीं ना चोरी।
फेरो देत फिरत फिरकी लै, ब्रज बासन की खोरी।
उन गुपाल से कह्यो इसुरी, जै गुपाल की मोरी।

राधा उद्धव जी से कहती हैं –

ऊधो ल्याए जोग की माला,दिवा पठई नंदलाला।
अलबेलिन खां सेली सिंगी, छाप तिलक मृगछाला।
राख लगाय बांद के कंठी, बनन लगी बृजवाला।
संतन संग ईसुरी बादी, जमुना तट पै साला।

उद्धव जी जब श्रीकृष्ण जी का संदेशा लेकर ब्रज आते हैं तो उनका संदेश पाकर राधा बड़ी विकल हो जाती हैं। वे कृष्ण के राग में इस तरह विह्वल हो जाती हैं कि अपनी सुधबुध भूल जाती हैं। ईसुरी ने उनकी दशा का वर्णन करते हुए कहा है –

पाती छाती सौ चिपकाई, कृष्णचन्द्र की आई।
हातन हात लई गोपिन के, राधा जुए गुआई।
अब भगवान भए हैं सूदे, ऊधौ खां पहुंचाई।
समाचार लिए दिए ईसुरी, सब खां बांच सुनाई।

ईसुरी कहते हैं कि राधा जी ने उद्धव से कहा कि ऊधो आप कन्हैया से कहना–

अपनों तुमें जान गिरधारी, हमने की नी यारी।
काउ और से करने होती, बहुत हती संसारी।
हर–हर तरां तुमारे ऊपर, तबियत भरी हमारी।
तुलसी गंगा जामिन जाकी, जनम ज़िन्दगी हारी।
ईसुर तकी श्याम की सूरत,गोरी नई निहारी।

राधा जी शिकायत भरे लहजे में उद्धव जी से कहती हैं कि कन्हैया पूरे धोखे बाज निकले हैं। हम से मीठी–मीठी बातें करके प्यार में लहा लिया और अब विरह अग्नि में जलने को छोड़कर चले गए हैं। ईसुरी ने राधा की ओर से कृष्ण को संदेश भेजा है –

जासौं जरत रात है छाती, को है कीको साथी।
केबू करे लगन ना पैहें, हवा देह में ताती ।
ना मौखाद संदेशे आए, न लिख भेजी पाती।
कौने गुना खबर बिसरा दई,मैं अपराधिन कांती।
ईसुर कहूं भूभ ना बादर, भए भीम के हाती।

राधा का श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा में व्याकुल रहना और श्रीकृष्ण का उनके पास न आना पाकर राधा के मन में यह कुविचार उत्पन्न हो जाता है कि कन्हैया किसी दूसरी रमणी के साथ रति विलास करके प्रातः में लौटे हैं। जयदेव जी ने गीत गोविन्द में इस प्रसंग पर जिस तरह कहा है –

तवेदं पश्यन्त्या प्रसर दनुरागंबहिवि,
प्रिया पादालक्तच्छुरितमरुणच्छाय हृदयम्।
ममाद्य प्रख्यात प्रणय भरभरंगेन कित,
त्वदालोक शोकादपि किमपि लज्जां जनयति।

राधा जी कहती हैं– हे छलिया कन्हैया! तुम जिस युवती के साथ रात बिताकर आए हो, उसके पैरों का महावर तुम्हारे शरीर एवं वस्त्रों में लगा है और तुम मन ही मन प्रसन्न दिख रहे हो । इससे साफ तौर से स्पष्ट हो रहा है कि तुम मुझसे बनावटी प्यार दिखा कर मुझसे धोखा कर रहे हो, मुझे तुम्हारे इस कपटपूर्ण व्यवहार पर क्रोध और लज्ज़ा आ रही है। ठीक उसी तरह ईसुरी ने अपनी फाग में कहा है –

ओई घर जाओ मुरलिया वारे, जहां रात रए प्यारे।
अब आवे को काम तुमारो, का है भवन हमारे।
हेरें बाट मुनइयां हुईए, करैं नैन कजरारे।
खासी सेज लगा महलन में, दियला धर अजयारे।
भोर भए आ गए ईसुरी, जरे पै फोरा पारे।।

× × × ×

करिया बूंदा बुंदकातर कौ, तक बेंदा ऊ उर कौ।

सनेय समान गुरओ होवे, मान चन्द्र के घर को।
देखो देतई ते सुख देतन, मिलवौ अरि से अरकौ।
देत झमाक ढांक मुख झझका, लग ना जाये नज़र कौ।
ईसुर दई ब्रषभान लाड़ली, मनहर लव गिरधर कौ।

ईसुरी तीन वर्ष तक ब्रज में रहे और उन्होंने कन्हैया की बाल लीलाओं का आनंद लिया। ग्वाल–गोपियों के प्रेम प्रसंग सुने और द्वारका चले जाने पर गोपियों की विरह व्यथा। उद्धव का ब्रज आना तथा गोपियों और ग्वालों का उनसे मिलन, संदेशों का आदान–प्रदान की पूरी लीलाओं के रसानन्द में मगन हुए। वहीं उन्हें प्रेरणा मिली कि भगवान श्रीकृष्ण ने तुलसी बाबा की ज़िद को पूरा करने के लिए श्री राम रूप धारण कर बाबा को दर्शन दिए थे, तो उनका मन श्रीराम की लीलाओं और उनके लीला धामों के दर्शन करने का हो आया। ईसुरी एक वर्ष तक चित्रकूट में रहे और वहाँ अनेक सतसंगों के माध्यम से पुरुषोत्तम श्रीराम की नर लीलाओं को सुना गुना और फिर फागों में श्रीरामचरित को भी गढ़ा। ईसुरी की फागों में रामचरित्र को देखिए –

जिनके रामचन्द्र रखवारे, को कर सकत दवारे।
धर नरसिंग रूप कड़ आये, हिरनाकुश कौ मारे।
राना ज़हर दियों मीरा को, पीतन प्रान समारे।
मसकी उतै ग्राह की गरदन, झट गजराज निकारे।
ईसुर बचा लई है जिनने, सिर से गाज हमारे।

ईसुरी जी ने कहा है कि जिनके ऊपर श्रीराम जी की कृपा है, उनका कोई भी कुछ बिगाड़ नहीं सकता। वे जिसकी रक्षा करते हैं, उसका कभी अनर्थ नहीं हो सकता। श्री भगवान ने प्रहलाद की रक्षा के लिए नरसिंह रूप धारण किया और खम्बा फाड़कर बाहर आकर प्रहलाद के प्राण बचाए। मीरा को उनके देवर राणा ने ज़हर देकर मारने का प्रयास किया, मीरा ज़हर पी गईं, किन्तु उनके ऊपर जहर का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। ग्राह ने गजराज की गर्दन पकड़ ली और उसे मार डालने के प्रयास करने लगा, किन्तु वह गजराज का कुछ भी नहीं बिगाड़ पाया। उसी परमपिता परमेश्वर ने ईसुरी की रक्षा की है। बड़े–बड़े लोग उन्हें बदनाम करने तथा बेइज्जत करने के लिए प्रयत्नशील रहे हैं, किन्तु ईसुरी का भी कुछ भी नहीं बिगाड़ सका।

ईसुरी ने सीता स्वयंवर के धनुष भंग, परशुराम जी का कोप, सीता के द्वारा राम को वरमाला पहनाने के बाद राम विवाह का सुन्दर वर्णन किया है –

जिन खौं ब्याई जानकी जाने, शम्भु शरासन ताने।
भरन लगी कंचन की मंचे, झरन लगे मैदाने।
समाचार लिख दिए नृपति ने, न्यौते करे रमाने।
दुकन लगे महिपाल ईसुरी, बजने लगे सेहाने।।

ईसुरी ने कैकेई द्वारा राजा दशरथ से दो वर मांगने तथा राम को वनवास और भरत को अयोध्या की राजगद्दी देने के प्रसंग पर बड़ी सुन्दर फागें कही हैं –

राजा राज भरत जू पावें, रामचन्द्र वन जावें।
कैकेई बैठी कोप भवन में, जौ वरदान मंगावें।
करदो अवधि अवध के भीतर, चौदई बरसै आवें।
आगे कुंआ दिखात ईसुरी, पाछें बेर दिखावें।

× × × ×

बन खां पठे दए दोउ भइया, काये कैकेई मैया।
पिता पठे सुरधाम बोर दई, रघुवंसिन की नइया।
हती सुमित्रा कौसल्या के, एकई एक डरइया।
ईसुर परी अवध में कारी, को पतभांत रखइया।

वनवास के दौरान सीता जी का अपहरण हो गया। इस प्रसंग पर सीता हरण के लिए मारीच का कपट मृग बनना, राम का मृग के पीछे जाना, मारीच के द्वारा श्रीराम की आवाज़ में आर्तपुकार लगाना तथा सीता जी द्वारा लक्ष्मण को श्रीराम की सहायता हेतु जाने का आग्रह करना तथा लक्ष्मण जी द्वारा धनुष रेखा के भीतर सीता को रक्षित करने वाली बातों को ईसुरी ने अपनी फागों में बांधा है –

हो गओ हरन जानकी जीकौ, चारों कौन किसी कौ।
खेंचत गए धनुष की रेखा, जीके बाहर झीकौ।
काट कुड़ौल काल बस मईयां, लगो रावने नीकौ।
ढूंड़न चले गए लक्ष्मण जी, बाट करो हैं काकौ।
ईसुर अशुभ भओ दसकंदर, धरतन रथ पै छीकौ।

जब राम जी ने लछमन को वहाँ आते देखा तो वे समझ गए कि लछमन के साथ धोखा हुआ है। सीता जी निश्चय ही संकट में होंगी। वे शीघ्र पंचवटी की ओर दौड़े, किन्तु वहाँ पर सीता जी नहीं मिलीं। राम सीता के विरह में व्याकुल हो, उनकी खोज में जुट गए। जिस तरह तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में लिखा है–

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी, तुम देखी सीता मृगनैनी।

ठीक उसी तरह ईसुरी ने भी राम जी के विरह दुख को चित्रित किया है –

जीवन प्रान जानकी मेरे, बेई आंखन हम हेरे।
हिरा गई बनखण्ड विषे में, ज्वाब न देवें टेरे।
राजिव नैन भरे अंसुअन कें, परे दिनन के फेरे।
बिछुरन पर गई बेग सिया की, परमेसुर खा घेरे।
भल आई की बात ईसुरी, कबै विधाता टेरे।

रावण बड़े घमण्ड में सीता का हरण कर बड़े मद में जा रहा है। वह भगवान शिव की कृपा मानकर कह रहा है कि प्रभु शिव ने उसे तथा उसके राक्षसों को घर बैठे भोजन भेज दिया है। वह श्रीराम को तुच्छ प्राणी मान रहा है –

रावन राम ना मोसें बांचे, अभिमानी ने सांचे।
जा रामा कौ जोग जुरत तौ, बे दसकंधर बांचे।
सूरवीर की खात हटे जिन, नहीं बेर खा बांचे।
जिनके जियत जिमी के ऊपर, नजरन ककरा नाचे।
ईसुर और देव न ध्याये, सेवा का शिव सांचे।

× × × ×

रावन राम न मोसें गाए, प्रानई चाय गमाये।
वे तपसी दोउ बीर जिनन की, सीता खां हर ल्याए।
बन्दर रीछ सहायक जिनके, जात हमाएं खाए।
ऐसी मरजी करी शंभु ने, घर भोजन पहुंचाए।
नर कैसे दो बालक ईसुर, अवधपुरी से आए।

रावण ने सीता जी का हरण कर अशोक वाटिका में रखा था। उसने राक्षसियों को निर्देश दिए कि वे सीता को प्रताड़ित कर उसे रावण से राग–बिहार करने के लिए राजी करें। जब यह खबर मंदोदरी को लगी तो उसने रावण को समझाने का प्रयास किया। उस प्रसंग से सम्बन्धित ईसुरी ने फाग कही–

तुमने मोरी कही न मानी, सीता ल्याए बिरानी।
जिनकी जनकसुता रानी है, वे हरि अन्तरधानी।

हेम कंगूर धूल में मिल जें, लंका की रजधानी।
लै कैं मिलो सिकाउत जेऊ, मंदोदरि सियानी।
ईसुर आप हात हरिए जी, आनी मौत निसानी।

× × × ×

पीतम परे सिया को हरबो, तुम रावन न भरमो।
तुम हर लाए नार पराई, देख मारबो मरबो।
तुमने चाहो जगत मात खां, पाप की नज़र नज़रबो।
संवत सन आचई ईसुरी, राज विभीषण करबो।

रावण अपनी हठ पर अड़ा हुआ था। मंदोदरी और विभीषण ने बहुत समझाया, किन्तु उसने एक भी नहीं सुनी और सीता–राम को नहीं लौटाई। फलतः युद्ध छिड़ा। राम ने वानर सेना लेकर लंका पर चढ़ाई कर दी। चारों तरफ से लंका को घेर लिया। लक्ष्मण–मेघनाद का भयंकर युद्ध हुआ। मेघनाद ने लक्ष्मण को शक्ति मार कर घायल कर दिया। लक्ष्मण बेहोश पड़े हैं। राम बड़े दुखित होकर विलाप कर रहे हैं। ईसुरी ने इस प्रसंग को अपनी फाग में लिया है–

रोयें लक्ष्मन खां रघुराई, विपत कटावन भाई।
मुख देवे कौं संग पठवा दए, हरष सुमित्रा माई।
मोरे हेतु बरस चौदा इन, बनई विपत मजयाई।
मोरे हेत खेत रन जाके, सकत सामने खाई।
ईसुर एक अपोंच बता गओ, शत्रु को वैद दवाई।

राम को विलाप करते देख वानर सेना बड़ी दुःखी थी। विभीषण के सुझाव पर हनुमान लंका के राजवैद्य सुषैन को ले आए। सुषैन ने लक्ष्मण को देखा और द्रोणाचल पर्वत से संजीवनी बूटी मंगाने का सुझाव दिया। द्रोणाचल पर्वत हिमालय पर्वत माला का एक भाग था। राम जी ने हनुमान को यह कार्य सौंपा। ईसुरी ने इसे अपनी फाग में कहा है–

जो कऊं बीत जामनी जैहै, का कोऊ मोसें कैहै।
मरे धरे लक्ष्मण हम देखे, जियत राम न रैहै।
सुनतन विपत अवध में परहै, जनक सुता तज दैहै।
फिर पाछूं के मूर संजीवन, लयें जात को खैहै।
ईसुर हनुमान है हूंके, थोरी रात अबैहै।

हनुमान जी द्रोणाचल पर्वत पर गए, किन्तु वे संजीवनी बूटी पहचान नहीं पा रहे थे। अतः उन्होंने द्रोणाचल पर्वत को ही उठा लिया। वे उसे लेकर आ रहे थे कि भरत जी ने उनपर बाण चला दिया। हनुमान जी भरत का बाण लगने से द्रोणाचल सहित जमीन आ गिरे। उन्होंने राम नाम लेकर आह भरी तो भरत जी समझ गए कि ये तो श्रीराम सेवक है। उन्होंने हनुमान जी को उठाया, परस्पर समाचार जाने, हनुमान ने युद्ध का हाल बताया और कहा कि मुझे सुबह होने के पूर्व युद्ध स्थल पर पहुँचना है। लक्ष्मण के प्राण संकट में हैं। भरत जी बड़े दुखी हुए और उन्होंने हनुमान जी को विदा किया।

वैद्य सुषैन ने संजीवन बूटी लक्ष्मण जी को सुंघाई। लक्ष्मण तत्काल उठ बैठे। लक्ष्मण ने मेघनाद से भयंकर युद्ध किया और उसे मार गिराया। मेघनाद की पत्नी सुलोचना उसके साथ सती हुई। इस प्रसंग पर ईसुरी ने फाग लिखी है, देखें–

सत्ती हुई सुलोचन रानी, मेघनाद संग स्यानी।
कटी भुजा ने कलम पकरकें, कई रनखेत कहानी।
चढ़ विमान पै चली राम लौ, सुमरत सारंग पानी।
सिर दओ सोई प्रीत अंतस की, परब्रह्म पहिचानी।
इन्द्रजीत संग जरी ईसुरी, रावन की रजधानी।

राम–रावण युद्ध में राम ने लंका पर विजय पाई और विभीषण को लंका का राज्य सौंपकर उनका राजतिलक किया। ईसुरी ने इस प्रसंग पर जो फाग कही, उसे देखिए–

जिनमें लंक विभीषण पाई, धन्य–धन्य रघुराई।
सोने पलंग फली स्वामी खां, विधि दई बनी बनाई।
जटल राशि लगी कंचन की, सेवन खां सिवकाई।
घूमन लगे निशान नोवदें, सुख संवद सानाई।
भजले राम नाम इक ईसुर, ऐसी होत कमाई।

इस तरह राम–रावण युद्ध में अन्याय और अत्याचार पर राम ने विजय प्राप्त की। रावण का सर्वस्व नष्ट हो गया। ईसुरी ने अपनी फाग में कहा है –

को रओ रावण के पन देवा, बिना किए हर सेवा।
करना सिंधु करौ कुल भर को, एक नाव कौ खेवा।
काल फंद अवधेश छुड़ाए, जै बोलत सब देवा।
बाकन लगे काग महलन पै, भीतर बसत परेवा।
ईसुर नास मिटानत पावत, पाप करे को मेवा।

ईसुरी कहते है, कि मनुष्य ऐसे दयालु भगवान का भजन क्यों नहीं करता है –

मनतें भजत काए नई रामें, आए आखिरी कामें।
सुआ पढ़ाउत गनका तर गई, सोंरी लेते नामें।
नाम लेत रैदास चले गए, चला चाम के दामें।
अपने जन की बेई निभावत, पठे दये सुर धामें।
ते नई भजत ईसुरी जाने, तोउ नरक के गामें।

अतः राम नाम बड़ा प्रतापी है। यदि मनुष्य अपना भला चाहता है तो राम नाम भजन करना चाहिए। ईसुरी कहते हैं –

लै ले राम नाम है सच्चा, लगै न दुख कौ दच्चा।
वरत अगन में कूदत आए, मनजारी के बच्चा।
हिरनाकुस प्रहलाद के लाने, कौन तमासो रच्चा।
ईसुर लै लै नाम चले गए, मीरा दोला फच्चा।

× × × ×

जी की लगी राम से दुरिया,कसें पराई पुरिया।
घंटा बजो भोग जब लागो,आई बसोर बसुरिया।
सब भगतन में शामिल चइये, ओई में भक्ति पतुरिया।
तुलसी भये सुनेर ईसुरी, भक्त माल को गुरिया।

ईसुरी की फागों में अश्लीलता

बुन्देली लोकसाहित्य के महाकवि ईसुरी का साहित्य काल ऐसे समय का है, जब भारत गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था। अंग्रेजी सत्ता थी और कुछ भारतीय जो अंग्रेजों के पक्षधर थे, उनकी जी हुजूरी कर माफीदार, ज़मीदार, दीवान आदि पदों पर जमे थे। भारतीय भोली–भाली जनता पर जुल्म ढाते थे। ईसुरी उन्हीं में से कुछेक की बर्बरता के शिकार हुए। उन्हीं ने ईसुरी की फागों को अश्लील साहित्य के रूप में प्रचारित किया और ईसुरी को विवादों के पटल पर लाकर खड़ा कर दिया। ईसुरी–ग्राम साहित्य के कवि हैं। ग्राम–साहित्य में श्रृँगार वर्णन करना कठिन कार्य होता है। जो भाव कोई नागरिक संकेत या ध्वनि में प्रकट करता है उसे भोलाभाला ग्रामीण अपनी सीधी–साधी भाषा में व्यक्त कर देता है। यही कारण है कि संस्कृत और हिन्दी साहित्य में जो बात लक्षणा और व्यंजना शक्तियों के माध्यम से व्यक्त की जा सकती है, उसे ग्राम–साहित्य में अभिधा से।

ईसुरी का जिस काल का कवि कर्म है, उस काल में आम जनता के पास मनोरंजन के कोई साधन नहीं थे। ग्रामीण जीवन में उन दिनों राई, कहरवा, रावला तथा फाग ही ऐसा माध्यम था, जिसके द्वारा कुछ मनोरंजन किया– कराया जा सकता था। साहित्य में रोचकता लाने तथा जनता को आकर्षित करने के लिए फाग साहित्य में तत्कालीन आवश्यकताओं को देखते हुए ऐसी कुछ शब्दावलियाँ जोड़ी जा रही थीं, जिनसे कवि सामान्य जनजीवन में व्याप्त कुरीतियों पर कटाक्ष कर सके, लोगों का ध्यान आकर्षित कर सके–जैसे बाल विवाह जैसी कुप्रथाओं की ओर इशारा करते हुए महाकवि ईसुरी ने अपनी फाग में कहा है –

का सुक भओ सासरे मइयां,हमें गए कौ गुइयां।
परवू करैं दूद पीवे कौं, सास के संगें सइयां।
दिन भर बनी रात संकोरन चढ़ें ससुर की कइयां।
भर–भर देबौ करें दूर से, देखत हमें तरइयां।
कटी बज्र की उम्र ईसुरी, लटी होत लरकइयां।

ईसुरी की जिन फागों को अश्लील कहकर उनको लांछित करने का उपक्रम किया गया है, उनका अध्ययन करने से ऐसा पाया गया कि कुछ–कुछ जगहों पर अवश्य गोपनीय अंगों के नाम तथा सुरत व्यापार केलि का अपनी अभिव्यक्ति में सहारा बनाया गया है, किन्तु उन्हें निन्दनीय अथवा प्रतिबंधित की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता।

जैसी की साहित्यिक मान्यता है कि 'काम' एक आदि प्रेरक शक्ति है। **लोकेषणा, वित्तेषणा और पुत्रेषणा** सब इसी के विविध रूप हैं। यही काम श्रृँगार का मूल भी है। रसराज श्रृँगार की प्रतिष्ठा को शाश्वतता प्रदान करने के लिए साहित्य में इसका समाविष्ट उचित माना गया है। जिस श्रृँगार वर्णन को ईसुरी की फागों में अश्लीलता कहा है, उससे कहीं अधिक गहराई में जाकर ईसुरी के पूर्व वाले महान कवियों ने श्रृँगार का समावेश अपनी रचनाओं में किया है। महाकवि कालिदास के द्वारा प्रयोग किए गए श्रृँगार का उदाहरण दिया जाना आवश्यक समझकर प्रस्तुत कर रहा हूँ–

भो भ्रातश्चलितोष्सि वैद्यकग्रहे कि तदुजां शान्तये,
कि ते नास्ति सके गृहे प्रियतमा सर्व गदंहन्ति या।
वातं तत्कुचकुम्भमर्दनवशात् पित्तं तु वक्त्रामृतात्
श्लेष्माण विनिहन्ति हन्त सुरत व्यापार केलिश्रमात्।। (शृति–14)

कालिदास ने कहा है एक व्यक्ति अपने मित्र से कह रहा है कि भाई तुम वैद्यराज के घर क्यों जा रहे हो? क्या तुम्हारे घर में सारी बीमारियों को दूर करने वाली प्रियतमा नहीं है जो पीन स्तनों के मर्दन से वात, मुख चुम्बन से पित्त और सुरत व्यापार केलि के श्रम से कफ को नष्ट कर देती है। इसी तरह महाकवि कालिदास ने श्रृँगार तिलक में कहा है –

अविदित सुखदुखं निर्गुण वस्तु किंचित्।
जड़मतिरिहि कश्चिन्मोक्ष इत्यावदो।
मम तु मत मनं स्मेरता रुण्यघूर्णन्यद
कल मदिराक्षीनीवि मोक्षो हि मोक्षः।। (शृति––24)

कुछ मूर्ख लोग सुख–दुख रहित गुणहीन वस्तु को मोक्ष कहते हैं। मेरे मत से तो तरुणी का नाड़ा खोलना ही मोक्ष है।

महाकवि वामन भट्ट ने बाण की वाणी में रसराज श्रृँगार का वर्णन करते हुए कहा है –

वेधो विष्णु महेश्वरप्रभूतित्रिः समाविता निर्जरैः।
राज्ञी शम्बरशासनस्य महती लोकत्रये दीप्यतु।
सत्स्वन्येष रसेषु चास्तु विजयी श्रृँगार एको रसः।
संनाहि स्तनमण्डलं मृगदृशांतारुष्यमुपजृम्भताम्। (श्रृँगार भूषण)

रसराज श्रृँगार, उसके स्थायी भाव रति और आलम्बन नायिका के सौन्दर्य और तारुण्य के प्रतीक तरुणी के स्तन मण्डल के प्रति कुछ परिवर्धन के साथ अपनी शुभकामना प्रकट करते हैं कि ब्रह्मा, विष्णु और शिवादि देवों के द्वारा अभिनंदित मदन महाराज की महारानी रति देवी त्रिलोक विजयनी हों, सुन्दरियों का विकसित स्तन मण्डल तरुणता का विकास करता हुआ मातृत्व ग्रहण कर अपनी सुधा–धारा से विश्व को संरक्षण प्रदान करे।

मात्र ईसुरी के ऊपर ही इस तरह के आरोप नहीं लगाये गए हैं, बल्कि महाकवि कालिदास, महर्षि जयदेव पर भी लोगों ने उनके साहित्य में अश्लीलता का दोषारोपण किया है। जयदेव ने मानवीय सौन्दर्य चित्रण में प्रकृति को बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। उन्होंने गीतगोविन्द में रसराज के माध्यम से श्रृतुराज वसंत, चन्द्र ज्योत्सना, सुरभित समीर तथा यमुना तट के मोहक कुंजों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। उन्होंने गीतगोविन्द में वैदर्भीरीति माधुर्य व्यंजक वर्णों वाली शैली का प्रयोग कर काव्य

में कहीं–कहीं दीर्घ समासों का प्रयोग किया है, जिसे लोगों ने अन्यथा मानकर कुछ का कुछ समझा है। वस्तुतः कवि ने विशेष–विशेष अवसरों पर सर्व साधारण के मनोनुकूल काव्य की रचना की है, जिसे शाश्वत श्रृँगार की मान्यता दिया जाना ही उपयुक्त है और उसे मान्यता मिली भी है।

राधा कृष्ण की केलि कथाओं तथा उनकी अभिसार लीलाओं का रसमय चित्रण गीतगोविन्द में कर उन्होंने श्रृँगार को मनोरम एवं उत्कृष्ट संज्ञा प्रदान की है, जिसे कुछ आलोचक भक्ति आलम्बन राधा–कृष्ण को श्रृँगार का आलम्बन बनाने का दोषारोपण करते हैं, जबकि दाम्पत्य प्रणय में उपलब्ध तन्मयता अथवा तल्लीनता के चरम उत्कर्ष की तथा भेद में अभेद की कल्पना के चूड़ान्त–निदर्शन की अभिव्यक्ति ही भक्ति के क्षेत्र में माधुर्य भाव की सृष्टि करती है। फिर ईसुरी के साहित्य पर अश्लीलता का दोषारोपण किया जाना कहीं नीति संगत नहीं लगता है। बाल और अनमेल विवाह की तथ्यात्मक झांकी प्रस्तुत कर ईसुरी ने न अकेले बुन्देलखण्ड की इस सामाजिक बुराई को उजागर किया है, बल्कि राजस्थान, बिहार, उत्तरप्रदेश के बहुत सारे पिछड़े क्षेत्रों की वास्तविकता को प्रकाश में लाने का प्रयास किया है। ईसुरी के सृजन काल में कुछ जातियों में गर्भ में विवाह सम्बन्ध तय हो जाते थे और वर–वधू को अपने–अपने पक्ष के नाई–नाइन गोद में लेकर परिक्रमा कराते थे। ईसुरी ने ऐसी कुप्रथाओं पर कटाक्ष किया है –

सैयां ऐंगर तनक ना आवैं, बाहर भग–भग जावैं।
हम अपनी सूनी सिजिया पै, जोबन मीड़त रावें।
पारे कौन यार कौं संग में, की खों गरे लगावैं।
भर गओ मदन बदन के ऊपर,किसविधि तपन बुझावैं।
ईसुर इन बारे बालम की, कालों दसा बतावें।

इन बेमेल जोड़ों के विवाह की कुप्रथा तथा बाल विवाह के दुष्परिणामों पर ईसुरी ने स्पष्ट करने का प्रयास किया है। कुछ जातियों में विवाह छोटी उम्र में हो जाते हैं। लड़कियाँ 13–15 वर्ष की उम्र में समझदार हो जाती हैं, जबकि लड़के इस अवस्था में अबोध रहते हैं। लड़की के शरीर को विकसित देख उसके माता पिता चाहते हैं कि लड़की अपने घर में रहे (ससुराल में पति के साथ) और वे विदा कर देते हैं। लड़कियाँ जब ससुराल से लौटती हैं तो उनकी समझदार सहेलियाँ उनसे उनके हालचाल पूछती हैं। ससुराल से लौटी लड़की अपने पति के सम्बन्ध में जो प्रक्रिया व्यक्त करती है उसका चित्रण ईसुरी ने बतौर नमूना अपनी फाग में दिया है –

हम धन कबै मायके जायें, जे बालम मर जाएं।
खेलत रात रोज लरकन में, परे रात मौ बायें।

दिन बूड़े से करत बिछौना, फिर ना जगत जगाएं।
देखी कांछ खोलकर मैंने, पौनी सी चिपुकाएं।
ईसुर कात भली थी क्वांरी, का भओ ब्याव कराएं।

लड़की अपने पति के बारे में कहती है कि ससुराल का जाना तो बेकार ही रहा है। मेरा पति तो बच्चा है, उसे शादी–विवाह, पति–पत्नी, रति प्रसंग आदि का ज्ञान ही नहीं है। वह तो लड़कों के साथ खेलता फिरता है और घर आकर थका–मांदा सो जाता है। मैंने कई बार जगाने की कोशिश की तो वह जगता ही नहीं है, उठता ही नहीं है। उसका शारीरिक विकास हुआ ही नहीं है और न ही वह वैवाहिक जीवन का मतलब जानता है। ऐसे विवाह से तो मैं क्वांरी ही भली थी।

इस फाग में संकेतों के माध्यम से बाल विवाह जैसी कुप्रथाओं की आलोचना की गई है। इसे यदि कोई अश्लीलता कहे तो इसे उसकी सोच ही कही जानी चाहिए ।

जब लड़की ससुराल जाती है और उसका पति उससे समुचित प्यार नहीं करता तो उसे ससुराल में रहना एक दिन के लिए भी अच्छा नहीं लगता है। वह चाहती है कि कैसे और कब उसे मायके जाने को मिल जाय। वह अपनी सहेली से कहती है –

सुख ना कछू सासरे गए कौ, सैंयां नैयां कये कौ।
रस ना लयो रसीले प्यारे,तन सुन्दर जी नये कौ।
स्वाद कछू है नइयां गुइयां, नर देही के लए कौ।
अब पछतावो होत ईसुरी, का करिए जर गए कौ।

यहाँ ईसुरी ने बाल विवाह की कुप्रथा के कुपरिणामों पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि ऐसे रिश्ते निभाने पर भी नहीं निभ पाते हैं। शादी सम्बन्ध विखण्डित हो जाते हैं। इस तरह की शादियाँ टूट जाती हैं। लड़कियाँ पति को छोड़कर भाग आती हैं। कई बार तो आत्महत्या जैसी घटनाएँ घट जाती हैं। या परिवार के बदचलन लोग उसकी मजबूरी का नाजायज उपयोग कर दुष्चरित्र पर उतर जाते हैं। इन परिस्थितियों को उकेर कर ईसुरी ने सच्चे सचेतक की भूमिका निभाई है, दिग्दर्शक की भूमिका निभाई है। उनकी फाग में उन परिस्थितियों को देखिए –

जौ जी ऐसे खां दओ जैहै, जी घर सुख में रैहै।
बीस बिसे बिसराए नाईं, खबर बखत पै लैहै।
सुने बात मोरे जियरा की, अपने जी की कैहै।
इतनउ भौत होत है ईसुर, मरे जिऐ पछतैहै।

पुरुष प्रधान समाज में पुरुष द्वारा बहुविवाह किए जाने की कुप्रथा प्राचीन काल से प्रचलन में रही है। यह एक ऐसी बुराई है जो मानव समाज की अस्मिता पर कलंक का धब्बा है। पुरुष समाज स्त्री को पतिव्रता होने की इच्छा रखता है और स्वयं बहुपत्नियों से रमण। यह पुरुष वर्ग की बर्बरता का प्रतीक है।

प्राचीन काल में राजा–महाराजा, दीवान, जमीदार कई पत्नियाँ रखते थे, किन्तु उनकी उन पत्नियों को पर्दे में कैद रहना पड़ता था। मनुष्य का यह दोहरा चरित्र समाज द्वारा कैसे स्वीकार्य रहा, आज भी प्रश्नांकित है।

सौतिया डाह के किस्से और दुष्परिणामों के अनेक दास्तान सभी के जाने–माने हैं। नारी की सबसे बड़ी पीड़ा यही होती है कि उसका पति उसे छोड़कर किसी दूसरी नारी से प्यार करे, उसे तड़पती छोड़कर किसी अन्य नारी से रति बिहार करे। ईसुरी के पहले अनेक कवियों ने नारी की इस विषयक पीड़ा का अपनी रचनाओं में चित्रण किया है। सूरदास गोपियों की विरह व्यथा का वर्णन करते हुए कहते हैं –

निरमोहिया सों प्रीति कीन्हीं, काहे न दुख होय।
कष्ट करि–करि प्रीति कपटी, लै गयो मन गोय।
काल मुख तें काढ़ि आनी, बहुरि दीन्हीं ढोय।
मेरे जिय की सोई जानै, जाहि बीती होय।
सोच आंखि मांजीठ कीन्हीं निपट कांची पोय।
सूर गोपी मधुप आगे, दरकि दीन्हों रोय।

इसी तरह सूरदास जी ने गोपियों की सौतिया डाह पीड़ा का वर्णन करते हुए कहा है–

ऊधो! जान्यो ज्ञान तिहारो।
जानौ कहा राजगति लीला, अन्त अहीर बिचारो।
हम सबै अयानी एक सयानी, कुब्जा सों मन मान्यो।
आवत नाहिं लाज के मारे, मानहु कान खिसयान्यो।
ऊधो जाहुं बांह धरि ल्याओ, सुन्दर श्याम पियारो।
ब्याहो लाख धरौ दस कुबरी, अन्तहिं कान्ह हमारो।
सुन री सखी! कछू नहिं कहिए, माधव आवन दीजै।
जबहिं मिलै सूर के स्वामी, हांसी करि–करि लीजै।

इसी सौतिया डाह को ईसुरी ने अपनी फागों में कहा है –

सैंया बिसा सौत के लाने–अंगिया ल्याए उमाने।
ऐसे और बनक के रेजा, अब ई हाट बिकाने।
उनने करी दूसरी दुलहिन, जौ जी कैसे माने।
उठै पैर दौरे हो कड़ने, प्रान हमारे खाने।
मयके से ना निगते ईसुर, जो हम ऐसी जाने।

अकेले ईसुरी पर यह आरोप उचित प्रतीत नहीं होता है। जयदेव ने भी गीतगोविन्द में सौतिया डाह का चित्रण किया है –

अथ कथमपि यामिनी विनीय स्मरशरजर्जरिताऽपि सा प्रभाते।
अनुनयवचनं वदन्तमग्रे प्रगतमपि प्रियमाह सवाभ्यसूयम।।

काम पीड़ा से बुरी तरह व्याकुल राधा ने श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा में ज्यों–त्यों करके जागते–ऊँघते, रोते–बिलखते भाग्य को कोसते रात बिताई। सबेरे जब श्रीकृष्ण उनके सामने आकर रात्रि में न आ सकने का कारण राधा जी को बताते हैं तो वे अपने आप पर काबू नहीं रख सकीं। वे अत्यंत तीव्र आक्रोश में श्री कृष्ण से कहती हैं –

रजनिजनित गुरुजागर रागकषायितमलसनिमेषम्
वहति नयनमनुरागमिव स्फुटमुदितरसाभिनिवेशम्।
हरि हरि याहि माधव याहि केशव मावद कैतववादम्।
तामनुसर सरसीरूहलोचन या तब हरति विषदम्।।

हे कृष्ण! तुम्हारे लाल और बोझिल बने नेत्र और सुन्दरी के चुम्बन के चिन्हों से अंकित नेत्रों से स्पष्ट होता है कि तुम सारी रात अपनी प्रेमिका के मोहक सौन्दर्य के मादक रस का पान करते रहे हो। अब सबेरा होने पर मेरे पास क्या करने आए हो, अब उसी के पास जाओ। मैं तुम्हारे वास्तविक रूप को भली प्रकार पहचान चुकी हूँ। अब तुम मुझे अधिक समय तक मूर्ख नहीं बना सकते।

इसी तरह ईसुरी ने भी अपनी फाग में कहा है –

ओई घर जाओ मुरलिया वाले, जहां रात रए प्यारे।
अब आबे को काम तुमारो, का है भवन हमारे?
हेरे बाट मुनइयां हुइए, करैं नैन कजरारे।
खासी सेज लगा महलन में, दियला धर उजियारे।
भोर भए आ गए ईसुरी, जरे पै फोरा पारे।

पुरुष समाज की बर्बरता का वह दृश्य तब सबसे भयातीत एवं निन्दनीय हो जाता है, जब अधेड़ से भी अधिक उम्र पार किया पुरुष अपनी बेटी से भी कम उम्र की लड़की से विवाह कर लेता है। वह अबोध बालिका जिसके शरीर का विकास भी नहीं हुआ होता है और कामी पुरुष उससे रति विहार करने पर अमांदा होता है।

पुरुष वर्ग की कामुकता का एक प्रसंग महाकवि बिहारी के सम्बन्ध में भी उल्लेख नीय है। बिहारी जी के रचना काल में जयपुर नरेश जयसिंह एक बालिका को विवाह कर ले आए और उसके प्रेम जाल में ऐसे मुग्ध हो गए कि राजकाज का काम छोड़कर उसके साथ महलों में ही रमे रहे। छः माह तक तो वे बाहर ही नहीं आए। उन्हीं दिनों बिहारी उनके राज में पहुँचे और महाराज जयसिंह से मिलने की इच्छा प्रकट की। मंत्रियों ने जब उन्हें राजा के हाल बताए तो उन्होंने एक दोहा लिखा और राजा के पास भेज दिया –

नहि पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास इहि काल।
अली कली ही सो बिन्ध्यों, आगे कवन हवाल।

यह दोहा पढ़कर महाराज जयसिंह की आँखें खुल गईं और वे आकर बिहारी जी से मिले और अपना राजकाज सम्भालने लगे। इसी संचेतनानुसार ईसुरी ने एक अबोध बालिका के माध्यम से उसके कामी पति को सचेत करने का प्रयास किया है –

जुबना छुऔ न मोरे कसकें, भरे नहीं रंग रसकें।
छाती के छाती से लगतन, और बैठ जैं गसकें।
छूतन रोम–रोम भए ठांड़े, प्राण छूट जै मसके।
कछुक दिनन की मानों ईसुर, फिर मस्कवाले कसके।

पुरुष समाज में दुष्चरित्र और दुष्कर्म की आदतें देखने में आती हैं। पुरुष अपनी सुन्दर, सुशील, सलोनी पत्नी को छोड़कर दूसरी औरतों के पास जाता है। मैंने छतरपुर के हनुमान टोरिया वाले मन्दिर में दीवाल पर लिखा एक दोहा पढ़ा था, जो पुरुष समाज को बड़ी नेक सीख देने वाला था –

पर नारी पैनी छुरी, तीन तरह से खाय।
धन छीनै यौवन हरै, मरे नरक ले जाय।।

किन्तु चरित्रहीन कामी पुरुष को ये सीखें कहाँ अच्छी लगती हैं। वे अंधे रहते हैं। ईसुरी तो सामाजिक चेतना के कवि हैं, उन्होंने जो देखा–सोचा–समझा और कह

दिया। वे दुष्कर्मी पति की पत्नी की पीड़ा की अपनी फाग के माध्यम से व्यक्त करते हुए कहते हैं –

रातै परदेशी संग सोई, छोड़ गओ निरमोई।
अँसुआ ढरक परे गालन पै, जुबन भींज गए दोई।
गोरे तन की चोली भींजी, दो–दो बार निचोई।
ईसुर परी सेज के ऊपर, हिलक–हिलक कैं रोई।

ईसुरी की फागों में नारी की पीड़ा का सजीव चित्रण देखने को मिलता है। वे पुरुष की बेहयाई को दर्शाते हुए कहते हैं –

बेला आदी रात को फूला, घर नई है दिल दूला।
अपनी छोड़ और की कलियन, भलौ भंवर ला भूला।
जो गजरा की खां पैराऊं, उठत करेजे सूला।
छूटन लागी पुहुप परागें, दृगन कन्हैया झूला।
ईसुर सुनत डगर घर आवें, नगर देत रमतूला ।

हर औरत की इच्छा रहती है कि उसका पति उसका हो कर रहे, उससे प्यार करे, उसके सुख–दुःख में साथ निभाए, किन्तु ऐसा होता नहीं है। नारी की पीड़ा का चित्रण कर ईसुरी ने कहा है –

कऔ जू किए लगै ना प्यारे, सखि अपने घरवारे।
ज्वान होंय चाय बूड़े बैसे, चाय होंय गबवारे।
बड़े सपूत खेत के जीते, चाय होंय रन हारे।
ईसुर करे गरे कौ कठला, हम खां बालम प्यारे।

किन्तु जब पति उसे छोड़कर दूसरी औरत के मोहपाश में हो तो फिर नारी को सहन नहीं होता। ईसुरी ने इस पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहा है –

भौंरा जात पराये बागैं तनक लाज ना लागै।
घर की कली कौन कम फूली, काये न लेत परागै।
कैसे जात लगाउत हुइयै, और आंग से आंगै।
जूंठी–जाठी पातर ईसुर, भावै कूकर कागै।

बेमेल शादियों के कई दुष्परिणाम सामने आते हैं। जब पुरुष जवान या अधेड़ होता है, तब छोटी उम्र की अबोध बालिका से विवाह करने से उस बालिका के साथ

अन्याय होता है और जब तक वह अपने यौवन पर आती है, तब पुरुष बुढ़ापे की ओर बढ़ जाता है। ऐसी स्थिति में नारी के साथ दोनों स्थितियों में अन्याय होता है। जब वह रति विहार योग्य नहीं होती है तो उसके साथ ज्यादती होती है और जब उसे काम सुख की जरूरत होती है, तब पुरूष उसे वह सुख देने में समर्थ नहीं रह जाता है। ईसुरी ने समाज की इन दशाओं–दिशाओं का बड़ी गइराई में जाकर अध्ययन किया और फिर इन कुरीतियों के विरोध में जनजागृति लाने के लिए अपनी फागों के माध्यम से जनसामान्य को संसूचित किया, उनकी इस संदर्भ की फाग देखिए–

अपने बालम के संग सोवे, भाग्यवान जो होवे।
लेत जात गालन को चूमा, जुबना जरब टटोवे।
लगी रात छतियों से छतियां, पाव से पांव विदोवो।
पकरे हाथ उंगरियां ठांड़ी, परे मजे मा घोवे ।
परे खुलासा घर में ईसुर, दिये नगारे चोवे।

बेमेल शादियों के दुष्परिणामों की व्यथा युवती किससे कहे। सारी–सारी रात बिस्तर पर करवटें बदलते गुजरती है और पति खाँस–खाँस कर। ईसुरी ने ऐसी युवतियों की पीड़ा व्यक्त करते हुए कहा है –

की सों कहें पीति की रीति, कये सें होत अनीति।
मरम ना जाने ई बातन को, को मानत परतीती।
सही ना जात मिलन को हारी, बिछुरन जात न जीती।
साजी बुरी लई सिर ऊपर, भई जो भाग बदी ती।
पर बीती नहिं कहत ईसुरी, कात जो हम पै बीती।

× × × ×

जुबना जिय पर हरन जमुरिया, भये ज्वानी की बिरिया।
अब इनके भीतर से लागी, झिरन दूध की झिरिया।
फौरन चले पताल तरैया, फोरन लगे पसुरिया।
छैल छबीलो छुअन ना देती, वे छाती की तिरिया।
जै कोरे मिड़वा कें ईसुर, तनक गम्म खा हिरिया।

पुरुष जवानी के नशे में दो–दो विवाह कर लेता है। कई बार पहली पत्नी के संतान नहीं होती है तो दूसरी धर लेता है। कभी–कभी चरित्रहीनता भी मजबूरी बन जाती है। किसी दूसरी अनब्याही या विधवा औरत से काम पूर्ति के चक्कर में पड़ने से उसके पेट में बच्चा आ जाने से भी शादी करनी पड़ जाती है। इन परिस्थितियों में

आदमी बड़ी उलझन में फँस जाता है। दोनों औरतें कलह करतीं है और आदमी बीच में पिसता है। ईसुरी ने ऐसे दृश्य देखे तो लोगों को चेतावनी देने के लिए ये फाग कही–

जो घर सौत–सौत के मारें, सौंज बने ना न्यारें।
गारी गुप्ता भीतर करतीं, लगो तमासौ द्वारें।
अपनी–अपनी कोद खां झीकें, खसम कौ फारें डारें।
सके न देख दोउ लड़ती हैं, किये संग लै पारें।
एक म्यान में कैसे पटतीं, ईसुर दो तलवारें।

इन परिस्थितियों में आदमी के हाथ केवल पश्चाताप लगता है। वह सिर धुनता है, रोता–चिल्लाता है, किन्तु 'अब पछताए होत का जब चिडिया चुग गई खेत।' इन्हीं विपरीत स्थितियों को देखकर ईसुरी ने लोगों को सचेत करते हुए ये फाग कही है –

जिदना तुम से कीनी यारी, गई मत भूल हमारी।
भये बरबाद अफाज कहाए, स्यान बिगार अनारी।
मो गओ लौट जान के खाई, खांड़ के धोखे खारी।
पीछू–पीछू हाथ बजाकें, हँसी करत संसारी।
अपने हातन अपने ईसुर, पांव कुलरिया मारी।

ईसुरी की जिन फागों में अश्लीलता का लांछन लगाया जाता है, जबकि ये सभी शाश्वत सत्यता का उदघोष हैं, संचेतना का आगाज हैं। ईसुरी ग्रामीण जनता के प्रतिनिधि कवि हैं। वे ग्रामीण जीवन में जो विरोधाभाश देखते रहे उसे बतौर समझाइस लोगों को फागों के माध्यम से सचेत करते रहे हैं। यह अकेले ईसुरी ने ही नहीं किया है, बल्कि महाकवि कालिदास, महाकवि केशव, महाकवि बिहारी, भर्तृहरि, जयदेव सभी ने अपनी बात सीधी–साधी भाषा में सपाट बयानबाजी के साथ कही है। ब्याज स्तुति में नारी रूप सौन्दर्य की प्रशंसा नारी के मन को उद्वेलित कर देता है और वह अपनी प्रशंसा सुनकर प्रशंसक के प्रति आकर्षित होने लगती है, जिससे प्रशंसक नर उसका दुरुपयोग करने लगता है। सभी कवियों ने अपनी–अपनी तरह से नारियों को ऐसे लोगों से सचेत रहने के लिए चेताया है।

अपनी प्रशंसा सबको अच्छी लगती है, चाहे वह नर हो या नारी। इसके लिए तरह–तरह के उपक्रम कर नर–नारी को और नारी–नर को आकर्षित करने का प्रयास करते हैं। इस प्रक्रिया में चेष्टाएँ–कुचेष्टाएँ, भावभंगिमाएँ प्रधानता के साथ सक्रिय भूमिका अदा करती हैं– भर्तृहरि ने श्रृँगार शतक में कहा है –

स्मितेन भावे न च लज्ज्या भिया पराङमुखैरद्धकटाक्षवीक्षणै।
वचोभिरीर्ष्याकलहेन लीलया समस्त भावैः खुलबन्धनंस्त्रियः।।

स्त्रियों का मुस्कराना, हँसकर मुँह फेर लेना, भावभंगिमा से लजाना, बातचीत के दौरान तिरछी नज़र से देखना, द्विअर्थी सम्वाद करना, विभिन्न प्रकार की लीलाएँ करना, ये सभी स्त्रियोचित बंधन हैं, जिनसे संसार का कोई भी पुरुष–स्त्री बंधनों से अपने आपको अलग नहीं रख सकता है।

भूचातुर्यात्कुंचतांक्षा कटाक्षाः दिनग्धा वाचोलज्जितान्ताश्च हासाः।
लीलामन्दं प्रश्थितं स्थितं च स्त्रीणामतेद् भूषणं चायुधं च।।

भौहों को नचाना, आँखों को मटकाना, रस भरी बातें करना, लाज से शरमाकर अपने आप में सिमट जाना और हँस देना, बांकी अदा से मटक–मटक कर चलना, ये सब स्त्रियोचित गुण हैं। जिस पुरुष पर ये हथियार चल जाते हैं, वह अपने होशो–हवास गवां देता है।

ईसुरी ने स्त्रियों के इन्हीं गुणों को अपनी फागों में लेकर लोगों को इन हथियारों से बचने की सीख दी है –

रजऊ हँसती नजर परे सें, नेहा बिना करे सें।
हम तौ मन खौं मारें बैठे, बरके रात अरे सें।
सांसऊं जिदना जिद आ जैहै, बचौ न एक धरे सें।
ईसुर मिलौ प्रान मिल जैहैं, कै बन आय मरे सें।

रजऊ नज़र मिलते ही हँसती है, भले ही हमसे प्रेम न करती हो। हम तो अब तक अपना मन मारे बैठे हैं। परन्तु जिस दिन जिद आ गई तो वह कैसे बचेगी? वह मिले तो प्राण मिल जाय या फिर अब मरकर ही बात बने।

औरत की इन अदाओं का पुरुष पर कैसा प्रभाव पड़ता है, ईसुरी ने कहा है–

कईयक हो गए छैल दिवाने, रजऊ तुमारे लाने।
भोर–भोर नौं डरे खोर में, घर के जान सियाने।
दोउ जोर कुआं पै ठांड़े, जब तुम जाती पाने।
गुनकर करके गुनिया हारे, का बैरिन से कानें।
ईसुर कात खोल दो प्यारी,मंत्र तुमारे लाने।

सुन्दरता की तारीफ सुनकर प्रसन्न होना नारी की कमजोरी है। पुरुष उसकी इस कमजोरी का फायदा उठाकर उसको बहकाने का प्रयास करता है। वे बड़े भाग्यशाली लोग हैं, जिनकी नारियाँ संयमी हैं और परपुरुषों के द्वारा प्रशंसा करने से लुभाती नहीं है, लेकिन बिरली हीं। नारी की सुन्दरता का वर्णन करते हुए भर्तृहरि ने कहा है –

गुरूणा स्तनभारेण मुख चन्द्रेण भास्वता।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रह्मयीव सा।।

उस नारी के दोनों स्तन गुरु ग्रह के समान भारी हैं, चन्द्रमा के समान प्रकाशित चेहरा और शनि की गति के समान मंद चाल देखकर यह कहा जा सकता है कि मानों सभी ग्रह सुन्दर नारी में समाये हुए हैं।

जब भर्तृहरि नारी की सुन्दरता का वर्णन इस तरह कर सकते हैं तो ईसुरी ने अपनी फागों में नारी अंगों की प्रशंसा कर दी तो उसे अश्लील कैसे कहा जा सकता है, बल्कि मेरे मत से तो ईसुरी के अन्तर्मन के भाव तो ऐसे हैं कि पुरुष नारियों के अंगों की प्रशंसा कर उन्हें बहकाने का प्रयास करते हैं, जिनसे उन्हें बचना चाहिए। देखिए ईसुरी की इस फाग में –

जुबना दए राम ने तोरें, सब कोउ आवत दोरें।
आए नहीं खाण्ड के घुल्ला, पिए लेत ना घोरें।
का भओ जात हाथ के फेरें, लए लेत न टोरें।
पंछी पिए घटीं नहिं जातीं, ईसुर समुद हिलौरें।

भगवान ने तुझे ऐसा यौवन दिया है कि सब कोई तेरे दरवाजे के चक्कर काटते हैं। पर ये जुबना शक्कर के घोड़े जैसे बने खिलौने नहीं हैं कि कोई घोलकर पी जायेगा। इन पर हाथ फेर लेने से तुम्हारा क्या बिगड़ जाएगा। जिस तरह पंछियों के पानी पीने से समुद्र खाली नहीं हो जाता है, उसी तरह यदि तुम अपने जुबनों पर हाथ फेर लेने दोगी, तो इनका कुछ भी नहीं बिगड़ जायेगा।

नारी की सुन्दरता का वर्णन कर उसे आकर्षित करने वाली प्रक्रिया उसकी नारीगत कमजोरी का लाभ उठाना है, जिसे हर युग में पुरुष ने प्रयोग किया है। जयदेव ने गीतगोविन्द में राधा–कृष्ण के विषय में भी इसी अकाट्य बाण का प्रयोग किया है–

मंजुतरकुंजतल केलिसदने
विलस रतिरभसहसितवदने।
प्रविश राधे! माध्व समीपमिह।।

जयदेव जी ने कहा है कि 'हे राधे! श्री कृष्ण के संग क्रीड़ा की तुम्हारी उमंग उत्कण्ठा की चरम सीमा को पहुँच गयी है। अर्थात् तुम अपने प्रियतम के साथ रति विहार के सुख भोग की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही हो। फिर यह मौन किंकर्तव्यविमूढ़ता कैसी? इस समय तुम रति विलास के लिए लताभवन में निर्मिति क्रीड़ागृह में शीघ्रता से प्रविष्ट हो जाओ तथा अपने प्रियतम श्रीकृष्ण के साथ रतिभोग का सुख लूटते हुए अपने जीवन को धन्य बनाओ।

जयदेव, भर्तृहरि, कालिदास और बिहारी रूप एवं अंग सौन्दर्य की प्रशंसा इस तरह कर सकते हैं, ईसुरी ने अपनी फागों में इस तरह कहा है–

राती बातन में बरकाएं, दबती नइयां छाएं।
आउन कातीं आईं नइयां, कातीं थी हम आएं।
किरिया करीं सामने परकें, कौल हजारन खायं।
इतनी नन्नी रजऊ ईसुरी, बूढ़न कौं भरमाएं।

इस फाग के माध्यम से पुरुषों द्वारा नारियों को बहकाने वाली चेष्ठाओं का वर्णन कर ईसुरी ने सचेत करने की बात कही है, तो वह अशलील कहाँ से हो गई।

पुरुष नारी की सहृदयता, उसकी सहजता को अपनी रसीली बातों से कुरेदकर आकर्षित करने का प्रयास करता है बहुत कम ऐसी नारियाँ होती हैं, जो उनकी प्रशंसा पूर्ण बातों के जाल से अपने आपको बचाए रख पाती हैं। ईसुरी पुरुषों की मीठी बातों को उदाहरण स्वरूप अपनी फाग में कहते हैं –

दिन भर दैबू करे दिखाई, जामें मन भरजाई।
लागी रहो पौर की चौखट, समझें रहो अवाई।
इन नैनन भर तुम्हें ना देखें, हमें न आवे राई।
प्रीति की रीति सहज ना ईसुर, आखन नहीं निवाई ।

तुम हमें दिन–रात दिखाई देती रहा करो, जिससे हमारा मन भरा रहे। तुम पौर की चौखट से लगकर खड़ी रहा करो, ताकि हमारा आना तुम्हें मालूम हो जाए। क्योंकि जब तक इन ननयों से हम तुम्हें देख नहीं लेते, हमें चैन नहीं पड़ता है। यह प्रीति बड़ी कठिन होती है, इसे करना तो आसान है, लेकिन निर्वाह करना बड़ा कठिन है। जब पुरुष द्वारा किसी नारी से ऐसा कहा जाता है तो उसका आकर्षित होना स्वाभविक है। ईसुरी ने इन बातों से सतर्क रहने की चेतावनी दी है।

ईसुरी की फागों को लोगों ने अन्यथा लिया है। इसी कारण से वे सब उनके प्रति दुराभाव पाल बैठे, जिनकी बेटियों–बहुओं और पत्नियों के नाम रज्जो, रजऊ या इन्हीं जैसे थे। वस्तुतः ईसुरी तो अपनी काल्पनिक नायिका रजऊ को संबोधित कर फागें कहते थे और उनमें सदैव सीख रहती थी कि लोग तरह–तरह की लुभावनी बातें कर–करके बहलाने का प्रयास करते हैं, तुम्हें उनसे बचकर रहना है। किन्तु लोगों कि ऐसी सोच है कि वे उन्हें बतौर नायक और उनकी काल्पनिक नायिका रजऊ को अपनी बेटी– बहू–पत्नी को समझ बैठे और ईसुरी पर आलोचनाओं के तीर छोड़ने लगे। उनकी ऐसी कुछ फागें उल्लेखनीय हैं, जिनसे ये भ्रामक स्थितियाँ उत्पन्न हुईं –

दिल की राम हमारी जाने, मित्र झूठ ना माने।
हम तुम लाल बतात जात ते, आज रात बर्राने।
सा परतीत आज भई बातें, सपनन काए दिखाने।
ना हो–हो तो देख लेत हैं, फूले नई समाने।
भौत दिनन से मोरो ईसुर, तुमें लगो दिल चानें।

× × × ×

तुम खां छोड़न नाहि बिचारें, मरवो लौ अख्त्यारें।
जब न हती कछू कर धर कीं, रए गरे में डारें।
अब को छोड़े देत प्रान से, प्यारी भई हमारें।
लगियो ना भरमाय काउ के, रइओ सुरत समारें।
ईसुर चाय तूमारे पाछूं, घलें सीस तरवारें।

ईसुरी का जीवन, उनका दर्शन, उनके आचार–व्यवहार को जाने बगैर जो उनकी फागों को सुनकर–पढ़कर उन्हें लुच्चा, उचक्का, छिनट्टा और जो मन में आता कह जाता है, किन्तु ईसुरी और उनके साहित्यिक मनोभावों को जानने के बाद उनके बारे में जो सोच बनती है वह और ही तरह के परिदृश्य गढ़ देती है। डॉ. राम विलाश शर्मा ने ईसुरी की रचनाओं को दोहरी नैतिकता के प्रति विद्रोह कहा है। ईसुरी को जीवन से, जीवन की वास्तविकता से, जीवन के आनन्द से, यौवन और यौवन उल्लास तथा इन्द्रियबोध के संसार से इतना प्रेम है कि वे बार–बार सामाजिक विवेचना की दीवार से टकराते हैं।

अकेला पुरुष (ईसुरी) क्या प्रेम के शाश्वत स्वरूप को जीवन्त कर सकता है? प्रेम तो दो दिलों के बीच उत्पन्न आनंद की अनुभूति है, जो बांटे से बढ़ता है। नदी की अपार

सतत् प्रवाहित हो रही जलधारा की तरह सदैव आगे बढ़ते जाना, कभी न थमना। आनन्द उल्लास और इन्द्रियबोध भी दोनों का शामिल होता है, तब रजऊ की सकारात्मक आवश्यकता होना स्वाभाविक है। ईसुरी ने इस कमी को रजऊ (काल्पनिक) नायिका से भरने का उपक्रम किया, जो नासमझ लोगों की मनोभूल बनकर उनकी आलोचना का केन्द्र बिन्दु बना।

विधिना करी देह ना मेरी, रजऊ के घर की देरी।
आउत जात चरन की धूरा, लगत जात हर बेरी।
जाते लगत चरन कमलन में, कुगत सुधरती मेरी।
लागौ आन कान के ऐंगर, बजन लगी बजनेरी।

ऐसी कल्पना मात्र एक सच्चा प्रेमी ही कर सकता है, जिसे शाश्वत प्रेमानन्द का ज्ञान हो, उसकी ह्रदयानुभूति हो। अन्यथा ये दम्भी पुरुष समाज नारी की चरण रज – 'जाते लगत चरन कमलन में कुगत सुधरती मेरी' के लिए इतना उदार कतई सम्भव नहीं होता, वे तो ईसुरी थे प्रेम पुजारी, प्रेमानुरागी। उन्होंने इसी प्रेम की सच्चाई में उतरकर कहा है –

जो तुम छैल छला हो जाते, परे उंगरियन राते।
मौं पोंछत गालन से लगते, कजरा देत दिखाते।
घरी–घरी घूंघट खोलत में, नजर के सामू राते।
ईसुर दूर दरस के लाने, काए खो तरसाते।

जो लोग न ईसुरी को समझ पाए हैं और न उनके साहित्यिक अवदान को, वे उन्हें–लुच्चा, उचक्का कह देते हैं, जबकि जो उनकी वैचारिकता को समझते हैं, वे कहते हैं कि ईसुरी ने उचक्कों से बचकर रहने की समझाइश सास और जेठानी की भूमिका में खड़े होकर युवतियों को सजग रहने के लिए दी है –

रइयो मनमोहन से बरकीं, तुम नई भई अहिर की।
होत भोर जमुने न जइओ, देकें कोर कज़र की।
उनकौ राज उनई की रैयत, सिर पर बात जबर की।
ईसुर कात तला में बसकें, सैये शान मगर की।

उपरोक्त फाग में स्पष्ट कर दिया है ईसुरी ने कि माहौल जैसा हो उसे समझ कर, पूरी तरह से सोच–समझकर पैर धरने की जरूरत है। ईसुरी के रचना काल में देश गुलाम था। अंग्रेजों के पिट्ठू अत्याचारी मनचाही हरकतें कर रहे थे। कवि ने

राधा–कृष्ण की झांकी के बहाने युवतियों को समकालीन परिस्थितियों से आगाह करते हुए सतर्क रहने का संकेत दिया है, जो उनके बौद्धिक कौशल का उत्कृष्ट उदाहरण है। जहाँ तक प्रेम करना और प्रेम का निर्वाह करने की बात है तो ईसुरी शाश्वत प्रेम के पुजारी हैं। उन्होंने प्रेम की महिमा का स्वरूप विराट माना है –

जौ जी रजऊ–रजऊ के लाने, का काऊ से काने।
जौ लौ जीने जियत ज़िन्दगी, रजऊ के होके राने।
पैले भोजन करैं रजऊआ, पीछे के मोय खाने।
रजऊ–रजऊ का नाम ईसुरी, लेत लेत मर जाने।

वे शाश्वत प्रेम को सबसे बड़ी उपासना मानते हैं। प्रेमी–प्रेमिका के दिली रिश्ते कभी समाप्त नहीं होते हैं, भले ही नश्वर शरीर न रहे। अगले जन्मों में फिर वही नायक, वही नायिका और वही प्रेम बंधन रहेगा, जिसने सच्चे प्रेम को जान लिया, उसने सब कुछ पा लिया –

सब कोउ रजऊ खां देखन दौरे, रजउ न देखत औरे।
रजऊ को मनुआ धन को वारो, रहती एकउ ठौरे।
मानुस की केतान बात है, देवतन के मन बौरे।
तुमें सनेही ऐसे चाहत, ज्यों चाहत शिव गौरे ।
हाल दिनन में जासें ईसुर, बस्ती बसत बगौरे।

प्रेम की पराकाष्ठा का चित्रण करते हुए ईसुरी ने यहाँ तक कह दिया है कि सच्चा प्रेमी वही है, जो अपनी प्रिया की बिछुड़न सहन नहीं कर पाता और स्वयं अपने प्राण त्याग देता है। भर्तृहरि ने एक प्रसंग अपनी रानी पिंगला से बयान किया। एक दिन जब वे शिकार करने गए तो उनके साथ आए एक शिकारी ने हरिण को मार डाला। बाण लगने से हरिण तो मरा, किन्तु शिकारी भी चीख उठा। हरिण पर बाण चलाते समय उसका पैर साँप पर पड़ गया था। साँप ने उसे डँस लिया। इधर हरिण उधर शिकारी दोनों के एक साथ प्राणान्त हो गए। तभी हरिणी आई और मृत हरिण को देखकर वह बेसुध होकर गिर पड़ी और प्राण त्याग दिए। राजा भर्तृहरि इस दृश्य को देखकर बड़े आश्चर्य चकित हुए। शिकारी का शव जब उसके निवास पर लाया गया तो उसकी पत्नी भी सती हो गई। राजा भर्तृहरि ने यह घटना अपनी रानी पिंगला को बताई तो पिंगला ने कहा– 'इसमें आश्चर्य कैसा? यह तो पत्नी का पहला कर्तव्य है, उसे तो पति की मृत्यु का समाचार पाते ही प्राण त्याग देना चाहिए थे।'

भर्तृहरि ने कहा – क्या मेरी मृत्यु पर तुम भी...। 'प्राणनाथ ऐसा अशुभ न बोलिए। भगवान न करे, मेरे रहते आपको कुछ भी हो।' राजा भर्तृहरि के मन में बात लग गई।

उन्होंने पिंगला की परीक्षा का मन बनाया। एक व्यक्ति को शेर ने मार डाला था। उसकी रक्त रंजित देह पड़ी थी। राजा भर्तृहरि उसे देखने लगे। उनके मन में विचार कौंधा। उन्होंने अपने वस्त्र उस व्यक्ति के रक्त में भिगोकर सेवक को दिए और बोले–

महल में जाकर ये वस्त्र रानी पिंगला के पास पहुँचाओ। पिंगला वस्त्रों को देखकर चीख पड़ी और हा प्राणनाथ! कहकर प्राण त्याग दिये।

जब सेवक ने यह समाचार राजा भर्तृहरि को सुनाया तो वे पाषाणवत रह गए। यही सच्चा प्रेम है। यह कहने–सुनने के लिए नहीं है, अनुभव करने का है। ईसुरी की फागों में प्रेम झलकता है, जिसे वही प्रेमी अनुभव कर सकता है, जिसने कभी प्रेम किया होता है। ईसुरी की फागें प्रेम में पगी हुई वेद श्रृचाएँ जैसी हैं। यहाँ कुछ उन फागों का उल्लेख भी जरूरी है, जिस पर ईसुरी को लोगों की आलोचनाओं का भाजन होना पड़ा –

जुबना बीते जात लली के, पर गए हात छली के।
मस्कत रात पुरा पाले में,सरकत जात गली के।
कसे रात चोली के भीतर, जैसे फूल कली के।
कात ईसुरी मसकें मोहन, जैसे कोऊ भली के।

× × × ×

जुबना कड़ आए कर गलियां, बेला कैसी कलियां।
न हम देखे जमत जमी पै, ना माली की बनियां।
सोने कैसे तबक चठे हैं, बरछी कैसी भलियां।
ईसुर हात समारे धरियो, फूट ना जावे गदियां।

× × × ×

जुबना छाती फोर दिखाने, मदन बदन उपजाने।
बड़े कठोर फोर छाती खों, निबुआ से गदराने।
शोभा देत बदन गोरे पै, चोली के बंद ताने।
पोंछ–पोंछ के राखे रोजऊ, बारे बलम के लाने।
ईसुर कात देख लो इनको, फिर भए जात पुराने।

तुमसे मिलन कौन विधि होने, परकें एक बिछौने।
बातन–बातन कड़े जात हैं, जे दिन ऐसे नौने।
प्रानन के घर परी तलफना, नैनन के घर रोने ।
ईसुर कात प्रिया के संग में,कब मिल पाहै सोने।

× × × ×

जुबना कौन यार को दइये, अपने मन में कइये।
हैं बड़ भोल गोद गुरदा से, कांलौ देखे रइये ।
जब सारात सेज के ऊपर, पकर मुठी रै जइये।
हात धरत दुख होत ईसुरी, कालौ पीरा सइये।

× × × ×

लै गओ मजा मिजाजी तनको, छैला बालापन को।
खोलूं खूट दुखूट खोलतन, लूटो सुक्ख मदन को।
घूंघट खोल कपोलन ऊपर, दै गओ दार दसन को।
ईसुर इन बालम के लाने, खाली कोठा धन को।

× × × ×

जुबना धरे ना बांदे राने,ज्वानी में गर्राने।
मस्ती आई इन दोउन पै,टोनन पै साराने।
फैंकें–फैंकें फिरत ओढ़नी, अंगिया नहीं समाने।
मुन्सेलू पा जाने जिदना, पकरत हा–हा खाने।
जांगन में दब जाने ईसुर, राम घरै लौ जानै।

× × × ×

अब न लगत जुबन जे नोने,रजऊ हो आई गौने।
मयके में नीके लागत ते,सुन्दर सुगर सलौने।
बेधरमा ने ऐसे मसके,दए मिटाय निरौने।
चलन लगीं नैचें खां कसियां,हलन लगीं दोई टोने।
सबरे करम करा लए ईसुर, हर के ऐ बिछौने।

कुछ अवारा किस्म के मनचले उच्चक्के लड़के–लड़कियों पर उल्टी–सीधी

फबतियाँ कसते रहते हैं। लड़कियाँ उनके मुँह लगना उचित नहीं समझतीं, किन्तु ईसुरी ने उनके इन दुर्गुणों को अपनी फागों में बखान कर उन्हें यह चेतावनी दी कि औरत जिसका तुम अपमान करते हो, वह तुम्हारी माँ, बहन और बेटी भी हैं। उन आवारा उच्चक्कों की फबतियों से सम्बंधित कुछ फागें देखें–

जुबना अबै न देती मांगें, पछतेहौ तुम आगें।
कर–कर करुना उदना सोचो, जबै ढरकने लागें।
कछु दिनन में जेई जुबनवां, तुमरौ तन लौ त्यागें।
नाई ना करहौ और जनन खां, सुन–सुन धीरज भागें।
भरन भरी सो इनको ईसुर, उतरी जाती पागें।

× × × ×

जुबना जिय पर हरन जमुरियां, भए ज्वानी की बिरियां।
अब इनके भीतर से लागीं, झिरन दूध की झिरियां।
फौरन चले पताल तरैया, फोरन लगे पसुरियां।
छैल छबीली छुअन ना देती, वे छाती की तिरियां।
जे कोरे मिड़वा कें ईसुर, तनक गम्म खा हिरियां।

× × × ×

छाती लगत जुबनवा नौने, जिनकी कारी टोने।
फारन लगे अबै से फरिया, आंगू कैसो होने।
सीख लली अन्याव अवैसें, कान लगी चल गौने।
करन लगे चिवलौरी चाबै, भर–भर कठिन निरौने।
बचे ईसुरी कांलौ रैइयत, कईइक खौं जो खोने।

जानी हमने तुमने सबने,रजऊ के जुबना जमने।
सोने कलस कुदेरन कैसे, छाती भौंरा भुमने।
जोर करै जब इनकी ज्वानी, किनकी थामी थमने।
निकरत बजैं चैन की बंसी, कईइक पंछी मरने।
जा दिन द्रगन देखबी ईसुर, दान जो देबो बमने।

छाती नोकदार है तोरी, जी से चित्त लगोरी।
एक दार हेरो चित देकें, कईइक दार कहोरी।
होय अधार तनक ई जी खां, लगी बुरत की डोरी।
ओंठ से ओंठ लगे न ईसुर, अधर राप से जोरी।

ईसुरी ने उपरोक्त फागों में अंग श्रृँगार का पूर्ण मनोयोग से चित्रण किया है। इसे अश्लीलता का नाम देना श्रृँगारिक साहित्य को अकारण लांछित करना है। जबकि कवि इन रचनाओं के सचेतकी भाव को जन सामान्य को सौंप रहा है। चढ़ती उम्र में यौवन निखार पर आता है। काम भाव अपने नए–नए रूपों में प्रस्फुटित होने को आतुर होता है। इन परिस्थितियों में मनचले युवतियों को बहकाने का प्रयास करते हैं। उनके आव भाव शब्द व्यंजनाएँ कैसी–कैसी हो सकती हैं और उनके प्रभाव क्या हो सकते हैं, कवियों ने चित्रित किए हैं। जयदेव जी ने गीतगोविन्द में कहा है –

किसलयशयननिवेशितया चिरमुरसिममैव शयानम्,
कुतपरिरम्भण चुम्बनया परिरभ्य कृताधरपानम।
सखि हे केशिमथनमुदारं रमय मया सह,
मदन मनोरथभावितया सविकारम्।

श्री कृष्ण के साथ अपने प्रथम समागम के अनुभव के स्मरण से पुलकित और मिलन के लिए उत्सुक राधा अपनी सखी से अनुरोध करती हुई बोली– मेरी साड़ी को उतारने के उपरांत श्री कृष्ण ने धरती पर कोमल–कोमल और नवीन पत्तों की शैया बनाई और मुझे उस पर लिटाकर मेरी छाती पर लेटकर मुझसे मीठी बातें करते हुए, मुझे कसकर जकड़ लिया, मेरा प्रगाढ़ आलिंगन और चुम्बन करने लगे, मेरे अधरों का रस पीने लगे। मैं उनसे पुनः मिलन के लिए तड़प रही हूँ। मेरे मिलन का उपाय करो।

अलसनिमीलित लोचनया पुलकावलिललितकपोलम्,
श्रमजलसिक्तकलेवरया वरमदन मदादतिलोलम्।
सखि हे केशिमथन मुदारं रमय मया सह,
मदन मनोरथभावितया सविकारम्।

प्रिय सखि! रतिक्रीड़ा श्रम से उत्पन्न आलस्य से जब मेरी आँखें मुंद गईं और श्रम बिन्दुओं से मेरा सारा शरीर भीग गया तो उस समय कामदेव के मद से विह्वल श्री कृष्ण ने मेरे साथ जिस प्रकार बल पूर्वक रतिभोग किया, उससे मैं आनन्द विभोर हो गई। उस आनंद की स्मृति मुझे श्रीकृष्ण के भुजापाश में बंधने को विवश कर रही है। हे सखि! तुम कुछ ऐसा उपाय करो कि मेरा श्रीकृष्ण से शीघ्र मिलन हो जाय।

जब इतने पहुँचे हुए श्रृषि–मुनि काम केलि का इस तरह चित्रण कर सकते हैं और उनके ग्रंथ को धार्मिक ग्रंथ की मान्यता मिल सकती है, तो ईसुरी यदि प्रेमानुभूति से मिश्रित नायक–नायिका सम्वाद का चित्रण करते हैं तो उन्हें अन्यथा क्यों परिभाषित

किया जाय। ईसुरी की इस तरह की कुछ फागों का उल्लेख उचित एवं आवश्यक समझकर किया जा रहा है –

बालम नओ बगीचा जारी, दिन–दिन पै तैयारी।
बिरछन बेल लतान फैल गई, झुक आई अंधिआरी।
डौंड़ा लोंग लायची लागी, फरीं जिमुरियां भारी ।
ईसुर उजर जान न दइयो, करा देव रखवारी ।

नारी आकर्षण, उनकी कामुक अदाएँ तथा कामेक्षा से आग्रह टाल पाना किसी के वश में नहीं रहता है। भर्तृहरि ने श्रृँगार शतक में कहा है–

एताश्चलद बलयसंहतिमेखलोत्थ, झंकार नूपर पराजिराज हंस्यः।
कुर्वन्ति कस्य न मनोविवशंतरूण्यो, वित्रस्तमुग्ध हरिणी सदृशैः कटाक्षैः।

सुन्दरियों की चंचल चाल से कंकनों की खनक करधनियों के घुँघरुओं की ध्वनि और पायल की मधुर झंकार, राजहंस को भी लज्जित कर देने वाली चाल तथा हरिणी के समान कटाक्ष से क्या कोई अपनी रक्षा कर सकता है। नारी के इन गुणों के कारण ही पुरुष उनके जाल में बड़ी आसानी से फँस जाते हैं।

इस तारतम्य में ईसुरी ने कहा है कि जब कोई नारी किसी पुरुष को रति भोग की इच्छा से आमंत्रण दे तो कौन होगा वह पुरुष जो उसके आग्रह को ठुकरा सकेगा। देखिए ईसुरी की ऐसी कुछ फागें–

मोरी कही मान गैला रे, दिन डूबें ना जा रे।
आगूं गांव दूर लौ नइयां, नैया चौकी पारे।
देवर हमरे कछू ना जाने, जेठ जनम के न्यारे।
पानी पियो पलंग लटका दों,धर दूं दिया उजारे।
डर ना मानों कछू बात को, पति परदेश हमारे।
ईसुर कात रैन भर रइयो, उठ जइयो भुन्सारे।

जब कामिनी कामपीड़ा से इस तरह खुला एवं स्पष्ट आग्रह करे तो फिर इस कामजाल से बच पाना किसी पुरुष के लिए आसान नहीं होता है। ईसुरी ने नारी की उस पीड़ा का वर्णन किया है जो विरह अग्नि में जल रही है। पति घर पर नहीं है। उसे काम पीड़ा सता रही है। होली का त्योहार है। मनचले पिचकारी लिए घूम रहे हैं। वह भी रंग–गुलाल से खेलना चाहती है, किन्तु सामाजिक प्रतिबंध उसे ऐसी अनुमति

कहाँ देने वाले हैं। वह अपने दिल की कसक किन शब्दों में व्यक्त करती है, ईसुरी की फाग में देखिए –

हम पै नाहक रंग न डारौ, घरै न पीतम प्यारो।
फीकी लगत फाग बालम बिन, मनमें तुमई विचारो।
अतर–गुलाल अबीर न छिरको, पिचकारी न मारो।
ईसुर सूझत प्रान पति बिन, मोय जग में अंधियारो।

× × × ×

देखो कबहुं न देखो जिन खां, धन्य आज के दिन खां।
जिनकी देह दमक दर्पन सी, देवता लौचें इनका।
तेरो जस रस भरो कात हों, नाम चले पैरन खां।
ऐसे नौने प्रान ईसुरी, करौ निछावर छिन खां।

ईसुरी की फागें बुन्देलखण्ड के गाँव–गाँव एवं घर–घर में गाईं जाती हैं, जिस तरह धार्मिक विचार सम्पन्नता वाले व्यक्ति हर बात में तुलसीदास जी के रामचरित मानस, कबीर की साखियाँ, सूर के पद और रहीम के दोहे बतौर उदाहरण व्यक्त करते हैं, उसी तरह श्रृँगारिक मनोभावों वाले सहृदय ईसुरी की फागों के माध्यम से अपने दिल की बात कह देते हैं ।

प्यार किसी को किसी से भी हो सकता है। प्रेमी–प्रेमिका बंधनों को सहन नहीं कर पाते, स्वीकार नहीं कर पाते हैं। वे स्वच्छन्द विहार ही इच्छाशक्ति वाले होते हैं और कैसे भी इस इच्छा की पूर्ति चाहते हैं। ईसुरी ने इस मनोदशा का अपनी फागों में बढ़िया चित्रण किया है –

ससुरे अब नहिं जान बिचारें, बाई ननद के द्वारें।
बखरी बाहर पांव न धरवी, चाहे चले तरवारें।
जाय जो केदो बारे बालम सें, इतै ना डेरा डारें।
ईसुर विदा होन ना पावै, लगवारन के मारें।

× × × ×

तुमरी विदा न देखी जानें, रो–रो तुमे बतानें।
कोसक इनके संगे जाने, भटकत पांव पिरानें।
पल्ली और गदेली जोरो, नए–नए ठन्ना पानें।

जो कउं होते दूर तलक ते, सुनी न जातीं कानें।
रंधे भात जे कहिए ईसुर, काके पेट समानें।

× × × ×

मानुष विरथा राम बनाओ, दावा सब मंझयाओ।
मैं भई ज्वान ललकरई भर–भर, बिरहा जोर जनाओ।
बारे बलम लिलोर गरे से, जान बूझ लजबाओ।
कामदेव ने जोर जनाओ, मदन पसर के धाओ।
दई रूठे को हुई है ईसुर, मिलो न जैसे चाओ।

× × × ×

जो जी नैये देख डरावै, बेर–बेर इत आवे।
ऐसो लगन लगत बेधरमा, कान बिदा की चावे।
बलम के घर की सबरी बातें, आ–आ इतै सुनावे।
ईसुर ई को मौं ना देखूं, मैड़ो ना मझयावै।

जब नायिका (प्रेमिका) अपने प्रेमी से कहती है कि मेरा गौना होने वाला है। मेरे ससुराल वाले लेने के लिए आने वाले हैं। मैं तुमसे दूर नहीं जाना चाहती हूँ । तब प्रेमी की प्रतिक्रिया क्या है, कैसी है, ईसुरी की फाग में देखिये –

जो हम बिदा होत सुन लैबी, मा डारें मर जैबी।
हम देखत को जात लुबाकें, छुड़ा बीच में लैबी।
अपने ऊके प्रान इकट्ठे, एकई करके रैवी।
ईसुर कात लील को टीका, अपने माथे दैवी।

× × × ×

सिर पै गंगा जली धरी ती, दगा दैन ना कईती।
करने हतो तमासो ऐसो,काहे खां बांह गहीती।
दै परमेसुर दोई बीच में, कैसी ठौर परीती।
ईसुर दओ राम रस पैला, फिर बिषबेल बईती।

× × × ×

काती मजा लूटलो नौने, फिर जैयत है गौने।
आसों साल भाव फागुन में, होने कात गलौने।
ऐसे अड़े विदा के लाने, आ गए श्याम सलौने।

आहैं बरस रोज में छैला, बीच मिलन नहिं होने।
ईसुर कात पराये डोला, छोड़ लए हैं कौने।

× × × ×

सुनतन हात पांव सब थाके, टिया सुने से ताके।
जोर दओ संयोग विधाता, तुम काकी हम काके।
सावन लौके टिया टार दो, राखो पांव उमा के।
अब थोरे दिन रये ईसुरी, अक्ती भोर विदा के।

× × × ×

पंछी भये ना पंखन वारे, इतनी जंगा हारे।
कड़–कड़ जाते सांसन में हो, अड़ते नहीं किनारे।
सब–सब रातन मजा लूटते, परते नहीं नियारे।
ईसुर उड़ प्रीतम सों मिलते, जां है यार हमारे।।

× × × ×

तुम तो भोर सासुरे जातीं, का कए हमसे जातीं।
तुम खां चैन चौगुनी होने, लगौ बलम की छाती।
जो–जो बात गती ती तुमने, किए गहाए जाती।
ईसुर देत अशीषें तुमकों, बनी रहे ऐबाती।

ईसुरी साहित्य के ऐसे धनी थे कि उन्होंने हर विषय पर अपनी रचनाएँ कहीं हैं। भक्ति, श्रृँगार, नीति, दर्शन, उत्सव, त्योहार, ऋतुएँ कोई भी विषय उनकी कलम से अछूते नहीं रहे। ईसुरी का साहित्य यद्यपि बुन्देली और ब्रज भाषा में अधिक है, किन्तु अब इसे क्षेत्रीय सीमा रेखा में बांधकर नहीं देखा जा सकता है। ईसुरी का साहित्य व्यापक है और उनके चिन्तन पर अनेक विद्यार्थी शोध कर चुके हैं और अभी भी यह क्रम सतत् है।

ईसुरी के साहित्य की व्यापकता उनकी लोकप्रियता का ग्राफ लगातार विस्तार प्राप्त करता जा रहा है, जो बुन्देली भूमि के गौरव की बात है।

अब ईसुरी की कुछ उन रचनाओं का उल्लेख जरूरी है, जिनसे ईसुरी के साहित्य को ऊर्जा मिली है। ईसुरी ने लगभग सभी रसों में अपनी फागें कही हैं, वे स्वयं कहते हैं–

फागें सुन आए सुख होई, दई देवता मोई।
इन फागन पै फाग न आवै, कइयक करौ अनोई।
भोर भखन कौ उगलत रैगओ, कली–कली में गोई।
बस भर ईसुर एक बचो ना, सब रस लओ निचोई।

ईसुरी ने ऋतु वर्णन में एक से बढ़कर एक फागें कहीं है –

अब रितु आई बसंत बहारन, पान फूल फल डारन।
हानन हद्द पहारन पारन, धाम धवल जल धारन।
कहटी कुटिल कदरन छाई, गई बैराग बिगारन।
चाहत हती प्रीत प्यारे की, हा–हा करत हजारन।
जिनके कन्त अन्त घर से हैं, तिने देख दुख दारन।
ईसुर मौर झौंर के ऊपर, लगे मौर गुंजारन।

× × × ×

अब दिन आए बसंती नीरे, खलित और रंग मीरे।
टेसू और कदम फूले हैं, कालिन्दी के तीरे।
बसते रात नदी नद तट पै, मजे में पण्डा धीरे।
ईसुर कात नार बिरहन पै, पिउ–पिउ रटत पपीरे।

× × × ×

जै जीजा न बाग में बोलें, सबद कोकला कोलें।
सुनके सन्त भये उन्मादें, भसम अंग में घोलें।
जोगी जगा कटा खां पटकत, बिकी बिरोनी मोलें।
सीतल मन्द सुगंधे पवनें, प्रीत बड़ाउन डोलें।
फैल परे रितुराज ईसुरी, खस न खजाने खोलें।

ईसुरी लोक जीवन की समस्याएँ, शादी–विवाह, खुशी, दुःख, तकलीफ–बीमारी, बुरी आदतों के कुपरिणाम आदि विषयों पर अपनी कलम चलाने वाले कवि हैं। उन्होंने हर अवसर की फागे कहीं हैं –

पर गए हर सालन में ओरे, कउं भौत कउं थोरे।
आगे सुनत परत ते दिन के, अब दिन रात चबोरे।
कौनऊ ठीक कायदा ना रए, धरै बिधाता तोरे।

कैसे जियत गरीब गुसा में, छिके अंत के दौरे।
ईसुर कैद करे हैं ऐसे, कंगाली के कोरे।

× × × ×

आसों दै गओ साल कटोरा, करो खाव सब खौंहा।
गोऊं–पिसी खां गिरूआ लग गओ, मउअन लग गओ लौंका।
ककना दौरी सब धर खाए, रै गओ भकत अनौंटा।
कहत ईसुरी बांदे रइओ, जबर गांठ कौ घौंटा।

क्वार के महीना में लोग बीमार पड़ जाते हैं। उन दिनों मलेरिया (तिजारी, परया, बज्जवारी, ड्योड़िया, अतरैला, मियादीं आदि) का प्रकोप बहुत रहता था। गरीबी बहुत थी, इलाज की कौन कहे, भूखे मरते थे लोग। ईसुरी ने उन परिस्थितियों को अपनी फागों के माध्यम से कहा है –

आसों हाल सबई के भूले, कइयक काखें कूलें।
कच्चे बोर बचे हैं नइयां, कंगारिन ने रूले।
फांके परत दिना दो–दो के, परचत नइया चूले।
मरे जात भूकन के मारे, अंदरा–कनवा लूले।
मारे–मारे फिरें ईसुरी, बड़े–बड़े दिन दूले।

किसी–किसी वर्ष में अच्छी फसल हो जाती थी, तो ईसुरी उस खुशी में भी फागें कह देते थे –

उनके दूर दलद्दुर भिनकें, बैलई ती जिन चिनकें।
ऐसी भई बड़ानी नइयां, ढोई रात ना दिन कें।
बम्बई चलो–चलो कलकत्ता, गिरे कड़ोरन गिनकें।
सन उन्नीस सौ छप्पन मइयां, बुधे परे ते रिन कें।
जनम–जनम के रिन चुकवा दए,परी फादली उनके।
बड़े अभागे आसों ईसुर, तिली भई ना जिनकें।

एक आलसी किसान किसानी के समय हल खड़े किए हुए खड़ा था। ईसुरी ने उससे कहा –

तुखां काय लगत हैं जाड़े, बरसा के दिन आड़े।
ई अषाढ़ में चूके कब–कब, कीनें भर लए भांड़े।

ई बरसा सें सब कोउ लागो, जोगी राजा पांड़े।
ईसुर कात हमें का करने, रोज करें रओ ठांड़े।

सामाजिक बुराइयों की विवेचना करने में ईसुरी का कोई जवाब नहीं रहा है। वे जो देखते थे, उसे ज्यों का त्यों अपनी फागों में कह देते थे। एक आदमी अपनी पत्नी पर शक करता था। वह अकारण उसे पीट रहा था। वह बड़े धीरज के साथ अपनी सफाई दे रही है –

बालम बेअनुआ ना मारो, ऊसई चाय निकारो।
संकरी खोर गैल सो कड़ गओ, काटत गओ किनारो।
ना मानो तो कौल करा लेव, होय यकीन हमारो।
ईसुर बैठो गम्म खाय कें,है बदनाम तुमारो।

प्रियतम बिना कसूर न मारिये, अगर घर से निकालना हो तो वैसे ही निकाल दीजिए। रास्ता संकीर्ण था, उसी से मुझे निकलना था। आने वाला पुरुष तो किनारा काटता हुआ निकल गया। विश्वास न हो तो कसम करा लो, मेरा कोई दोष नहीं है। यदि संकीर्णता वश निकलते समय उसका स्पर्श हो भी गया हो तो उसे आप अन्यथा न लें, गम खाकर चुप बैठना चाहिए, क्योंकि मुझे पीटने या निकालने से तुम्हारी और इस परिवार की बदनामी होगी। ईसुरी उस औरत के माध्यम से समाज के भीतर उत्पन्न हो रही समस्याओं पर कितनी अच्छी तरह से अपनी सलाह देकर निराकरण का सुझाव देते थे।

ईसुरी ने एक गर्भिणी की स्थिति को देखकर फाग कही है –

आ गई नगन नगन पियराई,रजऊ के मौपे छाई।
कै तो तबक लगे सोने के, कै केसर की खाई।
कै घूंघट के रए छांहरे, धूप गई बरकाई।
कै संयोग वियोग विथा में, कै आधान अबाई।
कै धों ईसुर छटा भोर की, उगत भान की छाई।

ईसुरी दैनिक व्यवहार की बातों को भी कविता में कहने के आदी हो गए थे। वे जो भी बोलते थे, वह भी फाग ही में। उनकी फोड़ा और तिजारी पर फागें देखिए–

हो गओ फनगुनियां को फोरा, पैंला हता ददोरा।
एक के ऐंगर भओ दूसरौ, दो के भए कई जोरा।

गदिया तरें हतेली सूजी, सूज गए सब पोरा।
दवा होत रई दर्द गओ न, एक मास दिन सोरा।
फोरा से भओ खता ईसुरी, जौ रओ आन विलोरा।

तिजारी (मलेरिया बुखार का एक प्रकार) पर उनकी फाग देखिए –

हौ वे गंदो रोग तिजारी, जा भारी बेजारी।
अपनों ऊधम दए फिरत हैं, बिच–बिच बज्जुर पारी।
बंगालन जा बात ले आई, हन गई देह हमारी।
मरज भओ तिरदोष बीत गए, कर ल्याई कफ जारी।
ईसुर जान परत है ऐसी, येई में मौत हमारी।

आदमी दुर्गुणों का शिकार हो जाता है, कोई शराब, कोई गांजा–भांग, बीड़ी पीने की आदतें पाल लेता है। ईसुरी एक शुभ चिन्तक की तरह शिक्षा देते हैं –

गांजो पियो न प्रीतम प्यारे, जर जैं कमल तुमारे।
जारत काम बिगारत सूरत, सूखत रकत नियारे।
जौ तो आय साधु सन्तन कौ, अपुन गिरस्ती बारे।
ईसुर कात छोड़ दो ईकों, अबै उमर के वारे।

ईसुरी राष्ट्रीयता के कवि थे, वे उस हर बुराई से दूर रहने की सीख देते थे, जो देश–समाज एवं व्यक्ति के लिए बुरी हो। वे पर्यावरण की सुरक्षा एवं फलदार पेड़ों की रक्षा के लिए वृक्षों को न काटने की सलाह देते हैं–

इन पै लगें कुलरियां घालन, मउआ मानस पालन।
इने काटवो ना चइयत तो, काट देत जे कालन।
ऐसे रूख भूख के लाने, लगवा दये नंद लालन।
देख कर देत नई सी ईसुरी, मरी मराई खालन।

मनुष्य रूप की सुन्दरता, शरीर के रंग का गोरापन आदि पर प्रभावित होता है, भले ही उसके गुण कैसे भी हों। ईसुरी ने लोगों को तन की सुन्दरता से अधिक मन की सुन्दरता पर ध्यान देने की बात कही है –

कारी लगत प्रान से प्यारी,जीवन मूर हमारी।
कहा चीज कारी कें कमती, का गोरी का कारी।
कारिन की कउं देखीं नइयां, बसी बसीकत न्यारी।

ईसुर कात बसी मन मोरे, श्यामलिया रंगवारी।

× × × ×

कारी से कारी का काने, जिये ताव भर जाने।
कारी के तुम सोच दूबरे, होत काय के लाने।
कारी से नफरत न करिया,कारी प्रान समाने।
कारी बंदी करे ईसुरी, और के छोर निभाने।

ईसुरी खान–पान का व्यक्ति के स्वास्थ पर पड़ने वाले असर का उल्लेख भी अपनी फागों में करते हैं। उन्होंने उड़द की दाल खाने से स्वास्थ में आई खराबी पर फाग कही है –

जब से दार उरद की खाई, कफ ने दई दिखाई।
कफ के मारें फटी पसुरियां, ताप सोउ चढ़ आई।
धीरे पण्डा रोन लगे संग, हमें न आई राई।
लिखके पाती दई बगौरा, उत सै आई लुगाई।
राम नगर में परे ईसुरी, कर रए वैद दवाई।

ईसुरी झूठ–फरेब और बेईमानी को पसंद नहीं करते थे। वे कहा करते थे कि व्यक्ति जो है, उसे वही दिखना चाहिए। जो कर रहा है, वही कहना चाहिए और जो कह रहा है, वही कहना। वैसे भी व्यक्ति का दोहरा चरित्र छिपता नहीं है। एक न एक दिन कलई खुल ही जाती है –

करलो प्रीत खुलासा गोरी, जा मनसा है मोरी।
ऐसी करलो ठोक तारिया, फिर ना टूटे टोरी।
देह धरे के मजा उड़ा लो, जा उम्मर है थोरी।
ईसुर कात होत है नइयां, ऊंट की न्योरें चोरी।

वे व्यक्ति को ईमानदारी और सच्चाई को स्वीकारने की सीख देते हैं–

जी की सेर सबेरे खइए, बदी ना ऊकी कइए।
नौ दस मास गरभ में राखो, तिनके पुत्र कहइए।
सब जग रूठो–रूठो रन दो, राम न रूठो रइए।
ईसुर वे हैं चार भुजा के, का दो भुजा नि रहए।

ईसुरी की साहित्यिक प्रतिभा

ईसुरी विलक्षण प्रतिभा के आशु कवि थे। वे 15–16 वर्ष की उम्र से कविताएँ रचने लगे थे और अन्तिम सांस भी उनकी कविता के रूप में ही निकली। कविता उनकी सहज वाणी थी। वे जो भी बोलते थे, वह कविता होती थी, चाहे वे सामान्य वार्तालाप कर रहे हों, पत्र व्यवहार या अन्य कोई और कार्य।

ईसुरी की पहचान एक प्रसिद्ध फगुआरे के रूप में है, किन्तु उन्होंने केवल फागें ही नहीं, अपितु दोहा, कुण्डलियाँ, छन्द आदि में भी रचनाएँ की हैं। उदाहरण स्वरूप कुछ रचनाएँ दी जा रही हैं –

कुण्डलियाँ

स्वामी से सेवक सकुच, विनय करत करजोर।
मरजी माफक फर्द की, लगै सौ अरजी मोर।
लगै सौ अरजी मोर, सुतर आगे को धावें।
नाय माय की खबर, खुशी खातिर की ल्यावें।
लगी फिरै दिखनौस, एक कौतल का जोड़ा।
अच्छे से असवार, उड़े हाथी संग घोड़ा।

× × × ×

छड़ी चौर पंखा हरकारा, दो सोटा वरदार।
वान लपेटी झंडिया, बल्लम बारे चार।।
बल्लम बारे चार, ऊंट पै नौबद बाजै।
सुख को शुभ दिन होंय, सजन जब द्वारें साजे।
डंका संग निसान, जरी–पटका के लाले।
ढोलक टामक बजे, हलें राजक के भाले।

दोहा –

ढपला रमतूला तुरई, अलगोजा की टेक।
मिलके बजै कसावरी, सब बाजन में एक।।
है भड़ार के मिसर जू, पूरन दुज कुलचन्द्र ।

लौट गांव के नायकन, कीनो सुख सम्बन्ध।

ईसुरी की एक रचना ऐसी भी प्राप्त हुई है जो घनाक्षरी जैसी है –

बातन से राजा इतराज करैं बसुधा पै।
बातन से करतब नाटक लगायबौ।
बातन से जाय परै नरक के कचरा में।
बातन से होत बैकुण्ठ लोक पायबो।
बातन से ईसुर जौ बनौ ठनो बिकरजात।
बातन में बिगरे कौ बनता बनायबौ।
राखियो जा बात ख़्याल खूब खबरदारी में।
राख लेत बात जात बातन बतायबौ।

ईसुरी की लिखी दो प्रभातियाँ भी मिली हैं जिन्हें वे नित्य प्रातः गाया करते थे–

1. *जीवन श्री जगन्नाथ जाल सों निनोरो।*
   थाके न हाथ–पांव कोऊ ना धरै नाव।
   चलत फिरत चलो जांव घोरुआ ना घोरो।
   जीवन की जगन्नाथ जाल सौ निनोरो।
   बनी रहे बान बात इज्जत के संग सात।
   दीन बन्धु दीनानाथ रै गओ दिन थोरो।
   जीवन की जगन्नाथ जाल सौ निनोरो।
   हाथ जोर चरन परत चरनामृत धोय पियत
   जियत राम देखो ना दूसरों को दोरो।
   जीवन की जगन्नाथ जाल सौ निनोरो।
   ईसुरी परभाती पढ़त आबरदा सोऊ बढ़त।
   कीचड़ से सनो भओ नीर ना बिलोरो।
   जीवन की जगन्नाथ जाल सौ निनोरो।

2. *भूलौ ना भली होत, भजन सी दबाई।*
   नाच संग धावत में नाम गान गावत में।
   परबतै पढ़ावत में गनका ने खाई।
   भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।
   ऐसें विद गओ अंग, लागो है भजन चंग।
   नाम देव सज संग सीतन में पाई।
   भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

सुफल भओ नरतन सौ सफा देह धरतन।
निज चाम काम करतन रैदास ने लगाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

सूत बिनन चीर की तारन तगदीर की।
मरजी रघुवीर की कबीर ने मंगाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।
ई को इतवार करै रुज कौ ना दोष धरै।
गिरधर के हात धरै मीरा ने चाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

हूँ खां जा आगूं लऔ मान राख मोंरा दओ।
सोनी स्वर्ग सूदो गओ सदन सौ कसाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।
जीवन जौन इयै खात हर हमेश खुशी रात।
पीपा के साथ अजामील ने चटाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

धन जाट कण्ठ धरत सोरी संग साक भरत।
औखद की मील करै बैजुआ बढ़ाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

सबने कही साजी पै बिदुर बनक भाजी पै।
भओ राम राजी पै इतनी रुचि आई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।
धरै गए वामा के मित्र आए रामा के।
तन्दुल सुदामा के खात न अघाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

बिना नाम सेवा सुख पावै न देवा।
दुर्योधन की मेवा की खाई ना मिठाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

तुलसी ने सत्य कही मलुक टूक टोर दई।

खीचरी बनाय गई करमा करबाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

बोलन ना हते मौन जौन काम करौ तौन।
पंछी जौन जतन जान गऔ है जटाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।
कातन ना बने राम दीनों है आप धाम।
उलट–पलट नाम बाल्मीक की पढ़ाई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।
हरि को भज हरि की कात पूछो ना जात पात।
एक बहन एक गात राखे रघुराई।
भूलौ ना भली होत भजन सी दबाई।

एक जैसे आठ दस कर गए बैकुण्ठ वास।
हिरदै की खुलो खास सुर ने सराई।
भूलो ना भली होत भजन सी दबाई।

जीव जबै बोलै तब ह्रदै नैन खोलैं।
लै ईसुर परभाती जा भौर समैं गाई।
भूलो ना भली होत भजन सी दबाई।

ईसुरी का स्वाभिमान

ईसुरी जितने विद्वान कवि थे, उतने ही स्वाभिमानी भी। एक बार छतरपुर महाराज विश्वनाथ सिंह जू की इच्छा हुई कि महाकवि ईसुरी उनके राजकवि की पदवी स्वीकार कर लें। उन्होंने अपने मंत्री को ईसुरी को पालकी पर बैठा कर सम्मान सहित ले आने को भेजा। ईसुरी उस समय भजन गा रहे थे, जब मंत्री उनकी कुटिया पर पहुँचे। बहुत देर तक मंत्री और उनका लाव लश्कर ऐसे ही खड़ा रहा। जब ईसुरी भजन–पूजन से निवृत्त हुए तो कार्यकर्ताओं ने मंत्री के आने की सूचना दी। ईसुरी ने मंत्री को आने की अनुमति दे दी। मंत्री जी ईसुरी से मिले और महाराज का बुलौआ कह सुनाया। परन्तु ईसुरी ने राजाश्रित कवि बनकर रहना नहीं स्वीकारा। उन्होंने असहमति व्यक्त कर दी, किन्तु आशीर्वाद के रूप में एक फाग जरूर मंत्री के हाथों महाराज के लिए भेज दी –

मिथ्या नहीं कविन की बानी, जीभ पै रात भुमानी।

छत पै छाई छतरपुर मैया, धरम बेल हरयानी।
दौरे आय दच्छिना पावत, विमुख जात न प्रानी।
ईसुर हुए काम करबे खां, ई गादी की रानी।

उन्होंने मौखिक संदेश भेजकर महाराज से कहा– 'मैं आपके सम्मान का आभारी हूँ, किन्तु मुझे आज़ाद ही रहने दिया जाय। मैं आपके यहाँ आता–जाता रहूँगा। भगवान राधावर आप, आपके परिवार तथा राज्य की जनता को सुखी रखे।'

ऐसा कहा जाता है कि महाराज विश्वनाथ सिंह के उन दिनों औलाद नहीं थी। वे दुःखी रहते थे, उन्होंने रानी सहित ईसुरी की चरण–पूजा की और अपनी चिन्ता कह सुनाई। ईसुरी ने उन्हें आशीर्वाद दिया जो फलीभूत हुआ और पुत्र भवानी सिंह जू देव उनके आशीर्वाद से पैदा हुए ।

देहान्त

इस प्रकार साहित्यिक समृद्धि से परिपूर्ण ईसुरी का सारा जीवन साहित्यिक उधेड़ बुन में लगा रहा। वे सच्चाई पर चलने वाले, ईमान का पालन करने वाले निश्छल, निष्कपट, खुले मन विचारों वाले कवि थे। बुन्देली लोकभाषा को उन्होंने समृद्धि प्रदान की और अपनी भूल–चूक लेनी–देनी कहकर अन्तिम विदा ली ।

ईसुरी ने अपनी अन्तिम इच्छा के रूप में लिखा है –

यारो इतनो जस कर लीजौ, चिता अन्त न कीजौ।
चल तन श्रम से बहे पसीना, भसम पै अन्तस भीजौ।
निगतन खुर्द चेटका लातन, उन लातन मन रीझौ।
वे सुस्ती ना होय रात–दिन, जिनके ऊपर सीजौ।
गंगा जू लौ मरें ईसुरी, दाग बगौरे दीजौ।

एक अन्य फाग में भी उनकी अन्तिम इच्छा उल्लेखित है –

दोई कर परमेसुर से जौरैं, करौ कृपा की कौरें।
हम ना हुए दिखैया देखें, हितन–हितन की डौरें।
उदना जान परै अन्तस की, जब वे अंसुआ ढौरें।
बंदा की ठठरी करे रवानी, रजउ कोद की खौरें।
बना चौतरा देंय चतुर्भुज, इतनी खातिर मोरें।

होवै कउं पै मरे ईसुरी, किलेदार के दौरें।

किन्तु ईसुरी की ये दोनों कामनाएँ पूर्ण नहीं हो सकीं। ईसुरी को मृत्यु के कुछ महीना पूर्व संग्रहणी की बीमारी हो गई थी। वे बगौरा में अकेले ही रह गए थे। उनका कोई परिजन वहाँ नहीं था और न ही उनकी फाग मण्डली का कोई साथी। ठाकुर भवानी सिंह उनकी सेवा में लगे रहते थे। ईसुरी चलने–फिरने यहाँ तक की दैनिक क्रियाओं के लिए भी उठ बैठने में मजबूर हो गए थे। जब यह समाचार उनकी पुत्री गुरन को मिला तो वे उन्हें बैलगाड़ी से धबार ले गईं।

लोक मान्यता के अनुसार ईसुरी पुत्री के घर का भोजन–पानी नहीं ले सकते थे। अतः उनकी इच्छानुसार उनके निवास और भोजन आदि की पृथक व्यवस्था की गई थी।

ईसुरी अन्तिम समय तक अपने रचना कर्म में लगे रहे। उनकी अन्तिम दिनों की रचनाएँ देखिए –

लैलो सीताराम हमारी, चलती बेरा प्यारीं।
ऐसी निगा राखियो हम पै, नजर न होय दुआरी।
मिलकें कोऊ बिछुरत नैयां, जितने हैं जिउधारी।
ईसुर हंस उड़त की बेरां, झुकआई अंधियारी।

× × × ×

मोरी राम राम सब खैंया, चाना करी गुसैयां।
दै दो दान बुलाकें बामन, करौ संकलप गैयां ।
हाथ दोक जागा लिपवा दो, गौ के गोबर मैयां।
हारै खेत जाव ना ईसुर, अब हम ठैरत नैयां।

ईसुरी अपने फगवारे मित्र धीरे पण्डा की याद करते हुए कहते हैं –

पण्डा धीरे इतै लौ आहें, हमें मरो सुन पाहैं।
समझा दैयो सोच करैं ना, होतब पै बस काहैं।
जितने मिलें चिनारी मोरे, राम–राम सब खांहैं ।
सबर करैं उदना जे ईसुर, जिदना फागें गाहैं।

और कदाचित यह उनकी अन्तिम रचना है, जिसके अन्तिम शब्दों के साथ उनके बोल थक गए थे –

मोरी सब खां राधावर, की भई तैयारी घर की।
रातै आज भीड़ भई भारी, घर के नारी नर की।
बिछरत संग लगत है ऐसा छूटत नारी कर की।
मिहरबांनगी मोरे ऊपर, सूधी रहै नजर की।
बंदी भेंट फिर हूहैं ईसुर, आगे इच्छा हर की।

हमारी पावन धरा वीरभूमि बुन्देलखण्ड की लोकभाषा बुन्देली का महाकवि ईसुरी मार्ग शीर्ष कृष्ण सप्तमी शनिवार वि0 1966 को हम सबसे विदा ले गया। बुन्देली माटी को गौरवान्वित कर।

कवि द्विज लाल ने ईसुरी की मृत्यु के समय के बारे में कहा है –

अगन वदी साते सनऊ, हती न दिल में पीर।
बड़े भोर प्यासा लगी, पियो गरम कर नीर।
× × × ×

ईसुर तज दए प्रान शरीरा, हती न तन में पीरा।
बड़े भोरे सै प्यास लगी ती, पियो गरम कर नीरा।
अगन बदी सातें ती उदना, बार शनीचर सीरा।
उन्नीस सौ छयासट संवत में, उड़ गए मुलक भमीरा।
कयें द्विज लाल ईसुरी न रए, सबै लगो घुन कीरा।

कवि द्विजलाल बड़ा गाँव के ब्राह्मण थे। वे अच्छे कवि थे तथा ईसुरी के समकालीन भी। अतः उनके द्वारा कही गई फाग के अनुसार ईसुरी का निधन सन् 1909 ई. में ग्राम धबार में हुआ सही माना जा सकता है।

परिशिष्ट 'अ'

बुन्देली संक्षिप्त शब्द कोश

अ / आ

आइयो	–	आइयेगा।
अकाज	–	बुरा काम।
अकती खेलना	–	लड़कियों द्वारा अक्षय तीज का त्योहार मनाना।
अंकुरिया	–	गट्ठे।
अगन–अग्नि	–	हाजमा शक्त, मार्गशीर्ष।
अगाने	–	तृप्त होना।
अगनाई	–	आँगन।
अंगोट	–	मार्ग रोकना, अधिकार करना।
अघाना	–	तृप्त होना।
अघाके सांस लेना	–	आह भरना।
अचै लेना	–	भोजन के बाद हाथ धो लेना।
अछीती	–	अक्षय।
अटकर	–	अटकल।
अटकें खांगे	–	अटक जाने पर।
अटा–अटारी	–	दुमंजिला मकान।
अठाव	–	शैतानी।
अड़कें	–	हठकर।
अडुआ	–	मूर्ख / हठी।
अतरारी	–	छत पर की आड़ी लकड़ी।
अधपर	–	अनाधार / बीच में।
अथांह	–	गंभीर / जलाशयादि।
अथाई	–	गाँव की खुली बैठक।
अदिन	–	बुरे दिन।
अँदयारो	–	अंधेरा।
अधेला–		आधा पैसा।
अनमनें	–	उदास।
अनारी	–	शैतान ऊधमी।

अनार – अठाव, शौतान।
अनुआ – दोष/अपराध/बहाना।
अनोय – उपाव।
अनोई – उद्योगी/कार्य कुशल।
अन्तस – भीतर/हृदय में।
अन्त अन्यत्र/अन्य।
अन्होंनो – अनोखा।
अपुन – आप, श्रीमान।
अपौंच – पहुँच के बाहर।
अफरना – पेट भरना।
अफाज – अपाहिज।
अबाई – आगमन।
अबै – अभी।
अबिरथाँ – व्यर्थ।
अभर – गर्व।
अमी – अमृत
अमरौती – अमृत।
अमल – व्यसन।
अजान/अयान – अज्ञान।
अरथी – चिता।
अरवत/अरैउत – रस्सी बाँधकर कुएँ में उतारना ।
अरैंनां – रस्सी बाँधकर कुएँ में उतारना।
अरै कौ परौ – बेगार टालना।
अरझो – उलझन।
अलफ – संकट/अल्पायु में मृत्यु, मौत टालना।
आखत – चावल/अक्षत।
आगम – भविष्य।
आदौ – अदरक/अर्थ।
आँदू – लगना/मदांध होना।
आधान – गर्भ।
आबरदा – उम्र।
आसरौ – सहारा।
आँसना – खटकना।
आरौ – दीवाल में वस्तु रखने का स्थान/आला।
आसों – इस वर्ष ।

इ / ई

इतै – इधर ।
इकारौ – इकहरा / दुर्बल शरीर का ।
इयै – इसे ।

उ / ऊ

उअत – उदित होना ।
उकास – अवकाश ।
उकार पछाड़ – बड़ा उद्योग ।
उगैंयाँ – अँगुलियाँ ।
उगरियाँ– अँगुलियाँ ।
उगारे – नंगे बदन, उगेरना, उघारना ।
उजार – उजाड़ ।
उतार – ढाल ।
उतै – उधर ।
उदना – उस दिन ।
उनें – उन्हें / उनको ।
उनजस / उनार – अनुहार ।
उन्हार / उन्हवाह – अनुहार ।
उपारी – उखाड़ी ।
उबारना – मारने को हथियार उठाना / पार लगाना ।
उबीनों – उदास / फीका ।
उयै – उसे ।
उयें – उदित होने पर ।
उरइयाँ – सबेरे की धूप ।
उरानें – उलाहनें ।
उसारे – दालान ।
ऊ – वह ।
ऊसई – अकारण, वैसे ही ।
ऊरई – उदित हो रही ।
ऊले पार – उस पार ।

ए / ऐ

एकठिया / एकठौल / एकठया– एक ।

ऐ

ऐंगर – समीप ।
ऐंचना – खींचना ।

ऐंचातानी – खींच –तान ।
ऐझरा – बयान ।
ऐंडान – अंगड़ाई लेना ।
ऐंन – खूब/बखूबी/भरे हुए गाय के थन ।
ऐले पार – इस पार ।

ओ/औ

ओई – उसी ।
ओड़ना – सहना ।
ओंगन – चक्के में लगाने के लिए तेल में भिंगोई रूई आदि ।
ओंदाना – ओंधा देना/उलटना ।
ओली – गोद ।
औखद – दवा ।
औखाद – हिम्मत/शक्ति/सन्तति ।
औलें – उदरन/रेखाएँ ।

क

क – के लिए के अर्थ में एक प्रत्यय यथा जाँयक (जाने के लिये) ।
कक्का–कक्इया– चाचा–चाची ।
ककरा – कंकड़ ।
कँखयाएँ – बगल मे दबाये/नाम धातु काँख शब्द से बनी क्रिया ।
कगदा – कागज ।
कचरना – कुचलना ।
कचैरी – कचहरी ।
कचैरी/कचैर – विवाह मे गहनों के साथ चढ़ाये जाने वाली चूड़ियाँ।
कछोटा – स्त्रियों द्वारा परिश्रम का कार्य करते समय लगाई गई काँछ/कच्छा ।
कजरा – काजल ।
कजरौटी – काजल रखने का पात्र ।
कटाछनें की – निर्णायक लड़ाई/बातचीत ।
कटा करना – मार–काट करना ।
कटाछन – कटाक्ष ।
कठला कंठी – काँच के दानों का हार ।
कड़ना – निकलना ।
कड़के – श्रेष्ठ।
कड़ैआ – कण।
कंदेला/कंधेला – मुख खुला रखकर स्त्रियों का धोती ओढ़ने का एक ढंग।

कनाव – किनारा कसी।
कबीला – परिवार/कुटुम्ब–कबीला।
कभऊ – कभी
कमल – हृदय/एक फूल।
करकसा – दुष्ट स्त्री।
करवा – मिट्टी का टोंटीदार पात्र।
करतूत – कारनामा।
करौंटा – करवट।
कलपें – दुःख पाना।
कलकान करना – परेशान करना
कसकना – खटकना।
कहना – कहाँ।
काड़ना – निकालना।
कातीं – कहतीं।
कारिन्दा – मुख्तार।
कानें – कहना।
कालोनी – दाल–भात, शकर, घी और बड़ा मिलाकर बनाया गया खाद्य।
कितेक – कितना
कितनऊं/कितेकऊ – कितना ही।
कुचाल – दुष्टता।
कुची – चाबी।
कुठिया/कुठैला – अनाज रखने का मिट्टी का बड़ा पात्र।
कुठौर/कुठैया – बुरा स्थान।
कुबेरा – देर/कुसमय।
कुप्यारे – प्रेम वंचित।
कुमरगढ़ा – वह गडढा जहाँ से कुम्हार मिट्टी खोदकर लाते हैं।
कुरा – अंकुर।
कुरैया – घर छाने की लकड़ी।
कूँड़ी – चौड़े मुख का मिट्टी का पात्र।
कूत–खाँद – ज्ञान/जानकारी।
केतारथ – कृतार्थ।
केंड़ा – सूत की पिण्डी।
कइयां – आधा पाव घी या तेल नापने का मिट्टी का पात्र।
कइयक – कई एक।
कैंयां – खड़े– खड़े गोद में लेना।

कैलौ – मटके के नीचे का आधा भाग जिस पर मैंदा के माड़े बनाये जाते हैं।
कोंडीला – कोड़ी जैसे श्वेत चिन्ह का साँप।
कोते – बदले में।
कोद – तरफ।
कोंप पै – विकास की ओर/बाढ़ पर।

ख्या

खता – फोड़ा।
खरा – चोखा/शुद्ध/खरगोश।
खसम – पति।
खातिर – निमित्त मान।
खोटा–रव्वाटा – बुरा/अशुद्ध।
ख्यालत–खेलत – खोलता है।
ख्याप खेप – एक बार में जितने घड़े पानी आयें।
खितयारे – किसान।
खिसयाना – नाराज होना।
खुदन्त – कुचलना।
खैला – गट्टा/काले रंग का ह्रष्ट–पृष्ट छोटा बैल।
खोंग – खोखला।
खोबा – अंजली भरकर/खोया दूध का।

ग

गटा – आँख की पुतली।
गट्टा – छोटा बैल।
गदियां/गेदरी – हथेली।
गडडी – छोटी गाडी।
गरदा – धूल
गरदी – भीड़
गरयार – कामचोर बैल/बैठने वाला बैल।
गहनों/गानों – आभूषण।
गाहिर/गहीर – गंभीर।
गाड़ौ – बड़ी गाड़ी।
गड़ली – छोटी गाड़ी।
गारी गुप्ता – गाली गलौच।
गा – गया।
गाँसना – फाँसना।

गिरस्तीवारे – गृहस्थ।
गिरूआ – गेहूँ की एक बीमारी।
गिरैयां – जानवर बांधने की रस्सी।
गुइयां – सखा, सखी।
गुनियाँ – झाड़–फूँक करने वाला।
गुलचा – मुट्ठी में बंधी तर्जनी या अंगुष्ठ का गाल पर प्रहार।
गुसइयाँ – स्वामी/महात्मा/गुरू।
गेंवड़ों – ग्राम का वह समीपवर्ती मैदान जहाँ लोग टट्टी फिरने जाते हैं।
गैल – राह।
गैलारौ – पथिक।
गों – दाव/वारौ/लाभ/सुविधा।
गोऊ – गेहूँ।
गोत–गिलाऔ – नाबदान आदि की गन्दी कीच।
गोरी – सुन्दरी/गोरे रंग की स्त्री।

घ

घटिया – मार्ग की चढ़ाई।
घतिया – चापेट।
घनेरी – घनी।
घरियाँ – स्वर्णकार का धातु गलाने का पात्र।
घाले घबा न घलना – असफल होना।
घलना – मारना।
घारौ – ढोलक आदि का ढांचा।
घिंची घोच – गरदन।
घुल्ला – शक्कर धातु या मिट्टी का घोड़ा/जिस शरीर में देव आता है।
घूंघट – मुखाच्छादन।
घैला – छोटा घड़ा।
घ्याला – घैला का बनाफरी रूप।
घोरूआ घोरना – काम में देर लगाना।

च

चइयँ मइयाँ – बच्चों का चक्कर खाने का खेल।
चकरी – लम्बी/श्रावण मास में खेलने का एक लकड़ी का गोल खिलौना।
चपिया – चौड़े मुख की छोटी मटकी।
चबाई – शैतान।
चलाव – गौना।
चांड़े रहना – तैयार रहना/बुरे कामों के लिए उद्यत।

चात – चाहत है।
चाना – चाहना।
चाय – चाह।
चाब खाना – शान्त रहना।
चावें – चाहते हैं।
चिनारी / चिन्हारी – पहचान / अभिज्ञान / परिचय / स्मारक वस्तु।
चिहारी – वेदना से तड़पने की आवाज
चीता – एक हिंसक जीव।
चुपाना – चुप रखना।
चुखैला – जिस बैल ने गाय का खूब दूध पिया हो।
चुक्का – भूल।
चेंथरी चढ़ना – मस्ती आना।
चोला – देह।
चौगिरदां – चारों ओर।
चौंरी – चमर।

छ

छटिया – बाँस का पात्र।
छटैया – छड़ी।
छमाका – बिछियों की आवाज।
छेंकना / छ्यांकना – राह रोकना।
छांयरी / छुयारी – छाया।
छिनारौ – व्यभिचार।
छिनारिन – व्यभिचारिणी।
छुटिया / छूटा – काँच का कण्ठ–भूषण।
छैयाँ – छाया।
छैला – सजा हुआ जवान।
छोबा – छेड़खानी।

ज

जबर – मोटा / शक्तिशाली।
जती – तार खींचने का औजार।
जबरई – जबरदस्ती।
जाना जनना – पैदा करना।
जाँ – जहाँ।
जामिन – यामिनी का अपभ्रंश / रात।
जाँगे – जँघा।

जाँगा – जगह।
जिदना – जिस दिन।
जियन/ज्यौरिया – जीवन सूत्र।
जीरा – दिलमन एक मसाला।
जुड़ाना – शान्ति पाना।
जूजना – जूझना/लड़ना।
जेलना – जुताई का एक प्रकार ।
जोरा – रस्सी/जोड़ा/युग।
जोबन/जुबन – जवानी/स्तन।
जौलों – जब तक।
जौआँ – कहू आदि के छोटे फल।

झ

झक मारना – विवश होना।
झमँ – मूर्छा
झाड़े जाना – पखाना फिरना।
झाँम देना – भय दिखाना।
झिँकना – खिँचना।
झिन्ना – झरना/पतला।
झींकना – खींचना।
झूमर – छत की सजावट के लिए लटकाने की वस्तु

ट

टटोंना – टटोलना।
टन्ना जाना – बच्चों के जोर से रूदन में आवाज का रूक जाना।
टांको – दाग।
टिकली – स्त्रियों के भाल का काँच का गोल भूषण।
टिक्का – याद।
टिया – अवधि।
टोंका/ट्वाका – शैतान लड़का।
टुइंयाँ – तोता।
टेंकना – पकड़ना।
टैया – बड़ी कौड़ी।
टोरना – तोड़ना।
टोंने टुनई – पेड़ का अग्र भाग।

ठ

ठकुर सुहाती – मुँह देखी।

ठट्टा – हँसी मजाक।
ठठरी – मुर्दा ले जाने की काष्ठ शिविका।
ठबेरना – जबरन देना/गले बांधना।
ठांका – बन्दूक की आवाज।
ठँसना – डाँटना।
ठोकना – पीटना।
ठोड़ी – ढुड्ढी, हनु।

ड

डटा – अड़ा/सजा हुआ।
डटैयाँ लगाना – छिपकर देखना।
डबला – छोटा घड़ा।
डरैया – डाल।
डारिया – मिट्टी का तीन–चार फुट ऊँचा जल पात्र।
डाँग – घना जंगल।
डिठूला – नजर बचाने के लिए भाल पर लगाया गया काजल का निशान
डीठ – दृष्टि।
डील – शरीर का ढाँचा।
डेरौ – वाम, प्रतिकूल।
डोला – एक प्रकार की पालकी जिस पर पर्दा पड़ा होता है।
डण्डौत बिलैयां – खुशामदें।

ढ

ढड़कना – ढुलकना।
ढारें – कर्ण भूषण।
ढ्वारा – ढोर का बनाफरी रूप/पशु/मूर्ख/कण।
ढिंग – किनारी/गोबर से प्रागण लीपते समय श्वेत या पीली मिट्टी की किनारी बनाना धोती की किनारी।
ढिरिया – सूत कातने का एक काष्ठ यन्त्र।
ढूँकना – झाँकना
ढोलक/ढुलकिया – वाद्य विशेष।
ढोंग – दंभ।
ढोर – पशु/गंवार।

त

तइ – वहीं
तइया – जलेबी ढालने की कड़ाही।
तकना – देखना।

तखरी – तराजू।
तनक – थोड़ा।
तरवा – पद तल।
तनाजा – दुश्मनी।
तरैंया भरना – रूँआसे होना।
तसला – गारा देने का लौह पात्र।
तसीली – तहसील।
तँबुआ – तम्बू/वितान।
ताँ – तहाँ।
ताकना – देखना।
तारे – ताले।
तारी – ध्यान।
ताँसे – अड़ब्बी वाद्य विशेष।
ताली/तलैया – लघु तड़ाग।
तिजारी – तीसरे दिन आने वाला ज्वर।
तूदा – सीमा विभाजक पत्थर या मिट्टी का चिन्ह।
तैइँ – तू ही।
तौर/त्वार – तेरा।
त्योरस – गत या आगामी तीसरी वर्ष।

थ

थापना – स्थापित करना।
थिति – परिस्थिति।
थुनी थुमियाँ – लकड़ी का स्तम्भ।
थोंद – तोंद।
थुन्दवारौ – तुन्दिल।

द

दई,दईया – दधि/ईश्वर/विधाता।
दचका, दच्चा – धक्का।
ददोरा – मच्छर काटने का चिन्ह।
दबकी – गले में लटकाने योग्य सुराही।
दर्रा – मारे जाना/बेरोक टोक जाना।
दरेरना – ढकेलना।
दसकत – हस्ताक्षर।
दहड़ियाँ – दही जमाने का पात्र।
दानों – दैत्य।

दाँयने बायें – इधर –उधर।
दालान – गैलरी/खुला पक्का कमरा।
दिखैना – दर्शनीय/प्रदर्शन।
दिखनोंस – देखने का इच्छा।
दुआभाँती – भेदभाव।
दुआरी – दुहरी/मोटी देह।
दुका/द्वाका – छिपा।
दुगई – मकान्न के आगे का छपरा।
दुता – चुगुलखोर।
दुपर – दोपहरी।
दुबैया – दुहने वाला।
दूद – दूध
दूनर – दुहरा/दो तह में।
दूबरे – दुर्बल।
देई – देवता/देवी–देवता।
दोक – लगभग दो।
दोना – दुहना।
दोंना – द्रोण/पत्तों का पात्र।
दौंनैंया – द्रोण/पत्तों का पात्र
दोला – द्वितीय श्रेणी में।
दौरी – दुहरी।

ध

धन/धनैंयाँ – स्त्री/धनुष।
धाई – दौड़ी/दुहाई
धिरकाल – धिक्कार।
धुन्धकना – जलना/भुनना

न

नजीक – पास/नजदीक।
नतैत – नातेदार/सम्बन्धी।
नदारौ – निर्वाह।
नवेंनी – नम्र/लल्जाशील।
नाँगा – नंगा/धनहीन।
नाँद – पीतल का जल पात्र/टब।
नाँय की माँय – इधर की उधर।

निचोना – निचोड़ना।
निउरना – झुकना।
निकासना – झुकना।
निधा – निगाह/दृष्टि।
निगना – चलना।
निठई,निठुअई – बिल्कुल ही।
निनुरना – सुलझना।
निनोरना – सुलझाना।
निबाना – निर्वाह करना।
निबल – निर्बल/कमजोर।
निरावना – अपनी सुन्दर वस्तु का प्रदर्शन ।
निरोंना – नमूने की वस्तु।
नियारे – अलग।
नीरें – समीप।
नींदना – उगी हुई फसल में से घास निकालना।
नेंग – दस्तूर/विवाहादि संस्कारों में दिया जाने वाला उपहार।
नों – तक/लों/नाखून।
नोंनों – अच्छा भला।
नेनूं – नवनीत/मक्खन।

प

पइया – चक्र/पैर/गाड़ी आदि का चक्का ।
पउआ – पाव–सेर का बाँट/एक की चौथाई संख्या का पहाड़ा
पचमेर – पाँच प्रकार की मिठाई।
पटा फेरना – बरबादी/विनाश करना/खेत में लकड़ी का पाटा फेंरना
पठवा – नदीं किनारे की प्रस्तर भूमि।
पतभाँत – लल्जा/लाज/मान/इज्जत।
पतयाना – विश्वास करना।
पतरी – पत्तल/दुर्बल।
पतरौ – पतला।
पनइयाँ – पन्हैयाँ/जूतियाँ।
पनघटौ – अपमान।
पपीरा – चातक/सीटी।
पबारना – उभेरना/बलात् किसी वस्तु को देना।
परना – लेटना, पड़ना
परवो करना – लेटा करना।

परपच – छल।
परछा – दही बिलोड़ने की मटकी।
परचना – सुलगना।
परवायरे – एक ओर/अतिरिक्त।
परवाई/परवारी/परवाही– कुश गडढ़ा खोदने का लोहे का हथियार।
परसना, छूना – परोसना।
पराई उरिया सेना – दूसरों के सहारे रहना।
पराव – दूसरे का।
परलै – प्रलय।
पाखो – पक्के गृह की चौड़ाई की दीवाल।
पारूआ – पहरेदार।
परैला – गर्रा बैल।
पारौ – घड़े को ढंकने का मिट्टी का पात्र/पहरा देना।
पायक – सेवक।
पाऔ – खँभा।
पाये – पाऔ का बहुवचन/खंभे।
पिछौरी – चादर।
पिड़ी – रस्सियों से बिनी चौकी।
पियराना – पीला पड़ना।
पीतन पड़ना – कठिनाई होना।
पीराई – पीलापन।
पुरवाना – भरवाना।
पुरेती – पुरोहिती।
पुसाना – पसन्द आना।
पुतरिया – गुड़िया।
पेट खौ घूटे नबना – स्वजनों का पक्ष लेना।
पेंड़े परना – पीछे पड़ना।
पेरना – परेशान करना/कष्ट देना।
पेंनी– तेज।
पैल – प्रथम।
पोथन्ना – ग्रन्थ।
पौना – पुहना/गूंथना।
पोंचाना – चतुश्शाल/भवन का प्रवेश गृह/निवास स्थान का प्रवेश गृह।
पँछी – पक्षी।
पुँगरिया – पोली नली/नाक का भूषण।

फ

फच्चा – पिछडा।
फना – धोती को उठाकर किसी वस्तु के रखने योग्य स्थिति में करना।
फराकत – निवृत्त
फरिया – ओढ़नी/लड़कियों के ओढ़ने का वस्त्र।
फरकती – हिसाब चुकता करना।
फादिल – अतिरिक्त।
फीचना – धोना।
फुनगुनियाँ – फुन्सी।
फुलवा – फूल

ब

बओ – बोया–बहा।
बबाई – बोने का काम।
बउ – वधू/पितामही/आजी।
बउत जाना – बोते जाना/बहते जाना।
बखरी – आँगन/सदन/मकान।
बकौटो – बुक्का/एक हाँथ की अंजलि भर।
बघेला – बाघ/सिंह/एक जाति क्षत्रिय।
बखेड़ा – झगड़ा।
बड़के – बढ़ कर।
बतकाव – बातचीत।
बनकें – बनइकें/बन–बन के वर्णरूपेण।
बनता – उन्नति वदाव।
बनक/बन्न – रचना प्रकार।
बन्दवारौ/बंधवारौ – गठीला।
बमकना – कूद पड़ना।
बरयानी – बिगड़ी हुई।
बरीना – स्वप्न देखना।
बरत – जलती हुई।
बरकी – बची।
बरकना – बचना
बरा – उड़द जिसे दही या मट्ठे में भिगोकर खाते हैं
बरोठा – रसोई।
बसना – रहना।

बसीकत – बस्ती।
बहू – वधू/पुत्र या अनुजादि की स्त्री।
बाबर – लकड़ी की वस्तु के छिद्र भरने के लिए लकड़ी के टुकड़े
बावरौ – पागल।
बाँदना – बाँधना।
बारौ – बच्चा।
बार – बाहर/देर।
बाँय – बाँह।
बाँको – सुन्दर।
बिआरौ – बेड़ा/झाँकरों से बनाया गया घेरा।
बिआना – पैदा हुआ।
बिकाउ – बिकने के लिए प्रस्तुत।
बिगरैला – बिगड़ा हुआ।
बिदना/बिधना – फँसना/ईश्वर।
बिदैना/बिदोना – बाँधना फंसाना।
विधगत – भाग्य की बात।
बिदरदिन – वेदर्द/ठोर स्त्री।
बिंदिया – भाल भूषण।
बित्वारी – बिनती।
बिन्नू – लड़की/बेटी/ननद/बहिन।
बिबूचन – अड़चन/उलझन।
बिलोरा – परेशानी/मचाव/मथना।
बिरछा – पेड़।
बिसाना – खरीदना।
बीदना/बीधना – फंसाना।
बीरन – भाई/बीर/सुन्दरी।
बुकरिया – बकरी।
बुजना – बुझना/भरना।
बुधे – फँसे।
बूझना – पूँछना।
बेजारी – बीमारी।
बेवारी – व्यवहारी/अन्य विरादरी के।
बेला – बड़ा कटोरा/पृथ्वीराज की लड़की।
बेराँ – समय
बेबाँड़ाँ – अव्यवस्थित।

बेंड़ी – विचित्र।
बैया – ननद या दादी
बोट – गंगाजली।
बंटाढार – विनाश।
व्यान – पश/प्रसव।
व्याव – विवाह।

भ

भकुरना – नाराज होना, रूठना।
भखन – भक्षण।
भरन – गर्व भरने का ढंग।
भरमना – भ्रम/गर्व।
भाका – भाषा।
भाव खेलना – देवता सिर पर आना।
भँजाना – दांव निकालना/बड़े सिक्के के बदले में छोटे सिक्के लेना।
भियाने – सबेरे।
भीत – दीवाल।
भुमानी – देवी/भवानी।
भुनसारौ – सूर्यादय के पूर्व की बेला।
भेंट भलाई – मुलाकात।
भोर – सवेरा।
भोत – बहुत।

म

महना – मास।
मइकों – उसी ओर।
मइँया – में।
मजा मारना – मौज करना।
मंजयाना – घूर लेना/मध्य के पार करना।
मतारी – माता।
मथेलना – दबाना/मसलना/कुचलना।
मनचाई – इच्छित।
मसाकें – कठिनाई।
मसीली – माँसल।
महूमा – मोरचा।
माड़े – मैदा की पतीली रोटियाँ।
माँछी – मक्खी।

माँजना – साफ करना।
माँड़ – पके चावलों का पानी।
माँदू – मत्त।
मानस – मनुष्य।
माफक – सामान्य/अनुकूल।
माल – छत की लकड़ी/अच्छे भोजन/धन।
मिठयाकें – मधुरता के साथ।
मिठबोला – मधुर भाषी।
मिन्त – मित्र।
मिलकियत – जायदाद।
मींचना – आँख बन्द करना।
मिहिरिया – स्त्री।
मीरा – प्रथम/अगुआ।
मुतकौ – बहुत/काफी।
मूँड – सिर।
मेंनत – मेहनत।
मेर – मैत्री।
मेली – दोस्त/मित्र।
मेलना – फेंकना।
मोना – मोहित होना/घी तेल या पानी के साथ मलना।
मोरना – मुरकना/मोड़ना।
मोख – मोक्ष/बोने के बाद खेत के दोनों सिरों पर दो–दो कूँड़ डालना
मौखाद – मुँह बानी।

य

याक – एक
याकों – इसे।
यार – दोस्त।

र

रईत/रउतई/रउती – रहता है/रहती है।
रकत – रक्त/खून।
रंगीचें – रेखायें।
रजउ – राजपुत्री/क्षत्रिय/पुत्री/प्रेयसी/नायिका।
रड़ना – रट।
रन्थभौंर – उपद्रव/मारकाट।
रनबन का होना – बरबाद होना।

रबार/रबा – स्वर्ण के सरसों जैसे दाने।
रब्बी – ताँसे/वाद्य विशेष/गेहूँ की फसल।
रस – प्रेम/प्रीति/रस/आनंद।
राई नौंन उतारना – नजर उतारना।
रात – रात्रि।
राना – रहना।
राय – राह सम्मति
राई भरौ – शिशु।
रिसाना – नाराज होना/भकुरना।
रीतौ – खाली।
रूँदता – खूँदना, कुचलना, घेरना
रूलना – बुरी तरह तोड़ना
रैजा – चोली/कचुकी/प्रजा।
रोरा – ईटों के टुकड़े।
रोताई – शान
रंज – दुःख/बीमारी।

ल

लच्छन – गुण, दोष
लचर – लचर होना– कोमलता के कारण नरम।
लगवारे – पीछे लगने वाले, उकसाने वाले।
लटी – बुरी
लफाड़े लेना – तेजी से आगे बहना।
लरकाइयाँ – लड़कपन।
लरैयाँ – लड़ने को उद्यत।
लला – बेटा/देवर।
ललाना – तरसना, इच्छुक होना।
ललौंना – बनाफरी बोली मे लड़का।
लाग – भोजन का सामान/सीधा।
लाक/लाख – लायक योग्य।
लानें – लिए।
लिबौआ – वधू या कन्या को लेने के लिए आने वाले व्यक्ति।
लीलना – निगलना।
लुआना – ले जाना।
लुकना – छिपना।
लुरकी – लटकी।

लुहरी/लुहुरी – छोटे भाई की स्त्री।
ल्वा जाना – ले जाना
ल्वाटा – बानाफरी बोली में लाटा।

व

वारौ – उवारा/उआरौ– गा/सुविधा लाभ का/सुभीते का।

स

सइये – सहिये।
सई – सही।
सकरी – संकीर्ण।
सकात – डर जाना।
सटना – पटना/निर्वाह होना।
सठयाना – बुद्धि बिगड़ना।
सनकिया – प्याली।
सनाका – सन्नाटा।
सपील – गृह की लम्बाई की दीवाल।
सबरौ – सब
सपोले – सपेहुआ/साँप के बच्चे।
सबरत्ता – सरी रात।
साक – गवाही।
साका – यश।
समरकें – संभल कर।
ससरें – ससुराल में।
सरली – मुरली।
साजौ – अच्छा।
सातर – तेज/ पक्का।
सादू – साधू।
सानी – अनाज भूसे आदि को भिगोकर बनाया गया पशु खाद्य।
सांस – दरार।
सांसऊ – सचमुच।
संदवा देना – चुनवा देना।
सिन्नी – मिठाई।
सिट्टाचारी – शिष्टाचार/खुशामद।
सिंयन – सिलाई।
सिरें – श्रेष्ठ।
सिलबिल्ला – वेशऊर/अनजान।

सिराकें – ठण्डा करके।
सीरे – ठण्डे।
सीके – सीखे, शिक्षा ली।
सीके – दूध–घी के पात्र रखने के लिए रस्सी या तार के बने लटकन।
सींतन – सिलाई करने में।
सुगम – सरल।
सुक – सुख।
सुन्दरी – सुन्दर/सुधारी गई।
सुगरी – सुधरी/शुभ घाड़ी।
सुगर – चतुर।
सुगरा – चतुर।
लुघर – चतुर।
सुफलई – चमक–दमक।
सूरत – होश/स्मृति।
सुस्ते – फुरसत में।
सूज – सुई।
सूजना – सूझना/दिखाई देना, शरीर मे वरम आना।
सोकें – पाल पोशकर।
सैलानी – घुमक्कड़।
सोंज – साझा।
सोस – शोच
सोक – शौक
संकल्प – दान की प्रतिज्ञा।
स्यात – कदाचित् संस्कृत का तत्सम रूप।
स्वासा – साँस।
स्वाहा – सर्वनाश।

ह

हरजाई – दुष्ट स्त्री।
हड़रा – हड्डी।
हनके – जोर से।
हनना – मारना/शिथिल होना।
हमाए – हमारे।
हरबेरी – प्रत्येक बार
हरवारे – किसान
हरयाना – हरा–भरा होना।

हलकी	–	छोटी / लुहरी / अनुज्ञा।
हाँते	–	हाथ के चिन्ह जो मंडप पूजने के समय विवाह में लगाये जाते हैं।
हालई	–	अभी–अभी।
हाल दिनन	–	आज कल।
हिरकना	–	पास आना।
हिराना	–	खो जाना।
हिलाना	–	धँसाना।
हिलोर	–	तरंग।
हुनगारू	–	बाढ़ पर।
होनी	–	भवितव्य।
हौल	–	होश।

परिशिष्ट – ब

बुन्देली भाषा के कुछ महत्त्वपूर्ण विरोधाभाषी शब्दों को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया जा रहा है –

अंगीत	–	घर के आगे वाला भाग,	पछीत	–	घर के पीछे वाला भाग
अंगीते	–	घर के आगे,	पछीते	–	घर के पीछे
अग्गू	–	आगे	पिच्छू	–	पीछे
अँगारे	–	आगे	पछाड़े	–	पीछे
अंदयारें	–	अंधेरे में	उजयारें	–	प्रकाश में
अपुन	–	हम	तपुन	–	तुम
अबेर	–	विलम्ब	सबेर	–	जल्दी
अजा	–	दादा	आजी	–	दादी
आँवन	–	आना	जाँवन	–	जाना
आन	–	आना	जान	–	जाना
आबा	–	आई	गई	–	जाना
आबौ	–	आना	जैबौ	–	जन्म–मरण
अंदयाई	–	सुबह	संजावेरा	–	संध्या
अबाई	–	आगमन	जवाई	–	प्रस्थान
अरोंनों–		नमक विहीन	रौंनौ	–	नमक युक्त
अगरी	–	अधिक होना	कमती	–	कम होना
अतरे	–	दूसरे	आंतरे	–	अंतर से दूसरा
आँसबौ	–	अखरना	रुचबो	–	अच्छा
आँये	–	आने से	गये	–	जाने से
असुद्य	–	अशुद्ध	सुद्य	–	शुद्ध पवित्र
असल	–	वास्तविक	नकल	–	बनावटी
अनहोंनी	–	कल्पनातीत	होनी	–	घटना–नियति
असेराक	–	आधा सेर	सेरक	–	सेर भर
अतपई	–	दो छटाँक आधा पाव	पउवा	–	पाव भर
ओड़	–	सिर	गोड़	–	पैर
आई	–	आ चुकी है	गई	–	जा चुकी है
ओंदौ	–	उलटा	सीदौ	–	सीधा
अक्तां	–	पहले से	पिच्छां	–	बाद में
आरौं	–	दीवाल में सामान का स्थान	तक्का	–	दीवाल मे छेदनुमा स्थान

अँगुरयावौ	–	उँगली से संकेत	बताबौ	–	बतलाना
अटकाबौ	–	धीरे से किवाड़ लगाना	बजड़बौ	–	जोर से किवाड़ लगाना
आसरौ	–	आश्रय	बेआसरें	–	आश्रयहीन
ओदौ	–	गीला	सूकौ	–	सूखा
इनें	–	इनको	उनें	–	उनको
इतै	–	यहाँ	उतै	–	वहाँ
इताँय	–	इधर	उताँय	–	उधर
इत्तान	–	इतना	उत्तान	–	उतना
इकारौ	–	दुबला	दुहरौ	–	तन्दुरूस्त
ई	–	यह	ऊ	–	उस
ईहाँ	–	इसको	ऊहाँ	–	उसको
ईसें	–	इससे	ऊसें	–	उसको
इतराजी	–	असहमति	राजी	–	सहमति
उठवौ	–	उठना	बैठवौ	–	बैठना
उड़ौना	–	ओढ़ने के वस्त्र	बिछौना	–	बिछावना
उलटी	–	झूठी	सूदी	–	सही
उट्टी	–	बोलचाल बंद होना	मेर	–	दास्ती
ऊँचौ	–	श्रेष्ठ	नेंचौ	–	बुरा
ऐंड़	–	टेढ़े	बेंड	–	टाप्टे
कहैया	–	कहने वाला	सुनैया	–	सुनने वाला
करए	–	कडुवे	गुरीरे	–	मीठे
कर्रे कें	–	पूरी ताकत लगाकर	हरां कें	–	कम ताकत से
बतावौ	–	बतलाना	जतावौ	–	हावभाव से
कुल्ला	–	पानी से मुँह की सफाई	मुखारी	–	दांत–जीभ साफ करना
कूंदा	–	कूदना	फांदी	–	लांघना
कानों	–	एक आँख फूटी हो	अँदरा	–	दोनों आँखें फूटी हों
कलेवा	–	नाश्ता	व्यारी	–	रात्रि का भोजन
कन्नारी	–	खूब काम करने वाली	अलालिन	–	आलसी प्रवृत्ति वाली
कड़वो	–	बाहर निकलना	पिड़वौ	–	भीतर जाना
कूतखांड	–	ज्ञान व अनुभव	अटकर पेंड़ौ	–	अटकल के बल पर
कसतौ	–	कस रहा हो	ढिल्लौ	–	ढीला ढाला
कमइया	–	धन अर्जित करने वाला	खाऊउड़ाऊ	–	धन को बर्बाद करने वाला
कुकरा	–	मुर्गा	कूकर	–	कुत्ता
कमती	–	कम होना	जास्ती	–	अधिक होना
करया	–	कमर	करयाई	–	कमर के पीछे का भाग

काँप	–	छाता की	तिल्ली	–	साइकिल के पहिया की
कटसिर्री	–	अर्द्ध पागल	कटान	–	झक्की
खरी–खाना–		पीना	सीरी	–	खाने पीने के सम्बन्ध होना
खाँन	–	खाना	पिंयन	–	पीना
खट्टी	–	बुरी	मीठी	–	अच्छी
खिरकी	–	खिड़कियाँ	किवारे	–	दरवाजे
खट्टो	–	खट्टे स्वाद वाला	मीठो	–	मीठे स्वाद वाला
खिरविर्रो	–	जिसके बीच जगह हो	घनो	–	बीच में जगह न हो
खिर्रबिर्र	–	अव्यवस्थित	संजोबौ	–	व्यवस्थित करना
खरी	–	सच्ची	खोटी	–	झूँठी
खरा	–	शुद्ध	खोटा	–	दागदार
खवावौ	–	खिलाना	प्याबौ	–	पिलाना
खैबौ	–	खाना	पीबौ	–	पीना
खरा	–	पुरुष	खरी	–	स्त्री
खेली	–	खेल को खेलने वाला	खाँई	–	कई बार खेलने से अनुभवी
खस्सी	–	मर्दानगी	खसुवा	–	नपुंसक
खावौ	–	नपट करना	सैवौ	–	पालन पोषण करना
खुंसयाबौ	–	गुस्सा आना	पुटयावौ	–	मनाना
खिसयांट	–	गुस्साना	मनहार	–	मनाना
खलाई	–	नीची जगह	ऊँचाई	–	ऊँची जगह
खटांद	–	खट्टे की गंध	सड़ांद	–	सड़ जाने की गंध
खटास	–	खट्टापन	मिठास	–	मीठापन
खपबौ	–	परिश्रम करना	चुराबौ	–	कामचोरी
खपन	–	दलदलनुमा कीचड़	झूरौ	–	सूखा
खता	–	फोड़ा	खतिया	–	फुंसी
गतकौ	–	मुक्का	धौल	–	थप्पड़
गत	–	हालत	गती	–	आचरण
गमयाऊ	–	गाँव की	शहरू	–	शहर की
गँमइयाँ	–	गाँव का	गुपत	–	जगजाहर
गोली	–	दवा की छोटी गोलियाँ	गट्टा	–	बड़ी गोलियाँ
गुलगुलाबौ	–	हँसाना	रूआबौ	–	रूलाना
गरेंट	–	गले तक भरी	अद्भरी	–	आधी भरी
गरओ	–	वजनीय	हरओ	–	कम वजन का
गैरौ	–	गहरा	ऊथरौ	–	उथला
गोड	–	पैर	मूंड	–	सिर

गुर	–	शिक्षा	गुरयाई	–	मिठाई
स्थल	–	देह	छाती	–	सीना
गमरोंई	–	गंवारपन	महाजनी	–	सुसंस्कृत
घर	–	कमरा	बखरी	–	पूर्ण मकान
घरौट	–	घर के सम्बन्ध	परौस	–	पड़ोस
घरी	–	घड़ी	घंटा	–	ढाई घरी का एक घंटा
घूंसा	–	मुट्ठी बाँध	ठूंसा	–	मुट्ठी की अंगुलियों से मारना
चनकट	–	थप्पड़	झापड़ा	–	तमाचा
चिरइ	–	चिड़िया	चिरवा	–	चिड़ा
चित्त	–	पीठ के बल होना	फद्द	–	पेट के बल होना
चीर	–	चीरना	फार	–	फाड़ना
छिनार	–	कई पुरुषों से सम्बन्ध	पतिव्रता	–	पति परायण पत्नी
छबला	–	बड़ा टोकरा	टुकनिया	–	टोकरी
छिमा	–	क्षमा	डंड	–	दण्ड
छूत	–	छूने योग्य	अछूत	–	अछूने योग्य
छी–छी	–	निंदा करना	वाह–वाह	–	प्रशंसा करना
जाँ	–	जहाँ	ताँ	–	तहाँ
जनीं	–	औरतें	जनें	–	पुरुष
मौड़ा	–	लड़का	मौड़ी	–	लड़की
नाती	–	लड़के का लड़का	नातिन	–	लड़के की लड़की